CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

हरिदास संस्कृत सीरीज ३४६

श्रीशङ्कराचार्य-विरचित

सौन्दर्यलहरी

अर्थात्

सौन्दर्य-सागर

(मूल, पधानुवाद एव यन्त्र-चित्रों सहित)

व्याख्याकार

पं. हरिहर प्रसाद त्रिपाठी

चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस, वाराणसी

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

हरिदास संस्कृत सीरीज
३४६
***

श्रीशङ्कराचार्य-विरचित

सौन्दर्यलहरी

अर्थात्

सौन्दर्य-सागर

(मूल, पद्यानुवाद एवं यन्त्र-चित्रों सहित)

व्याख्याकार :
पं० हरिहर प्रसाद त्रिपाठी

संपादक :
आचार्य मृत्युञ्जय त्रिपाठी

चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस
वाराणसी

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

प्रकाशक : चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस, वाराणसी
मुद्रक : चौखम्बा प्रेस, वाराणसी
संस्करण : द्वितीय, वि.सं. २०७२, सन् २०१५
मूल्य : रु. ११५.००

ISBN : 978-81-7080-167-2

© चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस
के. ३७/९९, गोपाल मन्दिर लेन
गोलघर (मैदागिन) के पास
पो.बा.नं. १००८, वाराणसी-२२१००१ (भारत)
फोन-आफिस : (०५४२) २३३३४५८
आवास : २३३४०३२ एवं २३३५०२०
Fax :0542-2333458
e-mail : cssoffice01@gmail.com
web-site : www.chowkhambasanskritseries.com

अपरञ्च प्राप्तिस्थानम्
चौखम्बा कृष्णदास अकादमी
पोस्ट बाक्स नं० १११८
के. ३७/११८, गोपाल मन्दिर लेन
निकट गोलघर (मैदागिन)
वाराणसी - २२१००१ (भारत)
फोन : २३३५०२०

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

HARIDAS SANSKRIT SERIES
346
***

SAUNDARYA LAHARI

OF

Sri Adi Shankaracharya

Text with Hindi Translation etc.

By

Pt. Harihar Prasad Tripathi

Edited by

Acharya Mrityunjaya Tripathi

CHOWKHAMBA SANSKRIT SERIES OFFICE
VARANASI

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

Publisher : Chowkhamba Sanskrit Series Office, Varanasi.
Printer : Chowkhamba Press, Varanasi.

ISBN : 81-7080-167-2

© Chowkhamba Sanskrit Series Office

K.37/99, Gopal Mandir Lane
Near Golghar (Maidagin)
Post Box No. 1008, Varanasi-221001(India)
Phone : Off. 2333458
Resi. 2334032 & 2335020
Fax : 0542-2333458
e-mail : cssoffice@satyam.net.in
web-site : www. chowkhambaseries.com

Also can be had from :
Chowkhamba Krishnadas Academy
Oriental Publishers & Distributors
P.B.No. 1118
K.37/118, Gopal Mandir Lane
Near Golghar (Maidagin)
Varanasi-221001 (India)
Phone : 2335020

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

प्राक्कथन

प्रस्तुत पुस्तक सौन्दर्यलहरी में आद्य शंकराचार्य ने शक्त्याराधन का गूढ़तम विशद वर्णन किया है। इसके अन्तर्गत उन्होंने भगवती की शोभा का नख-शिख तक सजीव चित्रांकन किया है। इसमें श्री विद्या की उपासना विधि, उसका महत्त्व, षट्चक्रों से श्रीचक्र का संबंध आदि बातें बतलायी गयी हैं। श्रीयंत्र के नव चक्रों पर नव आवरण देवता की पूजा करने का विधान होता है। श्रीयंत्र में षोडशदल पद्म को सर्वाशापरिपूरक चक्र के नाम से जाना जाता है। श्री जगज्जननी आद्याशक्ति महात्रिपुरसुन्दरी के प्रकाश से ही यह समस्त चराचर जगत् आलोकित होता रहता है। इस स्तोत्र के पूर्वार्ध एकादश श्लोकों को आनन्दलहरी तथा शेष स्तोत्र को सौन्दर्यलहरी कहा जाता है।

इस स्तोत्र के एकादश श्लोक में श्रीचक्र का वर्णन किया गया है। श्रीचक्र की आराधना का अत्यधिक महत्त्व बतलाया गया है। श्रीचक्र रेखा गणित के प्रमाण से देवी-शक्तियों का एक प्रतीक स्वरूप यन्त्र निर्मित किया गया है। भौतिक यंत्रों के समान उससे भी आध्यात्मिक शक्ति प्राप्त होती है। इस चक्र की आराध्य देवता श्री ललिता त्रिपुरसुन्दरी ही मानी जाती हैं। शास्त्रों में भगवती त्रिपुरसुन्दरी के स्वरूप का वर्णन निम्न प्रकार से पाया जाता है—

उद्यद्भानुसहस्रकान्तिमरुणक्षौमां शिरोमालिकाम्
रक्तालिप्तपयोधराम् जपवटीं विद्यामभीतिं वरम्।
हस्ताब्जैर्दधतीं त्रिनेत्रविलसद् वक्त्रारविन्दश्रियं
देवीं बद्धहिमांशुरत्नमुकुटां वन्दे सुमन्दस्मिताम्॥

उपासना के प्राय: दो भेद होते हैं— एक बहि: और दूसरा अन्तरंग। कुंडलिनी शक्ति के जागृतावस्था में आने तक ही बहि:पूजा सीमित होती है। तदनन्तर अंतरंग साधना प्रारंभ हो जाती है। श्रीचक्र पर श्रीविद्या की बाह्य उपासना की जाती है। पुन: अंतरंग उपासना के निमित्त अपने शरीर में ही श्रीचक्र की कल्पना करनी पड़ती है।

कुंडलिनी के जागृत हो जाने पर सुषुम्ना नाड़ी द्वारा उसके उतार-चढ़ाव का क्रम आरंभ हो जाता है। अन्तर्भावना से संयुक्त होकर श्रीचक्र पर बाह्य उपासना करने के फलस्वरूप शक्ति-जागरण में सहायता मिलती है। श्रीचक्र का पूजन

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

समस्त उपासनाओं का स्थूल अंग है तथा शक्ति जागरण के अनंतर षट्चक्र वेधन की क्रियाओं का योग परक साधन— ध्यान, धारण, समाधि आदि के अतंरंग साधनों से परिपूर्ण उसका सूक्ष्म अंग माना जाता है। स्थूल के द्वारा सूक्ष्म और सूक्ष्म के द्वारा कारण तक पहुँचने का मार्ग प्रशस्त होता है। श्रीविद्या की उपासना-विधि का ज्ञान यतियों में कुंडलिनी शक्ति को जागृत करने के लिए गुरु की शक्तिपात दीक्षा द्वारा ही सम्भव होता है। प्राचीन ऋषियों ने भी श्रीचक्र के पूजन के परिणाम स्वरूप कुंडलिनी शक्ति को मूलाधार से सहस्रार में पहुँचाकर ही योग की सिद्धि प्राप्त की थी।

इस प्रकार की लोकोपयोगी दुर्लभ्य पुस्तकों के प्रकाशन में चौखम्बा कृष्णदास अकादमी, वाराणसी के प्रकाशक श्री टोडरदास जी गुप्त अत्यन्त अभिरुचि रखते हैं अतएव वे साधुवाद के पात्र हैं।

— हरिहर प्रसाद त्रिपाठी
सी के० ५८/३५,
रेशम कटरा, वाराणसी

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विषयानुक्रमणी

पद्य सं०	विषय	यन्त्र-लाभ	पृष्ठ सं०
१.	शिव-शक्ति आराधना	विजय-प्राप्ति	१
२.	परमात्मा की असीम शक्ति	प्रकृति पर विजय	४
३.	मुक्ति-मुक्तिदात्री	रमनोदय	८
४.	वर-अभिनय	दरिद्रता एवं रोगों से छुटकारा	१०
५.	मोहिनी रूप	सर्वहृदयग्रह्यता	१२.
६.	कामदेव की क्षमता	सन्तान-लाभ	१४
७.	भगवती का ध्यान	शत्रु का पराभव	१५
८.	भगवती का आवास-स्थल	कार्य की सिद्धि	१७
९.	षट्चक्र-भेदन की अन्रेय भूमिका	पंचतत्त्वों में श्रेष्ठता	१८
१०.	षट्चक्रभेदन की अन्वय तथा प्रत्यावृत्तिभूमिका	वीर्यवर्धन	२१
११.	श्रीचक्र	सम्पन्नता	२३
१२.	भगवती का अकल्पित सौन्दर्य	कवित्वशक्ति	२५
१३.	कायाकल्प	नारी-आकर्षण	२६
१४.	तत्त्व-रश्मियाँ	दुष्टकाल एवं महामारी	२७
१५.	सात्त्विक वाक्सिद्धि	धर्म तथा विज्ञान	२९
१६.	राजसिक वाक्सिद्धि	धर्म तथा विज्ञान	३०
१७.	भावयुक्त मिश्रित वाक्सिद्धि	कला और विज्ञान	३१
१८.	मधुमती भूमिका	सम्मोहन-शक्ति	३२
१९.	कामकला बीज का ध्यान	मोहनी-शक्ति	३३
२०.	शक्तिपात की सिद्धि	विष का निवारण	३५
२१.	चक्रों एवं सहस्रार का सविस्तृत विवरण	शक्ति	३६
२२.	'भवानित्वं' का रगनोदय	अभिलाषा पूर्ति	३७
२३.	अर्धनारीश्वर का ध्यान	ऋण एवं संकट से मुक्ति	३९
२४.	ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, ईश्वर एवं सदाशिव	विपत्तियों का निवारण	४०
२५.	ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, ईश्वर एवं सदाशिव	व्यापार में वृद्धि	४२

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पद्य सं०	विषय	यन्त्र-लाभ	पृष्ठ सं०
२६.	ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, ईश्वर एवं सदाशिव	शत्रुनाश	४३
२७.	रमनभोग का लक्षण	आत्मबोध एवं ईश्वरदर्शन	४४
२८.	भगवती के सतीत्व की महिमा	मृत्यु से त्राण	४६
२९.	समस्त देवों द्वारा भगवती को साष्टांग प्रणाम	शत्रु का मित्र में परिर्वतन	४७
३०.	ब्रह्मात्मैवच	अधिदैविक शक्ति	४८
३१.	चौंसठ तंत्रों में भगवती तंत्र की स्वच्छन्दता	सम्मोहन-शक्ति एवं अभ्युत्थान	५०
३२.	ह्रादि लोपामुद्रा का मन्त्र	विज्ञान एवं व्यवसाय सफलता	५३
३३.	कादि मूलविद्या का मन्त्र	धनवर्धन	५५
३४.	शिव-शक्ति का अंगी और अंग में सम्बन्ध	प्रज्ञा वृद्धि	५७
३५.	सम्पूर्ण विश्वशक्ति का परिणाम	रोग से छुटकारा	५८
३६.	आज्ञा चक्र	विपत्ति-नाश	६०
३७.	विशुद्ध चक्र	अशुभ फलों का निवारण	६२
३८.	हत्प्रदेश में विकसित संवित् कमल	आपत्तियों का निवारण	६३
३९.	स्वाधिष्ठान चक्र	दुःस्पप्न का निवारण	६५
४०.	मणिपूर चक्र	स्वप्नावस्था में शुभदर्शन	६६
४१.	मूलाधार	उदर रोग की शान्ति	६७
४२.	मुकुट का ध्यान	जलोदर रोग का दमन	६९
४३.	केशों का ध्यान	मोहन-शक्ति एवं विजय-लाभ	७०
४४.	,,	रोग से छुटकारा	७१
४५.	अलकों का ध्यान	बोलने की कला, वाग्वैभव	७२
४६.	ललाट का ध्यान	पति सम्मिलन एवं संतानोत्पत्ति	७३
४७.	भृकुटि का ध्यान	आकर्षण-शक्ति	७४
४८.	तीन नेत्रों का ध्यान	राहुग्रह की शान्ति	७५
४९.	अष्टभावों से संयुक्त भगवती की दृष्टि	गुप्त धनागार का रमन	७६
५०.	तृतीय नेत्र के रक्तवर्णीय होने का हेतु	शारीरिक व्रणों का नाश	७८
५१.	भगवती की दृष्टि-विद्या रसपूरित	मोहनिद्रा का उत्पत्तिकरण	७८
५२.	भगवती के दोनों नेत्र कामदेव के बाणसदृश	अक्षि एवं कर्णरोग चिकित्सा	७९

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पद्य सं०	विषय	यन्त्र-लाभ	पृष्ठ सं०
५३.	भगवती के नेत्रों सत्त्व, रजस एवं तमस् रूपी तीन प्रकार का अंजन		८०
५४.	रमन नेत्र में तीनों नदियों की एकता	स्त्रीरोग चिकित्सा	८१
५५.	निमेषोन्मेषविहीन नेत्र	शत्रुओं का विनाश	८२
५६.	नेत्रों की प्रतिद्वन्द्वी मछलियाँ और कुमुदिनी	अवरोध निवारण	८३
५७.	भगक्ती की दयादृष्टि	सर्वोदय की प्राप्ति	८४
५८.	कनपटियों का ध्यान	मोन शक्ति, रोगमुक्ति	८५
५९.	मुख का ध्यान	आकर्षणकारी शक्ति	८६
६०.	कुंडलिनी द्वारा 'ॐ' शब्द का उच्चारण मानो अनुज्ञा-सूचक	सर्वज्ञान की उपलब्धि	८७
६१.	नासिका का ध्यान	कार्यसिद्धि	८८
६२.	ओष्ठों का ध्यान	सुख की गहरी नींद	९०
६३.	मुस्कान का ध्यान	वशीकरण, आकर्षण शक्ति	९१
६४.	निह्वा का ध्यान	वशीकरण	९२
६५.	भगवती का वात्सल्य भाव	विजय की प्राप्ति	९३
६६.	वाणी की प्रशंसा	संगीत में कुशलता	९४
६७.	चिबुक का ध्यान	दाम्पत्य प्रेम	९४
६८.	ग्रीवा का ध्यान	राजवशीकण	९५
६९.	गले का ध्यान	कार्य में सफलता	९६
७०.	चार भुजाओं का ध्यान	विजय-लाभ	९८
७१.	हाथों का ध्यान	सम्मोहन शक्ति	९९
७२.	दोनों स्तनों का ध्यान	स्तन-दुग्धवृद्धि	१००
७३.	स्तन-पान के फलस्वरूप भी गणेश और स्कंद नित्यनैष्ठिक ब्रह्मचारी	स्तन-दुग्धवृद्धि	१०१
७४.	मुक्तावलियों की माला से सुशोभित स्तन-प्रदेश	चतुर्दिक् प्रसिद्धि	१०२
७५.	स्तनों के दूध का पारावार	कात्यात्मक कुशलता	१०३
७६.	नाभि का ध्यान	आकर्षण-शक्ति एवं विजभोपलब्धि	१०५
७७.	साँपिन के समान नाभि	व्यापार-वृद्धि	१०६
७८.	नाभि-गंगा का अचल भँवर, हवन, क्रीड़ास्थली, गुफा का प्रवेश-द्वार	कार्य में सफलता	१०७

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पद्य सं०	विषय	यन्त्र-लाभ	पृष्ठ सं०
७९.	नाभि-तट के वृक्ष के समान	सम्मोहन-शक्ति	१०८
८०.	लवली वल्लि की बलियों से तीन बार आवेष्टित कटि-भाग	ऐन्द्रजालिक सामर्थ्य	१०९
८१.	नितम्ब का ध्यान	अग्नि पर नियंत्रण	११०
८२.	ऊरुयुग्म का ध्यान	जल पर नियंत्रण	१११
८३.	जाँघों का ध्यान	हाथी-घोड़ा एवं सैन्यदल पर नियंत्रण	११२
८४.	चरणों का ध्यान	ईश्वरीय शक्ति के बल पर काय-प्रदेश की शक्ति	११३
८५.	,,	भूत-प्रेतादि निवारक-शक्ति	११४
८६.	,,	अमंगलकारी विषदाओं का निवारण	११६
८७.	,,	साँपो का वश में लाना	११७
८८.	,,	पशुओं पर नियंत्रण	११८
८९.	,,	रोग से छुटकारा	११९
९०.	,,	कुल्पित कार्यों का विरोध	१२०
९१.	चरणों की गति का ध्यान	सम्पत्ति-लाभ	१२१
९२.	मञ्च (पलंग) का ध्यान	राज्याधिकार की प्राप्ति	१२२
९३.	सम्पूर्ण शरीर का ध्यान	अभिलाषा-पूर्ति	१२३
९४.	शृङ्गारदान का ध्यान	पार्थिव पदार्थ की प्राप्ति	१२४
९५.	भगवती की सपर्याअप्राप्य	व्रणों को भरने की शक्ति	१२५
९६.	,,	कलाकारिता का ज्ञान	१२६
९७.	,,	शक्ति की उपलब्धि	१२७
९८.	प्रार्थना	यौन संबंधी प्रफुल्लता	१२८
९९.	,,	शूरत्व की प्राप्ति	१२९
१००.	समर्पण	समस्त आदर्शों की प्राप्ति	१३०

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

श्रीशङ्कराचार्यविरचित

सौन्दर्यलहरी

शिवः शक्त्या युक्तो यदि भवति शक्तः प्रभवितुं
न चेदेवं देवो नः खलु कुशलः स्पन्दितुमपि ।
अतस्त्वामाराध्यां हरिहरविरिञ्च्यादिभिरपि
प्रणन्तुं स्तोतुं वा कथमकृतपुण्यः प्रभवति ।।१।।

पदान्वय— (हे भगवति !) शिवो देवः शक्त्या युक्तो भवति यदि, (तदा) प्रभवितुं शक्तः । एवं न चेत्, स्पन्दितुमपि कुशलो न खलु । अतः हरिहरविरिञ्च्यादिभिरपि आराध्यां त्वाम् अकृतपुण्यः प्रणन्तुं स्तोतुं वा कथं प्रभवति ।

श्लोकार्थ— सर्वत्र शक्ति की ही पूजा होती है। शक्ति विहीनता की अवस्था में कोई भी देवता आराधनीय नहीं माना जाता। भगवान शिव शक्ति-समन्वित होकर ही सभी के उपास्य कहे जाते हैं और इसी के फलस्वरूप वे सृष्टि-रचना में समर्थ होते हैं। यदि ऐसा न होता तो ईश्वर में स्फुरण भी न होता। अतः विष्णु, शिव एवं ब्रह्मादिक देवों की तुम आराध्या देवी को नमन तथा स्तवन करने की क्षमता किसी भी पुण्यरहित प्राणी में कैसे हो सकती है ॥१॥

व्याख्या— शिव शब्द 'हं' और शक्ति शब्द 'सः' वाच्य है। अतएव इस श्लोक के द्वारा 'हंसः' मंत्र की सिद्धि होती है जिसे पलट देने से 'सोऽहं' शब्द बन जाता है। अब यदि इस 'सोऽहं' शब्द में से 'स' एवं 'ह' वर्णों को अलग कर दिया जाय तो केवल एकमात्र 'ॐ' शब्द ही शेष बच जाता है। निर्गुण अक्षर 'ॐ' ब्रह्मवाचक, हंस जीववाचक तथा 'सोऽहं' ब्रह्मात्मैवच पद माना जाता है। 'ह' और 'स'— दोनों के सम्मिलित योग से 'हसौ' बीजमंत्र होता है जिसे प्रेतबीज भी कहा जाता है। इस बीजमंत्र में शिव और शक्ति दोनों को ही प्रलयकालीन महाप्रसुप्तावस्था में दिखलाया गया है। सभी प्राणी के प्रत्येक श्वास-प्रश्वास में 'हंसः' अथवा 'सोऽहं' का जप निरन्तर चलता रहता है। जैसे कि नीचे के श्लोक से स्पष्ट हो जाता है—

हंकारेण बहिर्याति सकारेण विशेत्पुनः ।
हंसहंसेत्यमुं मन्त्रं जीवो जपति सर्वदा ॥

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

कूर्मपुराण में कहा गया है—

शक्तिशक्तिमतोर्भेदं वदन्त्यपरमार्थतः ।
अभेदमनुपश्यन्ति योगिनस्तत्त्वचिन्तकाः ॥

यथार्थतः शिव और शक्ति दोनों एक ही हैं। उनमें किसी प्रकार का भेदाभेद नहीं है। किन्तु उपासक वासनाभेद के कारण शिव तथा शक्ति में भिन्नता की परिकल्पना करते हैं। यदि शिव शक्ति के साथ संयुक्त न हो तो वह स्फुरित नहीं हो सकता। आशय यह है कि शक्ति के साथ मिलित होने पर ही ब्रह्म में स्फुरण संभव होता है।

और भी कहा गया है—

पूर्वजन्मकृतैः पुण्यैर्ज्ञात्वेमां परदेवताम् ।
पूजयेदागमोक्तेन विधानेन समाहितः ॥

अर्थात् पूर्वजन्मार्जित पुण्यपुंज के फलस्वरूप ही मानव देवी की स्तुति करने में सक्षम हो सकता है।

कवि-सम्राट् तुलसीदास ने इसी बात की अभिव्यक्ति अपने शब्दों में यों की है—

सकल सुकृत कर बड़ फल एहू ।
सीयराम-पद सहज सनेहू ॥

(रामचरित मानस, अयोध्याकांड)

येऽपि ब्रह्मादयो देवा भवन्ति वरदायिनः ।
त्वद्रूपां शक्तिमासाद्य ते भवन्ति वरप्रदाः ।
तस्मात्त्वमेव सर्वत्र कर्मणां फलदायिनी ॥

अर्थात् विष्णु, शंकर तथा सृष्टिकर्ता ब्रह्मा भी शक्ति के अनुग्रह से ही वर प्रदान करने में समर्थ होते हैं। अतः सर्वदा शक्ति ही फलदातृ है।

इसके अतिरिक्त शक्ति के सन्दर्भ में और भी कहा गया है—

"हेतुः समस्तजगतां त्रिगुणापि दोषैर्न
ज्ञायसे हरिहरादिभिरप्यपारा ।
सर्वाश्रयाखिलमिदं जगदंशभूत-
मव्याकृता हि परमा प्रकृतिस्त्वमाद्या ॥"

(दुर्गासप्तशती, चतुर्थ अध्याय)

भावार्थ— आप समस्त जगत् की उत्पत्ति में कारण हैं। आप में सत्त्वगुण, रजोगुण और तमोगुण— ये तीनों ही गुण समाविष्ट हैं, फिर भी किसी प्रकार के दोषों से आपका संसर्ग नहीं है। भगवान् विष्णु तथा शिवशंकर

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

आदि देवता भी आपका पार नहीं पाते। आप ही सबकी आश्रयस्थली हैं। यह सम्पूर्ण जगत् आपका अंशभूत है, क्योंकि आप सबकी आदिभूत, अव्याकृता पराप्रकृति स्वरूपा हैं।

आगे और भी कहा गया है—

"चिताभास्मालेपो गरलमशनं दिक्पटधरो
जटाधारी कण्ठे भुजगपतिहारी पशुपतिः।
कपाली भूतेशो भजति जगदीशैकपदवीं
भवानि त्वत्पाणिग्रहणपरिपाटीफलमिदम्॥"

—(दुर्गासप्तशती के अन्तर्गत)

भावार्थ— हे भवानि ! जो अपने शरीरांगों में चिता-भूमि की राख लेपित किये रहते हैं, जिनका विष ही आहार है, जो नग्नावस्था में रहने वाले हैं, जो अपने मस्तक पर जटा-जूट और कंठ में नागराज वासुकि को हार-स्वरूप धारण करते हैं तथा जिनके हाथ में कपाल (भिक्षापात्र) शोभित होता रहता है, ऐसे भूतनाथ पशुपति भी जो एकमात्र 'जगदीश' की उपाधि धारण करते हैं, इसका क्या कारण है ? यह महत्त्व उन्हें कैसे मिला ? यह केवल तुम्हारे पाणिग्रहण की परम्परा का ही फल है। तुम्हारे साथ विवाह होने के परिणामस्वरूप ही उनकी इतनी महत्ता बढ़ गयी।

शक्ति को त्रिगुणात्मिका कहा गया है। उसका स्वभाव क्रियाशील होता है। इसी कारण इच्छाशक्ति, ज्ञानशक्ति और क्रियाशक्ति में भी उसकी अभिव्यक्ति होती रहती है। अतः स्फुरण केवल शक्ति में ही हो सकता है, शिव में कदापि नहीं। शिव में अहंभाव है और शक्ति में इदंभाव। शक्ति तो स्वयं ही शक्ति समन्वित होती है। अहं की एक वृत्ति का नाम ही इदंभाव है। अहं के अभाव में इदं का कोई अस्तित्व नहीं रहता। सृष्टि की अभिव्यक्ति अहं और इदं— इन दोनों के सम्मिलित प्रभाव से ही होती है। सृष्टि के रचयिता ब्रह्मा तथा संहारकर्ता शिव को माना जाता है, परन्तु यहां शिव को ही सृष्टिकर्ता दर्शाया गया है। इसलिए यहां शिव (हर) शब्द ब्रह्मावाचक है। कारण के दो भेद कहे गये हैं— एक निमित्त और दूसरा उपादान। जगत के जड़पदार्थ को उपादान तथा चैतन्य ईश्वर को निमित्त कारण मानना चाहिए किन्तु यहाँ विधाता को ही दोनों कारणों से युक्त माना गया है।

व्याकरण—

शिव— शिव सर्वमङ्गलोपेत है। सर्वमङ्गलकारी है—

(१) शिवशब्द वश कान्तौ इस धातु से उत्पन्न हुआ है। यथा—

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

हिसिधातोर्स्सिहशब्दो वशकान्तौ शिवस्स्मृतः ।
वर्णव्यत्ययतत्सिद्धौ पश्यकः कश्यपो यथा ॥

यह धातु तुदादिगण और अदादिगण में संगृहीत है। तुदादिगण में वशते: दीप्ति यह अर्थ है। कान्ति दीप्ति है। अदादिगण में वश कामना अर्थ है। इच्छा शक्ति से आश्रयण के कारण ईश्वर का शिवत्व है। (इच्छा-शक्त्याश्रयत्वात् ईश्वरस्य शिवत्म्)।

वशति प्रकाशते स्वयं प्रकाश इति,
यद्वा स्वस्मिन् प्रपञ्चं प्रकाशयतीति शिवः ।

(२) अथवा स्वप्नम् अविद्यां वाति गच्छतीति शिवः ।

हरिहरविरिञ्च्यादिभिः—

हरिः—विष्णु ।

हरः—रुद्रः ।

विरिञ्चिः— ब्रह्मा ।

हरश्च विरिञ्चिश्चादिश्च ते —हरविरिञ्च्यादयः— यहाँ द्वन्द्व समास है।

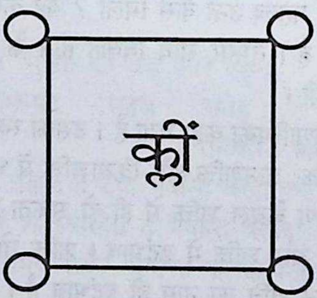

मन्त्रजप— प्रतिदिन एक हजार जप पूर्वाभिमुख बारह दिनों तक करें।

यन्त्रनिर्माणसामग्री— स्वर्णधातु ।

नैवेद्य— त्रिमधुर (गुड़, नारियल, केले का मिश्रण)।

लाभकारीफल— प्रारंभ किये गये कार्यों में सफलता ।

तनीयांसं पांसुं तव चरणपङ्केरुहभवं
विरिञ्चिः सञ्चिन्वन्विरचयति लोकानविकलम् ।
वहत्येनं शौरिः कथमपि सहस्रेण शिरसां
हरः संक्षुद्यैनं भजति भसितोद्धूलनविधिम् ॥ २॥

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पदान्वय— (हे भगवति) विरिञ्चिः तव चरणपङ्केरुहभवं तनीयांसं पांसु सञ्चिन्वन् लोकान् अविकलं विरचयति । (हे भगवति) शौरिरेनं शिरसां सहस्रेण कथमपि वहति । (हे भगवति) एनं संक्षुद्य हरः भसितोद्धूलनविधिं भजति ॥

श्लोकार्थ— तेरे चरण-कमलों से उद्भूत एक सूक्ष्म रजकण को ग्रहणकर ब्रह्मा निरन्तर भुवन-भुवनान्तरों की रचना करते रहते हैं, शेषनाग उसे— परिश्रम पूर्वक अपने सहस्र शिरों पर उठाकर रखते हैं और हर (शिव) उसकी राख बनाकर अपने अंगों पर लेपन करते हैं ।

इस श्लोक में शक्ति की असीमता दर्शायी गयी है । उस महान शक्ति के समक्ष ब्रह्मा (विरिञ्चि) शौरि (शेषनाग, लक्षणा से विष्णु) तथा हर (शिव) की शक्तियां नगण्य है । इसका कारण यह है कि वह अनन्त ब्रह्मांडों की अधीश्वरी है और ये देवगण केवल एक ही ब्रह्मांड के अधिपति होते हैं ॥२॥

शौरि— शेषशायी विष्णु की शैय्या का निर्माण करने वाला शेषनाग भी विष्णु की शक्ति का ही एक अंश है । शेषनाग समस्त पृथ्वी को अपने सहस्र शिरों पर उठाकर धारण कर रहा है । पुरुष सूक्त में कहा गया है— "सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात्"— इससे विष्णु के सहस्र शिर का होना वेदविख्यात है । विष्णु के रामावतार तथा कृष्णावतार के साथ दोनों अवतारों में लक्ष्मण और बलभद्र शेष के ही अवतार बताये गये हैं । रामावतार में लक्ष्मण को अनुज तथा कृष्णावतार में बलभद्र रूप लक्ष्मण को ज्येष्ठभ्राता माना गया है । लक्ष्मण को राम के ही अंशीभूत होने का प्रमाण महाकवि तुलसीदास ने भी दिया है—

"अंशन सहित मनुज अवतारा, लेइहौं दिनकरवंश उदारा ।"

—रामचरितमानस, बालकाण्ड ।

योगशास्त्र के प्रवर्तक महर्षि पतंजलि को भी शेष का ही एक अवतार माना जाता है, किन्तु यहां पर शेषनाग को विष्णु का ही एक नाम देकर उल्लेख किया गया है ।

शिशुमारात्मना विष्णुः सप्त लोकानधःस्थितान् ।
धत्ते शेषतया लोकान् भूरादीनूर्ध्वतस्स्थितान् ॥

योगिराज दत्तात्रेय का कथन है—

यत्पादपद्ममकरन्दकणा धरित्री
यन्मध्यवर्तिविवरं गगनं समग्रम् ।
यद्गात्रसङ्गिकिरणत्रसरेणुरेक-
स्तस्यास्तवाम्ब वपुषो मितिरीशवेद्या ॥

चरण— चरण के चार भेद कहे गये है; जैसे— शुक्लरक्तमिश्रनिर्वाणाः ।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अर्थात् सत्त्वप्रधान चरण शुक्ल, रज:प्रधान रक्त, तम: प्रधान मिश्र और गुणातीत निर्वाण है। यथा—

"शुक्लरक्तयोराज्ञाचक्रं द्विदलम्, मिश्रस्य हृत्कमलम्, निर्वाणास्य सहस्रदलं द्वादशान्तस्थम्। शुक्लरक्तयो: ब्रह्मविष्णू ध्येयौ, मिश्रे रुद्र:, निर्वाणे साक्षात्-परमानन्दनिर्भर: सदाशिवरूप: चिन्तनीय: ।"

श्रुतिशास्त्र में भी वर्णित है—

"चरणं पवित्रं विततं पुराणम्। येन पूतस्तरति दुष्कृतानि। तेन पवित्रेण शुद्धेन पूता: । अपि पाप्मानमरातिं तरेम। लोकस्य द्वारमर्चिमत्पवित्रम्। ज्योतिष्द्भ्राजमानं महस्वत्। चरणं नो लोके सुधितां ददातु ।"

महायोगी दत्तात्रेय का कहना है—

भ्रूमध्यगौ विधिहरी तव रक्तशुक्लौ
पादौ रजोऽमलगुणौ खलु सेवमानौ।
सृष्टिस्थिती वितनुतो हृदयं तृतीय-
मङ्घ्रि भजन् हरति विश्वमुदग्रमुग्र: ॥
तुर्यं तवाम्ब चरणं निरुपाधिबोधं
सान्द्रामृतं शिवपथे सततं नमामि ॥"

लोकान्— 'लोक' शब्द का आशय स्थावर-जंगम, सभी जीवों से है। सात ऊर्ध्वलोक एवं सात अधोलोक अर्थात् कुल मिलाकर चौदह लोक या भुवन माने गये हैं।

सात ऊर्ध्वलोक इस प्रकार हैं— भूलोक, भुवर्लोक, स्वर्लोक, महर्लोक, जनलोक, तपोलोक एवं सत्यलोक।

सात अधोलोक इस प्रकार हैं— अतल, वितल, सुतल, रसातल, तलातल, महातल तथा पाताल।

व्याकरण— विरिञ्चिशब्द इकारान्त:। 'विरिञ्चिश्च विरिञ्चन:' इति अमरकोषे।

शौरि:— शृणाति हिनस्ति दशतीति शौरि: सर्पराज: शेष:।

अथवा— शौरि: विष्णु:। शेषपक्षेऽपि शेष एव विष्णु:, रक्षणे विष्णोरेवाधिकारात्।

व्याख्या— वैशेषिकदर्शन और न्यायदर्शन, दोनों ही अणुवाद के अनुमोदक हैं। सांख्यदर्शन और योगदर्शन, दोनों ही कारणवाद को मानते हैं। वेदान्त का कहना है कि सृष्टि का मूल कारण ईश्वरेच्छा पर निर्भर है। किन्तु शंकराचार्य ने

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

इस श्लोक में तीनों वादों का समन्वयन करते हुए ईश्वर की इच्छाशक्ति का ही अनुमोदन किया है। उक्त श्लोक का 'पांसु' शब्द अणुवाद की ओर, 'चरणपङ्केरुह' जड़ प्रधान कारणवाद की ओर तथा 'तव' महात्रिपुरसुन्दरी (दश महाविद्याओं में एक) इच्छाशक्ति की ओर इंगित करता है।

यहाँ देवी के चरणों का उपमान कमल-पुष्पों को माना है। अर्थात् भगवती के चरणों की उपमा कमल-पुष्पों से दी गयी है। यहाँ पर इच्छाशक्ति के तमोगुणी होने के फलस्वरूप घनीभूत होने पर जड़ता में परिवर्तित होने को 'पङ्क' शब्द से उपमित किया है। जिस प्रकार कमलों की परागरूपी रज कमल से ही प्रादुर्भूत होती है उसी प्रकार यह 'पांसु-कण' भगवती के चरण-कमलों से उत्पन्न हैं। ये सभी कण परिवर्तित होकर अणुओं का रूप ले लेते हैं। वेदों में सृष्टि के क्रम का उल्लेख निम्न प्रकार से किया गया है—

यद्देवा अदः सलिले सुसंरब्धा अतिष्ठन्।
अत्रा वो नृत्यतामिव तीव्रो रेणुरजायत॥

(ऋग्वेद मंडल १० अ. ८, सूक्त ७२ एवं ऋचा ६)

हरि (विष्णु), हर (शिव) एवं ब्रह्मा (विधाता) द्वारा ब्रह्मांड की रचना करने के पश्चात् जो अनंतशक्ति शेष रह जाती है वह आणविकरूप ग्रहण करने के निमित्त मानो कुंडलों में चक्राकार घूमने लगती है तथा उसके कुंडलाकार रूपों के परिणाम स्वरूप उसकी उपमा साँप से दी गयी है।

उक्त श्लोक में 'पांसुं' तथा 'एनं' शब्द अपने एक वचन में प्रयुक्त हुए हैं। इससे प्रत्येक अणु में भगवती के चरणों की अवस्थिति का आशय भी निकेलता है जैसा कि निम्न मन्त्र से परिलक्षित हो रहा है—

"विश्वतश्चक्षुरुत विश्वतोमुखो विश्वतोबाहुः उत विश्वतस्पात्।

अर्थात् उक्त मन्त्रानुसार विश्व का प्रत्येक परमाणु अपरिमित शक्ति से भरपूर है।

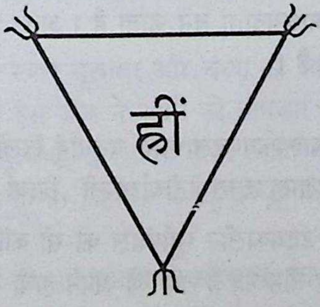

मन्त्रजप— नित्यप्रति एक हजार जप, पचपन दिनों तक उत्तराभिमुख

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

करें।

यन्त्रनिर्माणसामग्री— स्वर्णधातु।

नैवेद्य—दूध और पायस

लाभकारीफल— प्रकृति पर जय-लाभ, सर्वलोकवश्यता।

अविद्यानामन्तस्तिमिरमिहिरद्दीपनकरी
जडानां चैतन्यस्तबकमकरन्दस्रुतिझरी।
दरिद्राणां चिन्तामणिगुणनिका जन्मजलधौ
निमग्नानां दंष्ट्रा मुररिपुवराहस्य भवति ।। ३ ।।

पदान्वय— (हे भगवति ! तव पादाब्जरेणुः एषः) अविद्यानाम् अन्तस्तिमिरमिहिरद्दीपनकरी, जडानां चैतन्यस्तबकमकरन्दस्रुतिझरी, दरिद्राणां चिन्तामणिगुणनिका, जन्मजलधौ निमग्नानां मुररिपुवराहस्य दंष्ट्रा भवति ।।

श्लोकार्थ— तू अज्ञान (अविद्या) के अंधकार में डूबे हुए लोगों को अंधकार से बाहर निकालने के लिए ज्ञानरूपी सूर्य का उद्दीपन करने वाली, जड़ मनुष्यों के लिये चेतना-स्तबक से निर्गत होने वाले पराग के स्रोतों का झरना है, निर्धनों के हेतु चिन्तामणि (सभी आकांक्षाओं का पूरक प्रस्तर-रत्न) की माला के समान है और आवागमनरूपी संसार-सागर में निमग्न हुए व्यक्तियों के लिए भगवान विष्णु के वराहावतार के दाँत के सदृश उद्धारिका है ।।३।।

पूर्वकाल में हिरण्याक्ष नामक असुर ने पृथ्वी का अपहरण कर पाताल में मिला दिया था। तब भगवान विष्णु ने वराह अवतार लेकर पृथ्वी का उद्धार किया था। इसे विष्णु का तीसरा अवतार कहा जाता है। शक्ति की आराधना के फलस्वरूप अज्ञानता का नाश, धनहीनों को धन-लाभ तथा जड़ों के जड़त्व का निवारण होता है तथा ऐसा प्राणी वासनारूपी सागर में निमज्जित होने वालों के लिए आश्रयदाता बन जाता है। अतः सभी के लिए शक्ति की उपासना परमावश्यक है।

कहा गया है—

"बालार्कमण्डलाभासां चतुर्बाहुं त्रिलोचनाम्।
पाशमङ्कुशवराभीतीर्धारयन्तीं शिवां भजे ।।"

भावार्थ— जो उदयकालीन सूर्यमंडल की-सी कांति धारण करने वाली हैं, जिनके चार भुजाएँ और तीन नेत्र हैं तथा जो अपने हाथों में पाश, अंकुश, वर एवं अभय की मुद्रा धारण किये रहती हैं, उन शिवा देवी का मैं स्मरण करता हूँ।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

देवी की महिमा का वर्णन कवि-सम्राट तुलसीदास ने अपने महाकाव्य में इस प्रकार किया है—

जय-जय-जय गिरिराज किशोरी, जय महेशमुख-चन्द्र चकोरी।
जय गजबदन षड़ानन माता, जगत जननि दामिनि दुतिगाता॥
नहिं तव आदि मध्य अवसाना, अमित प्रभाव वेद नहिं जाना।
भव-भव विभव पराभव कारिणि, विश्वविमोहनिस्ववश विहारिणि॥
सेवत तोहिं सुलभ फलचारी, वरदायिनि त्रिपुरारि पियारी।
देविपूजिपद-कमल तुम्हारे, सुर नर मुनि सब होहिं सुखारे॥
—(रामचरितमानस, बालकण्ड)

यहाँ पाठभेदानुसार ऊपर के श्लोक में 'द्वीपनकरी' के स्थान में 'द्वीपनगरी' भी लिया जाता है।

व्याकरण— अविद्या— अर्शआदित्वात् अच्प्रत्ययः अथवा अविद्याऽऽविष्ट-चित्ता अपि उपचारेण अविद्या। इति।

चैतन्य— चेतनैव चैतन्यम्, स्वार्थेष्यञ्।

साहित्यानुसार यहाँ परिणामालंकर, उल्लेखालंकार तथा रूपकालंकार कहा गया है।

व्याख्या— जब तक प्राणी की मानसिक वृत्तियाँ अन्तर्मुखी नहीं हो जाती तब तक उसे आत्मज्ञान का आलोक दिखाई नहीं पड़ता॥ जब कुण्डलिनी शक्ति जागृत होकर सुषुम्ना-मार्ग में षट्चक्रों का भेदन करती हुई सहस्रार में पहुँचकर शिवसायुज्य पद पर आरूढ़ होने लगती है तब प्रत्येक प्रसव-क्रम के द्वारा वह सम्पूर्ण इंन्द्रियों को अंतर्मुखी कर लेती है। जो व्यक्ति देहाभास का परित्याग करके आत्मस्थिति में जितना ऊपर उठ जाता है, उसे शारीरिक कष्ट का अनुभव उतना ही कम होता है। देहध्यास के मंद पड़ जाने पर साधक उच्च भूमिकाओं की अनुभूति करने लगता है और उसकी प्रत्येक नाड़ी में आनन्द की लहरें हिलोरे लेने लगती हैं।

पृथ्वी तत्त्व का स्थान मूलाधर और चरण का स्थान पाताल को माना गया है। पार्थिव शरीरधारी इस जीव ने अपने को अंधकार के गर्त में डुबो रखा है। वह जीव अपने को मूलाधर से जितना ऊपर उठाता जाता है उतना ही उसका अध्यास कम होता जाता है। सहस्रार में पहुँचने के पश्चात् तो वह बिलकुल ही मुक्त हो जाता है।

अतएव मानव को आवागमनरूपी संसार की पातालरूपी दलदली भूमि से बाहर आने के लिए विष्णु की वाराहीशक्ति के शरणापन्न होने की आवश्यकता

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पड़ती है।

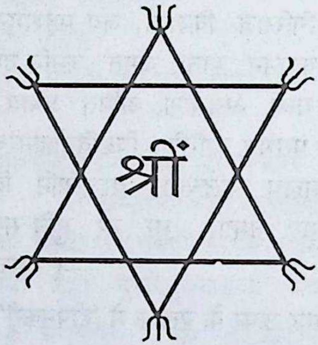

मन्त्रजप— प्रतिदिन दो सहस्र जप, चौवन दिनों तक ईशानाभिमुख करें।

यन्त्रनिर्माणसामग्री— स्वर्णधातु।

नैवेद्य— ऊर्दका पूआ।

लाभकारीफल— ज्ञानोदय एवं अभ्युदय। इसी के १५ दिनों तक १ हजार जप से सभी ऐश्वर्य और विद्या लाभ भी।

त्वदन्यः पाणिभ्याम भयवरदो दैवतगणा-
स्त्वमेका नैवासि प्रकटितवराभीत्यभिनया।
भयात्त्रातुं दातुं फलमपि च वाञ्छासमधिकं
शरण्ये लोकानां तव हि चरणावेव निपुणौ॥४॥

पदान्वय— (हे भगवति!) लोकानां शरण्ये! त्वदन्यो दैवतगणाः पाणिभ्यामभयवरदः। एका त्वं (पाणिभ्यां) प्रकटितवराभीत्यभिनया नैवासि हि। तव चरणावेव भयात्त्रातुं वाच्छासमधिकं फलमपि च दातुं निपुणौ।

श्लोकार्थ— हे सर्वलोक शरण्ये! तेरे अतिरिक्त अन्य सभी देवता दोनों हाथों की मुद्रा से अभयदान अथवा वरदान देते हैं। एक तुम्हीं हो जो वर और अभयदान करते समय कोई अभिनय नहीं करती। भय से मुक्त करने तथा अभिलाषा के अनुरूप वर प्रदान करने में तेरे दोनों चरण ही निष्णात हैं॥४॥

व्याकरण— दैवतगणः— देवता एव दैवतानि, विनयादित्वात् स्वार्थे श्रण्। स्वार्थिकाः प्रत्ययाः प्रकृतितो लिङ्गवचनान्यतिवर्तन्ते।

व्याख्या— अपने आराधकों पर देवगण दो प्रकार की कृपा करते हैं। कुछ

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

देवता तो स्वर्गीय सुख प्रदान करते हैं और कतिपय मोक्ष देते हैं। दोनों प्रकार के अनुग्रहों को देवता अपने हाथों की मुद्रा द्वारा प्रदर्शित करते हैं, किन्तु भगवती समस्त देवों से अधिक प्रभावशालिनी हैं।

ईशत्वभावकलुषाः कति नाम सन्ति
ब्रह्मादयः प्रतिदिनं प्रलयाभिभूताः।
एकः स एव जननि स्थिरबुद्धिरास्ते
यः पादयोस्तव सकृत्प्रणतिं करोति ॥ —क्रमस्तुति

देवी के दोनों चरण सर्वशक्तिसमन्वित हैं। वह अपने सेवकों को भोग और मुक्ति, दोनों वर देने में सक्षम हैं।

'यत्रास्ति भोगो न हि तत्र मोक्षो यत्रास्ति मोक्षो न हि तत्र भोगः।
श्रीसुन्दरीतर्पणतत्पराणां भोगश्च मोक्षश्च करस्थ एव ॥'
—ईश्वरविरचितमनोहरस्तोत्र

भगवती अपनी चारों भुजाओं में इक्षुधनुः, पंचबाण, अंकुश तथा पाश (फन्दा) धारण किये हुए है। अतः वह हाथों द्वारा किसी मुद्रा का प्रदर्शन नहीं करती। जो भी प्राणी अनन्यभाव से उनकी शरण में आता है उसकी सभी वांछाएँ स्वयं ही पूरी हो जाती हैं।

कहा गया है—

'आराधिता सैवनृणां भोगस्वर्गापवर्गदा।'
—दुर्गा सप्तशती, त्रयोदश अध्याय, श्लोक ५

भावार्थ— भगवती की उपासना करने पर वे ही मानवों को भोग, स्वर्ग तथा मोक्ष प्रदान करती है।

उक्त श्लोक में भगवती की आराधना के लिए 'ऐं क्लीं सौं' मन्त्र इंगित है जो भुक्ति एवं मुक्ति का दाता है।

यहाँ स्पष्टतः व्यातिरेकालंकार तथा काव्यलिंग अलंकार हैं।

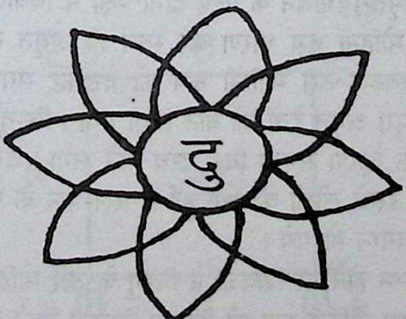

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मन्त्रजप— एक सहस्र जप, निरन्तर छत्तीस दिनों तक पूर्वाभिमुख करें।

यन्त्रनिर्माणसामग्री— रौप्यधातु (चाँदी)।

नैवेद्य— हरिद्रान्न।

लाभकारीफल— निर्धनता एवं रोग का निवारण और १६ दिनों तक करने से साम्राज्यसिद्धि।

हरिस्त्वामाराध्य प्रणतजनसौभाग्यजननीं
पुरा नारी भूत्वा पुररिपुमपि क्षोभमनयत्।
स्मरोऽपि त्वां नत्वा रतिनयनलेह्येन वपुषा
मुनीनामप्यन्तः प्रभवति हि मोहाय महताम्॥५॥

पदान्वय— (हे भगवति !) प्रणतजनसौभाग्यजननीं त्वां हरिराराध्य पुरा नारी भूत्वा पुररिपुमपि क्षोभमनयत्। स्मरोऽपि त्वां नत्वा रतिनयनलेह्येन वपुषा महतां मुनीनामप्यन्तर्मोहाय प्रभवति हि॥

श्लोकार्थ— पूर्वकाल में हरि (विष्णु) ने आर्तजनों को सौभाग्य प्रदान करने के लिए तेरी उपासना करके नारी का मोहिनी रूप ग्रहण कर त्रिपुरारि शिवजी के चित्त को भी कामोद्वेग के कारण विक्षुब्ध कर डाला था। कामदेव तुझे नमस्कार करने के कारण ही अपनी पत्नी रति के नेत्रों द्वारा चुंबित किये जाने वाले शरीर से बड़े-बड़े ऋषि-मुनियों के मन में भी मोह जगा देता है॥५॥

व्याख्या— पौराणिक कथाओं के अनुसार सत्ययुग में देवताओं और दानवों ने सम्मिलित रूप से सागर का मंथन किया था। मंथन करने के फलस्वरूप उसमें से चौदह रत्न— श्री (लक्ष्मी), रम्भा (एक अप्सरा), वारुणी (मदिरा), अमृत, शंख, ऐरावत नामक हाथी, धनुष, धन्वन्तरि (देव चिकित्सक), कामधेनु नामक गाय, कल्पवृक्ष, चन्द्रमा, उच्चैःश्रवा नामक अश्व, कौस्तुभ मणि एवं हलाहल (विष) निकले थे।

परन्तु अमृत-विभाजन के लिए दोनों पक्षों में विवाद उठ खड़ा हो गया। भगवान् विष्णु मोहिनी रूप धारण कर स्वयं ही अमृत बाँटने का कार्य करने लगे। परिणामस्वरूप उस मोहिनी रूप को देखकर समस्त असुर विमुग्ध हो गये। पूरा-का-पूरा अमृत देवों को बाँट दिया गया। किन्तु अमृत से पूर्व निकले हुए उस विष के कारण समूचा विश्व दग्ध होने लगा। उस विष को शिवजी ने पान कर लिया उससे लोकों की रक्षा हुई। गरल-पान के पश्चात् शिवजी एकान्त स्थान में समाधिमग्न हो गये।

समाधिमग्न होने पर शिवजी ने विष्णु के उस मोहिनी रूप को देखने की लालसा की। उस मोहिनी रूप को देखकर शिवजी इतने कामातुर हो उठे कि वे

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

उसके पीछे-पीछे दौड़ने लगे। षट्कूट विद्या के द्वारा तेरी आराधना करके, कामकला से भावान्वित होकर तेरे सारूप्य को पाकर कामारि मुग्ध हो उठे। लोपामुद्रोपासित विद्या तथा नन्दिकेश्वरोपासित विद्या के आश्रयण से ही षट्कूट विद्या की उपलब्धि होती है।

शिवविरंचि कहँ मोहै, को है बपुरा आन।
अस जिय जानि भजहिं मुनि, मायापति भगवान ।।

—(रामचरित मानस, उत्तरकांड)

आध्यात्मिक दृष्टि से देखा जाय तो यह जगत् एक महार्णव के समान है। इसमें अनेक प्रकार के रत्न भरे पड़े हैं। इस संसार-सागर का मंथन करने के लिए ध्यानरूपी मथानी का प्रयोग करना पड़ता है। इसमें मानव-मन ही वह वासुकी नागरूपी रस्सी है जिसने सम्पूर्ण जगत् को दंशित कर रखा है। उस नाग का मुख बहिर्मुखी तथा पूँछ अंतर्मुखी रहती है। मोक्षार्थियों को संसार-सागर के रत्नों में आसक्ति न रखकर तितिक्षा (सरदी-गरमी सहन करने की शक्ति) पूर्वक कष्टों को झेलते हुए भगवती के रूप-सौन्दर्य का आश्रयण कर उसकी उपासना करनी चाहिए।

पाठभेदानुसार उक्त श्लोक में **श्री अच्युतानंदजी** ने 'प्रणतजन सौभाग्यजननी' के स्थान पर 'प्रणतजनसौभाग्यजननि ईं' मानकर निम्न प्रकार का अर्थ ग्रहण किया है—

हे प्रणतजनसौभाग्यजननि ! हरि (विष्णु) तेरी 'ईं' रूप से उपासना करके नारी का मोहिनी रूप ग्रहण कर लेते हैं। 'ईं' कामकला है तथा कादि विद्या का तीसरा वर्ण है और अनुस्वार (शिव) सहित माया, लक्ष्मी और काम-बीजों में स्थित रहता है। इस श्लोक के द्वारा साध्य-सिद्धासन-विद्या का आभास होता है। यह विद्या है— 'ह्रीं क्लीं लें'। हादि विद्या मोक्षदायिनी होती है तथा कादि विद्या की आराधना से साधक को रूप-लावण्य सहित समस्त सिद्धियाँ हस्तगत हो जाती हैं। उक्त कथित 'ह्रीं क्लीं ब्लें'— मंत्र द्वारा हत्चक्र और महानाद के ऊपर शक्ति का न्यास करना होता है। इसके द्वारा सर्वसौख्य की प्रप्ति संभव होती है।

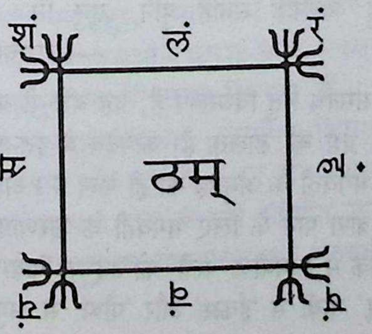

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मन्त्रजप— निरन्तर आठ दिनों तक दो हजार जप वायव्याभिमुख को
यन्त्रनिर्माणसामग्री— ताम्रधातु।
नैवेद्य— गुड पायस।
लाभकारीफल— सर्वहृदयग्राह्यता।

धनुः पौष्पं मौर्वी मधुकरमयी पञ्च विशिखा
वसन्तः सामन्तो मलयमरुदायोधनरथः।
तथाऽप्येकः सर्वं हिमगिरिसुते ! कामपि कृपा-
मपाङ्गात्ते लब्ध्वा जगदिदमनङ्गो विजयते।।६।।

पदान्वय— (हे) हिमगिरिसुते ! (यस्यानङ्गस्य) धनुः पौष्पं, मौर्वी मधुकरमयी, विशिखाः पञ्च, सामन्तो वसन्तः आयोधनरथः मलयमरुत्, तथापि (सः) अनङ्गः एकः ते अपाङ्गात् कामपि कृपां लब्ध्वा सर्वमिदं जगत् विजयते।

श्लोकार्थ— हे हिमगरिसुते ! जिसका धनुष पुष्पनिर्मित है, उसकी रज्जु भ्रमरों की बनी है, पाँच विषय (शब्द-स्पर्श-रूप-रस-गन्ध) ही जिसके बाण हैं, वसन्तऋतु ही जिसका योद्धा सामन्त है, मलयाचल का शीतल, मंद और सुगंधित पवन ही जिसका रथ है और जो स्वतः अनङ्गः (अशरीरी) है— ऐसा कामदेव तेरे अल्प कृपा-कटाक्ष के द्वारा एकाकी ही सम्पूर्ण जगत् को विजित कर लेता है ।।६।।

व्याख्या— कामदेव को अपनी समाधि में बाधा पहुँचाते देख कर शिवजी ने अपना तीसरा नेत्र खोलकर उसे भस्मीभूत कर डाला। तबसे कामदेव का नाम अनंग हो गया।

कहा गया है—

तब शिव तीसर नयन उघारा। चितवत काम भयउ जरि छारा॥
अब ते रति तव नाथकर, होइहिं नाम अनंग।
बिनु वपु व्यापिहिं सबहिं पुनि, सुनु निज मिलन प्रसंग॥

—(रामचरित मानस, बालकाण्ड

कामदेव समाधि हेतु विघ्नरूप है, वह बड़े-से बड़े ऋषि-महर्षियों को भी क्षणमात्र में मार्ग-भ्रष्ट कर डालता है। कामदेव में इतना साहस और सामर्थ्य का होना तो केवल भगवती के अनुग्रह का ही फल है। अतः मोक्षाभिलाषी व्यक्तियों को कामदेव से त्राण पाने के लिए भगवती के शरणापन्न होना चाहिए।

उक्त श्लोक में कामबीज 'क्लीं' को उद्घृत किया गया है। काम से 'ककार' मलय से 'लकार' मौर्वी से 'ईकार' और 'पौष्पं' से अनुस्वार का बोध होता है

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

व्याकरण— विजयते 'विपराभ्यां जे:' इत्यात्मनेपदम् ।

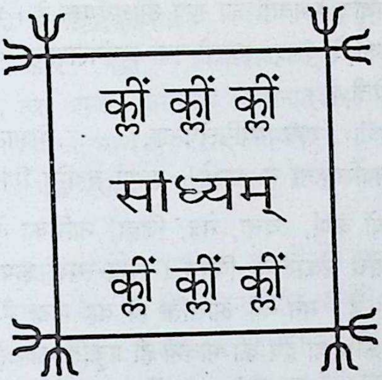

मन्त्रजप— प्रतिदिन पाँच सौ जप, इक्कीस दिनों तक करें ।

यन्त्रनिर्माणसामग्री— स्वर्णधातु ।

नैवेद्य—इक्षुखण्ड ।

लाभकारीफल— सन्तान की उपलब्धि ।

क्वणत्काञ्चीदामा करिकलभकुम्भस्तनभरा (नता)
परिक्षीणा मध्ये परिणतशरच्चन्द्रवदना ।
धनुर्बाणान् पाशं सृणिमपि दधाना करतलैः
पुरस्तादास्तां नः पुरमथितुराहोपुरुषिका ।।७।।

पदान्वय— क्वणत्काञ्चीदामा करिकलभकुम्भस्तनभरा मध्ये परिक्षीणा परिणतशरच्चन्द्रवदना धनुः वाणान् पाशं सृणिमपि करतलैः दधाना पुरमथितुराहोपुरुषिका नः पुरस्तादास्ताम् ।।

श्लोकार्थ— कटि-प्रदेश पर रुन-झुन की ध्वनि करने वाले घुँघरुओं से युक्त मेखला बाँधे हुए, हस्ति-शावक के मस्तक पर निकले हुए कुंभ के समान स्तनों के भार से अवनत हुई, मध्यभाग में क्षीणता को प्राप्त, शारदीयपूर्णिमा के चन्द्रवत् मुखवाली, चारों भुजाओं में क्रमशः धनुष, पंचबाण, पाश और अंकुशधारिणी त्रिपुरारि की आहोपुरुषिका मेरे समक्ष विद्यमान रहें ।।७।।

व्याख्या— आहोपुरुषिका— पुरमथितुः शिवस्य अहङ्काररूपा । त्रिपुरारि अर्थात् जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्ति— इन तीन अवस्थाओं से परे ब्रह्मस्वरूप में अहम् विमर्ष का व्युत्थान होना ही यहाँ अभिप्रेत माना गया है ।

आहोपुरुषिका पद का समायोजन यहाँ भगवती के लिए किया गया है ।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

आहो आश्चर्यसूचक पद का रूप है और पुरुषिका पुरुष का स्त्री लिंग रूप में भाव-वाचक पद है। अर्थात् भगवती का रूप आश्चर्ययुक्त है। भगवती के असाधारण प्रभाववश ही शिवजी के श्मशानवासी तथा अमंगलशील होने पर भी उनकी पूजा चौदह लोकों में होती है।

चर्माम्बरञ्च शवभस्मविलेपनञ्च, भिक्षाटनञ्च परेतभूमौ।
वेतालसंहितपरिग्रहता च शम्भोः, शोभां वहन्ति गिरिजे तव साहचर्यात्॥

पंचज्ञानेन्द्रियों कर्ण, त्वचा, नेत्र, जिह्वा, नासिका के क्रम में समायोजित करने से संबद्ध पाँच प्रकार के विषय (शब्द-स्पर्श-रूप-रस-गन्ध) ही पाँच पुष्पबाण कहे जाते हैं। मन की आसक्ति ही वह फंदा है जिसके द्वारा सम्पूर्ण जगत् आबद्ध है। क्रोध या द्वेष की भावना ही प्रकृति का अंकुश नामक अस्त्र है। इससे संयुक्त होकर प्राणी पापकर्म करने में उतारू हो जाता है।

शब्द-स्पर्श-रूप-रस-गंध से संयुक्त पाँच पुष्पबाण वाला इक्षु-धनुष कामदेव का अस्त्र है और कामिनी नारी स्वयं शक्तिस्वरूपा होती है। अतएव साधकों को महामाया के शिकार से बचने के लिए कामिनी के काम-बाणों से बचना आवश्यक होता है। इस कारण हृदय में भगवती के चरणों का ध्यान करना चाहिए। कहा गया है—

जौं चाहै आपन कल्याना, सुयश सुमति शुभगति सुख नाना।
सो परनारि लिलार गुसाईं, तजै चौथ चन्द्रा की नाईं॥

—(रामचरितमानस, सुन्दरकाण्ड)

उक्त श्लोक में 'ब्लूं' बीज का ग्रहण किया गया है। बाण से ब्, करतल से ल्, मथितुः से 'उ' और 'अस्तां' द्वारा अनुस्वार लिया गया है।

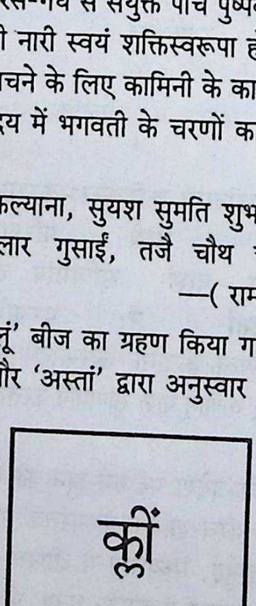

मन्त्रजप— एक हजार जप लगातार ४५ दिनों तक पूर्वाभिमुख करें।
यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु।
नैवेद्य—दूध और पायस।
लाभकारीफल— शत्रु पर विजय-लाभ।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सुधासिन्धोर्मध्ये सुरविटपिवाटीपरिवृते
मणिद्वीपे नीपोपवनवति चिन्तामणिगृहे ।
शिवाऽऽकारे मञ्चे परमशिवपर्यङ्कनिलयां
भजन्ति त्वां धन्याः कतिचन चिदानन्दलहरीम् ।।८।।

पदान्वय— सुधासिन्धोः मध्ये सुरविटपिवाटीपरिवृते मणिद्वीपे नीपोपवनवति चिन्तामणिगृहे शिवाकारे मञ्चे परमशिवपर्यङ्कनिलयां चिदानन्दलहरी त्वां कतिचन धन्याः भजन्ति ॥

श्लोकार्थ— सुधा-सागर के मध्य कल्पतरुओं की वाटिका से आच्छादित मणिद्वीप में, नीपवृक्षों के बगीचे के बीच चिन्तामणि प्रस्तरों से निर्मित गृह में, त्रिकोणाकार मंच पर, परमशिव के पर्यंक पर शोभित तेरे चिन्दानंदलहरी स्वरूप का कोई विरला तथा धन्यभाग्य व्यक्ति ही भजन कर सकता है ॥८॥

व्याख्या— अन्य ग्रन्थों में भी इसी भाव की अभिव्यक्ति की गयी है—

"यस्य नो पश्चिमं जन्म न स्वयं यो महेश्वरः ।
स न प्राप्नोति परमां दशपञ्चाक्षरीमिमाम् ॥" —रुद्रयामल

स्पन्दन रहित परम शिव आनन्द ब्रह्म ही सुधा-सागर है तथा चिदानन्द लहरी स्वयं चितिशक्ति है जिसका निवास स्थान सहस्रार कमल दल है । सहस्रार ही वह मणिजटित बगीचा है, द्वीप है जिसमें चतुर्दिक कल्पवृक्षों का आवेष्टन है और उसके मध्यवर्ती भाग में नीप वृक्षों का उपवन है, जिसमें चिन्तामणि नामक पाषाणों से गृह का निर्माण किया गया है । उस गृह में त्रिकोणाकार अकथनीय या गुरुचक्ररूपी मंत्र पर बिन्दुरूपी पलंग बिछाया गया है। वहाँ सच्चिदानंद की स्पन्दन स्वरूपिणी आनंदलहरी शिव के साथ विहार में तन्मय रहती है । इसके बारहवें श्लोक में हरि, रुद्र ब्रह्मा और महेश्वर को पलंग के चार पायों के रूप में परिकल्पित किया गया है । सदाशिव को पलंग की चादर से उपमित किया गया है । अथवा ओऽम् को पलंग माना है । इसमें अ, उ, म् और अनुस्वार ही पलंग के चार पाये दर्शाये गये हैं । इसके अतिरिक्त मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपूर और अनाहत चक्र को भी चार पायों के रूप में कल्पित किया है जिस पर विशुद्ध चक्र ही चादर का स्वरूप है। यह देह ही श्री चक्र है । इसे भगवती का वासस्थान बताया गया है ।

उक्त श्लोक में 'चिदानन्दलहरी' पद के कारण ही प्रथम इकतालीस श्लोकों के ग्रंथ के पूर्ववर्ती भाग को आनन्दलहरी कहा जाता है ।

आनन्द शब्द से 'क' और 'लहरी' से 'लह्रीं' लेकर आदि विद्या के तीनों कूटों को लिया जा सकता है ।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

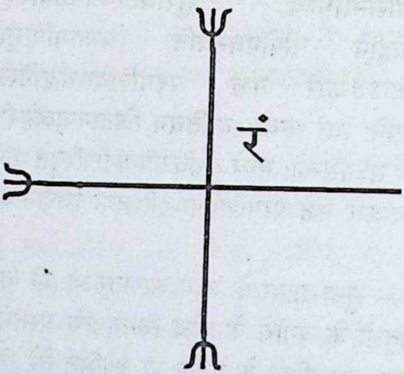

मन्त्रजप— एक सहस्र जप, बारह दिनों तक करें।

यन्त्रनिर्माण-सामग्री— लाल चंदन का लेपन और लाल पुष्प से पूजन करें।

नैवेद्य— काली मिर्च।

लाभकारीफल— कारागार से मुक्ति एवं प्रारम्भ किये कार्यों में सफलता।

महीं मूलाधारे कमपि मणिपूरे हुतवहं
स्थितं स्वाधिष्ठाने हृदि मरुतभाकाशमुपरि।
मनोऽपि भ्रू मध्ये सकलमपि भित्वा कुलपथं
सहस्रारे पद्मे सह रहसि पत्या विहरसि।।९।।

पदान्वय— (हे भगवति !) मूलाधारे महीं, कम् अपि (मूलाधरे) मणिपूरे हुतवहम्, स्वाधिष्ठाने स्थितम् हृदि मरुतम्, आकाशमुपरि, मनोऽपि भ्रूमध्ये (स्थितमिति लिङ्गव्यत्ययेन सर्वत्रानुषज्यते।) सकलं कुलपथमपि भित्त्वा सहस्रारे पद्मे रहसि पत्या सह विहरसि।

श्लोकार्थ— पृथ्वीतत्त्व और जलतत्त्व को मूलाधार में, स्वाधिष्ठानस्थित अग्नितत्त्व को मणिपूर में, वायुतत्त्व को हृत्प्रदेश में, आकाशतत्त्व को ऊपर विशुद्धचक्र में तथा मन को भ्रूमध्य में— इस प्रकार समस्त शक्तिमार्ग का भेदन करके तू सहस्रार पद्म में अपने पति के साथ विहरणशील रहा करती है ॥९॥

व्याख्या— उक्त श्लोक में अन्तर्याग का दिग्दर्शन कराया गया है। इसमें कुंडलिनी शक्ति का आरोहण षट्चक्रवेध पूर्वक बताया गया है।

चक्री का स्थान मेरुदंड के अन्दर नीचे से मस्तिष्क तक उत्थित होने

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

वाली सुषुम्ना नाड़ी में है। इसके द्वारा शरीर की नाड़ियाँ संबद्ध रहती हैं। मलद्वार के पृष्ठ भाग में एक मांसपेशी स्थित रहती है जिसे कन्द के नाम से जाना जाता है। उसके केन्द्रस्थल में कुंडलिनी स्वयंभूलिंग पर साढ़े तीन कुंडली मारे शयन करती रहती है। जाग्रतावस्था में वह स्वाधिष्ठान चक्र में रहती है। ऐसी अवस्था में जीव को बिन्दुरूपी शिव कहा जाता है। और कुंडलिनी को जीव स्वरूपा शक्ति।

वही परमात्मारूपी शक्ति आज्ञाचक्र में पहुँचकर त्रिपुरा कहलाती है जो सहस्रार में शिव के संग सायुज्य-लाभ प्राप्त करती है। षट्चक्रवेधन के पूर्व शक्ति का स्वरूप जीवात्मिक का होता है। उस जीवात्मिक का स्थान स्वाधिष्ठान और विशुद्ध चक्र शिवात्मिक का स्थान है।

शक्ति की गति वेध-काल में मूलाधार से सहस्रार की ओर उन्मुख हो जाती है। सहस्रार से अवरोहण करते समय वह नाड़ियों को अमृत से सिंचित करती हुई मूलाधार की ओर लौट पड़ती है। आरोहण करने को उन्नेय भूमिका और अवरोहण को अन्वय भूमिका कहा जाता है। दोनों आवृत्तियों से कुंडलिनी का नीचे उतरकर स्वस्थान पर गुहा (गह्वर) में लौट आने का तात्पर्य है। इस को अप्यय और प्रभवक्रम भी कहते हैं। दोनों की सिद्धि के पश्चात् ही योग की सिद्धि सम्भव होती है।

कहा गया है— "योगो हि प्रभवाप्ययौ।" यह क्रम 'कुंडलिनी सोपान रहस्य' के नाम से ख्यात है।

आगे और भी कहा गया है—

"कुण्डलिन्या महीभेदे योगी त्यजति मेदिनीम्।
सलिलस्थानयोगेन जले चलति योगवित्॥
बह्नेर्भेद जलमिव स्पृशत्यग्निं ज्वलच्छिखम्।
मरुद्भेदे शीघ्रगतिर्याति क्रोशशतं क्षरणात्॥
व्योमभेदे खे चरति मनोभेदे मनोगतिः।
यत्र कामयते तत्र याति लोकत्रयेऽपि च॥
संयोज्यच्छिवपदे शिव एव प्रजायते।
कर्ता हर्ता च सर्वत्र सुरासुरनमस्कृतः॥

—रहस्यासिद्धिसोपान

ध्यान तीन प्रकार का कहा जाता है— स्थूल, सूक्ष्म और पर। 'क्वणत्काञ्चीदाम' में स्थूलध्यान, 'चिदानन्दलहरी' में पर ध्यान तथा 'महीं मूलाधरे' शब्द में सूक्ष्मध्यान वर्णित है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

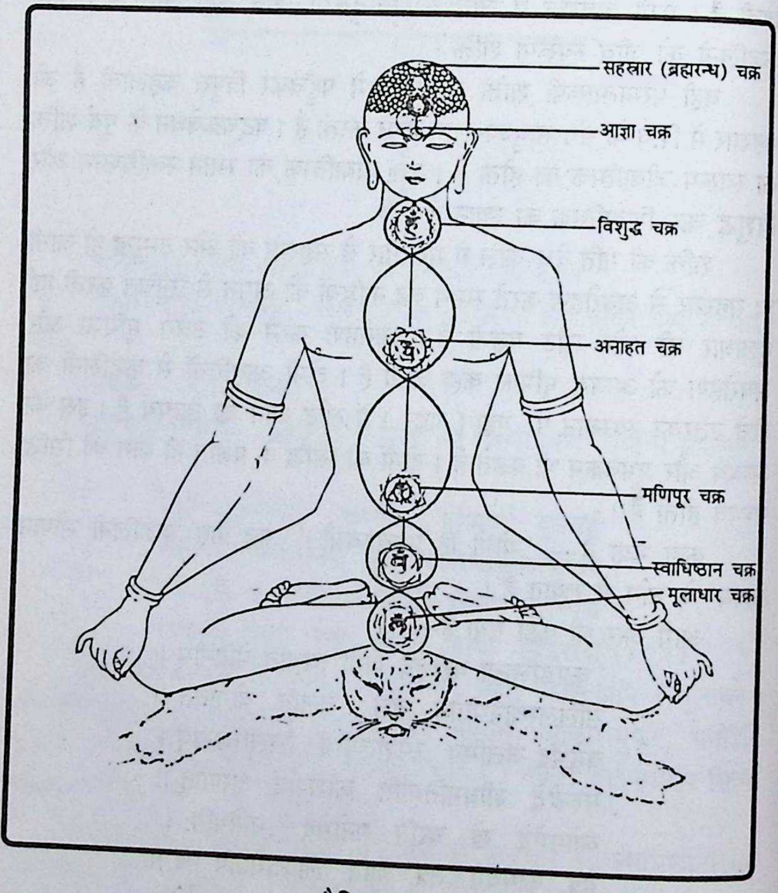

यौगिक चक्र

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

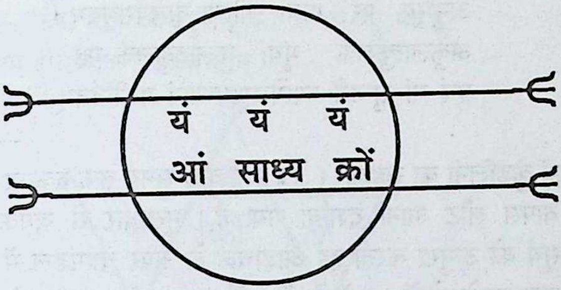

मन्त्रजप— एक सहस्र जप डेढ़ महीनों तक करें।

यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु जो प्रखर गंधयुक्त पदार्थ से कलुषित हो।

नैवेद्य—दूध और पायस।

लाभकारीफल— पंचभूत ज़य। इसीका १० दिन तक जप देशान्तर में गये व्यक्ति का शीघ्र आ गमन भी कराता है।

सुधाधारासारैश्चरणयुगलान्तर्विगलितैः
प्रपञ्चं सिञ्चन्ती पुनरपि रसाम्नायमहसः।
अवाप्य स्वां भूमिं भुजगनिभमध्युष्टवलयं
स्वमात्मानं कृत्वा स्वपिषि कुलकुण्डे कुहरिणि ।।१०।।

पदान्वय— सुधाधारासारैः चरणायुगलान्तर्विगलितैः प्रपञ्चं सिञ्चन्ती रसाम्नायमहसः (सकाशात्) स्वां भूमिं पुनरप्यवाप्य भुजगनिभमध्युष्टवलयं स्वमात्मानं कृत्वा कुहरिणि कुलकुण्डे स्वपिषि।

श्लोकार्थ— हे कुहरिणि ! तेरे दोनों चरणों के मध्यभाग से टपकने वाले अमृतधार के वर्षण से, प्रपंच का सिंचन करती हुई, पुनः छहों अम्नायों से होती हुई अथवा षट्चक्रों द्वारा सिंचित होती हुई अपनी भूमि पर अवतरण कर अपने आप को सर्पिणी की भाँति साढ़े तीन कुंडल के आकार में बनाकर तू कुलकुण्ड में शयन करती है ॥१०॥

नीचे लिखे गये दो पद्यों में कुंडलिनी का भेद निरूपित किया गया है—

"मूलादिब्रह्मरन्ध्रान्तं रक्तोर्णातन्तुसन्निभाम्।
कुलकुण्डलिनीं नित्यां विद्युदुल्लासदृक्तनुम्॥
मत्तालिकुलभङ्कारसदृक्षतरनादिनीम्।
उन्नीयोन्नीय चक्रेषु क्रमात्स्यन्दति वैभवम्।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अनुभूय परं गत्वा पीत्वा कुलपरामृतम्।
अकुलात्कुलकं भूयः कुलादकुलकं महः ॥
एवं मां सुन्दरीं ध्यायेत्सूक्ष्मध्यानं प्रकीर्तितम्।''

—चतुःशती।

यहाँ कुंडलिनी का सहस्रार (पद्म) में कुछ समय तक रुककर अपने स्थान में पुनः वापस लौट आना दर्शाया गया है। मूलाधार से जगकर कुंडलिनी हृदयस्थ सूर्य को उन्मुख करती हुई आज्ञाचक्र के ऊपर चंद्रमंडल में प्रविष्ट होती है। तत्पश्चात् उसके दोनों चरणों के बीच में अमृत की धाराएँ नीचे स्रवित होने लगती हैं। इस प्रक्रिया के द्वारा सम्पूर्ण नाड़ियों का विभिन्न चक्रों से समूचे शरीर में अमृत-प्रवाह का सिंचन ऊपर से नीचे तक होने लगता है। पुनः जिस पथ से शक्ति का आरोहण होता है उसी पथ से अवरोहण होने के पश्चात् वह अपने स्थान पर सर्पाकृति में साढ़े तीन कुंडल मारकर सो जाती है। नीचे दिये गये वामकेश्वर तंत्र के श्लोक से इसका स्पष्टीकरण हो जाता है—

भुजङ्गाकाररूपेण मूलाधारं समाश्रिता।
शक्तिः कुण्डलिनी नाम विसत्तन्तुनिभाऽऽशुभा ॥

प्रश्नोपनिषद् में नाड़ियों की संख्या इस प्रकार से बतलायी गयी है—

अत्रैतदेकशतं नाड़ीनां तासां शतं शतमेकैकस्यां,
द्वासप्ततिर्द्वासप्ततिः प्रतिशाखानाडीसहस्राणि भवन्ति।

—प्रश्नोपनिषद् ३,७

तान्त्रिक परम्परा के अनुसार आराधना के पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण, ऊर्ध्व और अधः— ये छह आम्नाय कहे गये हैं। इन सबका उद्देश्य शक्ति की जागृति से समाधि में सफलता पाना ही होता है। इन आम्नायों के विधान गुरु के मार्गदर्शन द्वारा जानने चाहिए।

अण्डे तु ये प्रपञ्चाः स्युः पिण्डे ते च प्रतिष्ठिताः।
लघुत्वगुरुताञ्चर्ते न भेदस्त्वण्डपिण्डयोः ॥

—योगदीपिका

उक्त श्लोक में 'प्रपञ्च' शब्द का तात्पर्य शरीर से है। अण्डप्रपञ्च और पिण्डप्रपञ्च में कोई भेद नहीं है।

व्याकरण— कुहरिणि— 'अत इनिठनौ'
इति सूत्रेण इनि प्रत्ययः'
'ऋन्नेभ्यो ङीप्' इति ङीप्
'रषाभ्यां नो णः समानपदे' इति णत्वम्।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अध्युष्ट— 'उष' दाहे अधिपूर्वात् क्त प्रत्यये 'ष्टु ना ष्टुः'
इति ष्टुत्वम्। सम्बोधने एकवचनम्।

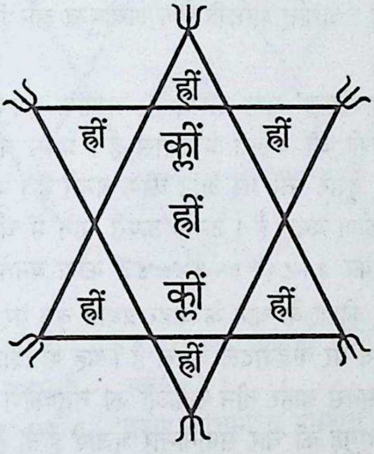

मन्त्रजप— एक हजार, छह दिनों तक करें।

यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु जो लाल रंग के रेशमी सूत्र से अबद्ध हो।

नैवेद्य— केले का फल।

लाभकारीफल— वीर्यवर्धक।

चतुर्भिः श्रीकण्ठैः शिवयुवतिभिः पञ्चभिरपि
प्रभिन्नाभिः शम्भोर्नवभिरपि मूलप्रकृतिभिः।
त्रयश्चत्वारिंशद्वसुदलकलाश्रत्रिवलय-
त्रिरेखाभिः सार्धं नव शरण (भवन) कोणाः परिणताः ।।११।।

पदान्वय— चतुर्भिः श्रीकण्ठैः पञ्चभिः शिवयुवतिभिः अपि नवभिरपि मूलप्रकृतिभिः तव त्रयश्चत्वारिंशत् शरण (भवन) कोणाः परिणाताः शम्भोः प्रभिन्नाभिः वसुदलकलाश्रत्रिवलयत्रिखाभिः सार्धम्।

श्लोकार्थ— चार श्रीकण्ठ और पाँच शिवयुवतियों— इन नव मूल प्रकृतियों के द्वारा तेरे रहने के ४३ त्रिभुज बनते हैं। ये सभी त्रिकोण शिव के विन्दुस्थान से पृथक् हैं। वे तीन वृत्तों और तीन रेखाओं के साथ आठ और सोलह दलों से समन्वित हैं।

व्याख्या— इस श्लोक में बहिर्याग का वर्णन किया गया है। श्रीचक्र ब्रह्माण्ड और पिण्ड, दोनों का ही प्रतीक माना जाता है। इसकी रचना चार शिव

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

त्रिकोण और पाँच शक्ति त्रिकोणें के मेल से होती है। सृष्टि क्रमानुसार पाँच शक्ति त्रिकोण ऊर्ध्वमुखी होते हैं। इसके विपरित चार शिव-त्रिकोण अधोमुखी और अप्ययक्रम में होते हैं। अर्थात् शक्तित्रिकोण अधोमुख और शिवत्रिकोण ऊर्ध्वमुख रखने पड़ते हैं।

यहाँ 'त्रयश्चत्वारिंशत्' पाठ उचित है, क्योंकि प्रथम केन्द्रीय त्रिकोण के अतिरिक्त शेष त्रिकोणों की संख्या बयालिस है। प्रथम बीच वाले त्रिकोण के बहिर्भाग में चतुर्दिक् दूसरे स्तर पर आठ कोण बनते हैं। पुन: तीसरे और चौथे स्तर पर दश-दश कोण बनते हैं। उनके ऊपरी भाग में चौदह कोण बनते हैं। अर्थात् सबको मिलाकर १+८+१०+१४=४३ कोण बनते हैं।

इन तैंतालिस कोणों के चक्र के बाहर प्रधान वृत्त पर अष्टदल कमल और उसके बाहर दूसरे वृत्त पर षोडशदल कमल है। यह षोडशदल कमल तीन वृत्तों से आच्छादित है। सबसे बाहर तीन रेखाओं का चतुष्कोण होता है जिसे भूगृह कहा जाता है। इस भूगृह की चार समानान्तर भुजाएँ होती हैं और चारों दिशाओं में चतुर्द्वार होते हैं।

इस देह को ही श्रीचक्र माना गया है जैसा कि निम्न श्लोक से स्पष्ट है—

त्वगसृङ्मांसमेदोस्थिधातवः शक्तिमूलकाः।
मज्जाशुक्लप्राणजीवधातवः शिवमूलकाः॥

पंचभूत, पंचतन्मात्रा, पंचज्ञानेन्द्रिय, पंचकर्मेन्द्रिय तथा पंचप्राण (प्राण, अपान, व्यान, उदान, समान) ही शक्तितत्त्व हैं। माया शुद्ध-विद्या महेश्वर एवं सदाशिव को शिवतत्त्व कहा गया है।

कतिपय विद्वान ५१, ९४ और कुछ २५ तत्त्व मानते हैं। श्रीचक्र निर्माण की तीन भेद होते हैं— मेरु, कैलास और भूः। इन तीनों में शक्तियों के स्थानों और उनकी पूजाविधियों में अंतर होता है। श्रीचक्र के मेरु = भेद में उसको सोलह नित्य कलाओं से, कैलास भेद में उसे आठ मातृका शक्तियों से और भूः भेद में उसे आठ वशिनी देवियों से सम्बद्ध चक्र माना जाता है। तैत्तिरीय में उल्लेख है कि पृश्नि नामक ऋषियों ने भी श्रीचक्र का पूजन कर अपनी कुंडलिनी शक्ति को जागृत कर उसे सहस्रार में पहुँचाया था।

व्याकरण— चरणम्— 'चर' गतिभक्षणयोरिति चरधातोः चरति— गच्छति सर्वमपि लोकं व्याप्नोति— चरति भक्षयति सर्वमज्ञाननिकुरम्बमिति कर्तरि कारके सति अधिकरणव्युत्पत्त्या ल्युट प्रत्यये चरणमिति सिद्धम्।

त्रयश्च-वलयाः त्रिवलयाः— इसमें द्विगु नामक समास है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

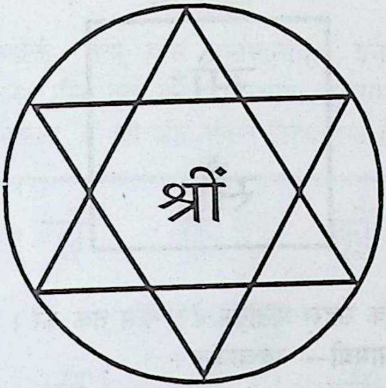

मन्त्रजप— प्रतिदिन एक सहस्त्र जप इक्यासी दिनों तक करें।
यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु।
नैवेद्य— गुड़ पायस (विशेष अभिमंत्रित नवनीत का सेवन)
लाभकारीफल— वन्ध्यादोषमुक्ति।

त्वदीयं सौन्दर्य तुहिनगिरिकन्ये तुलयितुं
कवीन्द्राः कल्पन्ते कथमपि विरिञ्चिप्रभृतयः।
यदालोकौत्सुक्यादमरललना यान्ति मनसा
तपोभिर्दुष्प्रापामपि गिरिशसायुज्यपदवीम्।।१२।।

पदान्वय— हे तुहिनगिरिकन्ये ! त्वदीयं सौन्दर्य तुलयितुं विरिञ्चिप्रभृतयः कवीन्द्राः कथमपि कल्पन्ते। अमरललनाः आलोकौत्सुक्यात् तपोभिः दुष्प्रापामपि गिरिशसायुज्यपदवीं मनसा यान्ति॥

श्लोकार्थ— हे हिमगिरितनये ! तेरे रूप-लावण्य की समानता करने की ब्रह्मादिगण भी कुछ-कुछ कल्पना करते रहते हैं। स्वर्गीय अप्सराएँ तेरे सौन्दर्य को देखने की उत्कंठा के फलस्वरूप, तप द्वारा भी दुष्प्राप्य शिवसायुज्य पदवी को मानसिक रूप से प्राप्त कर लेती हैं।

भगवती का रूप-राशि कल्पना से परे है, परन्तु सौन्दर्य की कल्पना के कारण समाधि लग सकती है। शिवसायुज्य उपाधि की प्राप्ति होती है, शिवसायुज्य की प्राप्ति से मुक्ति संभव होती है क्योंकि सहस्त्रार में शिव-शक्ति की एकता होने के कारण परमपद की उपलब्धि हो जाती है॥१२॥

व्याकरण— औत्सुक्य— ल्यब्लोपे पञ्चमी यद्वा निमित्तपञ्चमी। यहाँ अनन्वय अलंकार है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सौः

सौः

मन्त्रजप— एक सहस्र प्रतिदिन डेढ़ मास तक करें।
यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वच्छजल।
नैवेद्य— मधु।
लाभकारीफल— कवित्व-शक्ति में वर्धन, वशीत्व सिद्धि।

नरं वर्षीयांसं नयनविरसं नर्मसु जडं
तयापाङ्गालोके पतितमनुधावन्ति शतशः।
गलद्वेणीबन्धाः कुचकलशविस्रस्तसिचया
हठात्त्रुट्यत्काञ्च्यो विगलितदुकूला युवतयः ।।१३।।

पदान्वय— वर्षीयांसं नयनविरसं नर्मसु जडं तवापाङ्गालोके पतितं नरं शतशः युवतयः गलद्वेणीबन्धाः कुचकलशविस्रस्तसिचयाः हठात्त्रुट्यत्काञ्च्यः विगलितदुकुलाः (सत्यः) अनुधावन्ति ॥

श्लोकार्थ— वृद्धत्व को प्राप्त, कुरूप-दर्शन तथा क्रीड़ा में जड़ व्यक्ति भी तेरे दृष्टिपात से ऐसा मनोहर बन जाता है कि शताधिक रमणियाँ जिनकी वेणी के बंधन खुल गये हैं, जिनके स्तनों की चोली विदीर्ण हो चुकी है, जिनकी मेखला हठात् टूट गयी है तथा जिनकी साड़ी शरीर से खिसकती जा रही है— उसके पीछे-पीछे दौड़ने लगती हैं। शक्ति-जागरण के परिणाम स्वरूप काय-विभूति की भी प्राप्ति हो सकती है, जो षट्चक्रवेधन के द्वारा पंचमहाभूतों पर विजयोपरान्त ही सम्भव होती है। रूप-सौन्दर्य-बल और काया का वज्र के समान गठीला होना ही काय-सम्पत् कहा जाता है। ऐसे मानव शरीर की ग्रंथियाँ रसोत्पादन में इतनी सशक्त हो जाती हैं कि शरीरस्थ निर्माण-शक्ति का क्षय होना बन्द हो जाता है। उसके स्नायुओं में जीवनी शक्ति का संचरण होने लगता है तथा सप्तधातुओं का पुनः निर्माण होना प्रारम्भ हो जाता है।

सप्त धातुएँ इस प्रकार से हैं— रस, रक्त, मांस, मेद, अस्थि, मज्जा और शुक्र।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

रसाद्रक्तं ततो मांसं मांसान्मेदः प्रजायते।
मेदस्याऽस्थि ततो मज्जा मज्जायाः शुक्रसम्भवः ॥

यहाँ पर कामकला 'ई' की ओर संकेत किया गया है ॥१३॥

क्लीं क्लीं क्लीं
साध्यम्
क्लीं क्लीं क्लीं

मन्त्रजप— एक हजार जप नित्यप्रति छह दिनों तक करें।

यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्ण अथवा सीसा (राँगा) नामक धातु।

नैवेद्य— त्रिमधु।

लाभकारीफल— नारी-आकर्षण हेतु।

क्षितौ षट्पञ्चाशद्द्विसमधिकपञ्चाशदुदके
हुताशे द्वाषष्टिश्चतुरधिकपञ्चाशदनिले।
दिविं द्विषट्त्रिंशन्मनसि च चतुःषष्टिरिति ये
मयूखातेषामप्युपरि तव पादाम्बुजयुगम् ॥१४॥

पदान्वय— ये मयूखाः क्षितौ षट्पञ्चाशत्, उदके द्विसमधिकपञ्चाशत्, हुताशे द्वाषष्टिः, अनिले चतुरधिकपञ्चाशत्, दिवि द्विषट्त्रिंशत्, मनसि च चतुष्षष्टिः, तेषामुपरि तव पादाम्बुजयुगं (वर्तते)।

श्लोकार्थ— हे देवि ! तेरे दोनों चरण-कमल पृथ्वी में होने वाली ५६, जल में ५२, अग्नि में ६२, वायु में ५४, आकाश में ९२ तथा मन में ६४ किरणों से भी ऊपर हैं।

व्याख्या— उक्त सभी रश्मियों में आधी शिवात्मिका और आधी शक्तयात्मिका शक्तियाँ हैं। सबका योगफल ३६० है जो चांद्रवर्ष के अनुसार समूचे वर्ष की ३६० तिथियों से समानता रखती हैं। यह बात प्रमाणित करती है कि संवत्सर पुरुषपिंड का आधार स्वरूप है। अतः इन ३६० किरणों का सम्बन्ध ३६० तत्त्वों से है।

उक्त सभी किरणों का विवेचन पृथक्-पृथक् रूप में निम्न प्रकार से है—

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पृथ्वी की छप्पन किरणें— ५ महाभूत, ५ तन्मात्राएँ, ५ कर्मेंद्रियाँ, ५ ज्ञानेंद्रियाँ, ४ अन्तः करण, कला, प्रकृति, महत् और पुरुष।

जल की बावन किरणें— ५ महाभूत, १० इंद्रियाँ (५ ज्ञानेंद्रिय एवं ५ कर्मेंद्रिय), १० उनके कार्य और १ मन। इस प्रकार इनका कुल योग २६ है। तथा शिवशक्ति भेद से ५२ कहे गये हैं।

अग्नि की बासठ किरणें— ५ महाभूत, ५ तन्मात्राएँ, १० इंद्रियाँ, १० उनके कार्य और मन। इन सबका योग ३१ है, परन्तु शिवशक्ति भेदानुसार ६२ कहे जाते हैं।

वायु की चौवन किरणें— ५ महाभूत, ५ तन्मात्राएँ, १० इंद्रियाँ, (५ कर्मेंद्रियाँ एवं ५ ज्ञानेंद्रियाँ) तथा ४ अन्तः करण, कला, प्रकृति एवं पुरुष। कुल संख्या २७ है. किन्तु शिवशक्ति भेद से ५४ होती हैं।

आकाश की बहत्तर किरणें— कुल मिलाकर ३६ तत्त्व तथा शिवशक्ति के भेद से ७२ कही गयी हैं।

मन की चौसठ किरणें— प्रथम ४ शुद्धतत्त्व अर्थात् शिवशक्ति और महेश्वर के अतिरिक्त शेष ३२ किरणें हैं, किन्तु शिवशक्ति भेद से कुल ६४ होती हैं।

प्रत्येक किरण की पृथक्-पृथक् रूप से अधिष्ठातृ शक्तियाँ भी मानी जाती हैं।

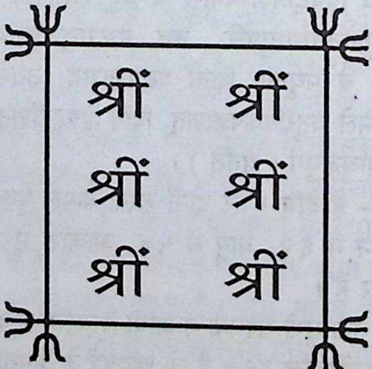

मन्त्रजप— एक हजार की संख्या में पैंतालिस दिनों तक जप करें।
यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु।
नैवेद्य— दूध-पायस।
लाभकारीफल— भीषण महामारी से निवारण।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

शरज्ज्योत्स्नाशुभ्रां शशियुतजटाजूटमुकुटां
वरत्रासत्राणस्फटिकघटि (ण) कापुस्तककराम्।
सकृन्न त्वां नत्वा कथमिव सतां सन्निदधते
मधुक्षीरद्राक्षामधुरिमधुरीणा भणितयः ।।१५।।

पदान्वय— शरज्ज्योत्स्नाशुभ्रां शशियुतजटाजूटमुकुटां वरत्रासत्राणस्फटिकघटिकापुस्तककरां त्वां सकृन्नत्वा सतां मधुक्षीरद्राक्षामधुरिमधुरीणाः भणितयः कथमिव न सन्निदधते ।।

श्लोकार्थ—शरत्पूर्णिमा की ज्योत्स्ना के समतुल्य श्वेतवर्णा, द्वितीया तिथि के चन्द्र से युक्त जटाजूट रूपी मुकुट मस्तक पर धारण किये हुए दो हाथों से भक्तों को भयमुक्त करने हेतु अभय एवं वरद मुद्रा धारण किये हुए और दो हाथों में स्फटिकमणि की माला तथा पुस्तक धारण किये हुए को जो प्राणी एक बार भी वंदन करने से वंचित रहता है वह किस भाँति सत्कवियों की-सी मधु, दूध तथा द्राक्षा (अंगूर) की मिठास से युक्त मधुर कविता करने में समर्थ हो सकता है?

व्याख्या— उक्त श्लोक में सात्त्विक भाव से परिपूर्ण कविता शक्ति के विकास का निरूपण किया गया है। यहां वाग्भव कूट की देवी क्रिया-शक्ति के ध्यान का वर्णन है। अर्थात् सारस्वतसिद्धि हेतु कुंडलिनी शक्ति को जागृत करने की ओर संकेत किया गया है। कुंडलिनी शक्ति के जागरण से उसके चार रूप प्रत्यक्ष होते हैं, जैसे— क्रियावती, कलावती, वर्णमयी और वेधमयी। इसके अगले दो श्लोकों में भी सारस्वतसिद्धि के प्रयोग का ध्यान वर्णित है। इस मंत्र में 'ऐं' बीज की आराधना करनी होती है ।।१५।।

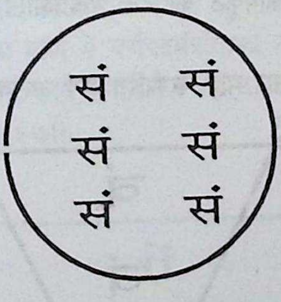

मन्त्रजप— एक सहस्र जप निरन्तर इकतालीस दिनों तक करें।
यन्त्रनिर्माण-सामग्री— शुद्ध जल या स्वर्णधातु।
नैवेद्य— त्रिमधु।
लाभकारीफल— ज्ञानप्राप्ति एवं काव्य-रचना में निपुणता।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

कवीन्द्राणां चेतःकमलवनबालातपरुचिम्
भजन्ते ये सन्तः कतिचिदरुणाभेव भवतीम् ।
विरिञ्चिप्रेयस्यास्तरुणतर शृङ्गार लहरी-
गभीराभिर्वाग्भिर्विदधति सतां (भां) रञ्जनमयी ।।१६।।

पदान्वय— कवीन्द्राणां चेतःकमलवनबालातपरुचिं अरुणाभेव भवतीं कतिचित् ये सन्तः भजन्ते, अमी सन्तः विरिञ्चिप्रेयस्याः तरुणतरशृङ्गारलहरीगभीराभिः वाग्भिः सतां रञ्जनं विदधति ।।

श्लोकार्थ— कवीन्द्रों के चित्तरूपी कमल-वन को विकसित करने के लिए उदयकालीन बालसूर्य के सदृश अरुणा रूपी आप को जो कोई संत पुरुष किंचित् भजन करते हैं, विधाता की प्रिया (सरस्वती) की तरुणतर शृंगारलहरी से निर्गत गहन कविताओं द्वारा सज्जन पुरुषों का मनोविनोद किया करते हैं।

व्याख्या— यहाँ रजोगुण से युक्त कवित्व-शक्ति के विकास का कथन किया गया है। तन्त्रग्रंथों में इन्हीं देवी के रूप का वर्णन निम्न प्रकार से पाया जाता है।

अरुणाख्यां भगवतीमरुणाभां विचिन्तयेत् ।
पाशाङ्कुशधरां देवीं धनुर्बाणधरां शिवाम् ।।
वरदाभयहस्तां च पुस्तकाक्षस्रगन्विताम् ।
अष्टबाहुत्रिनयनां खेलन्तीममृताम्बुधौ ।।
स करोत्येव शृङ्गाररसास्वादनलम्पटान् ।
सभासदस्सदा सर्वान् साधकेन्द्रस्सभास्थले ।।

उक्त श्लोक में कामकूट की देवी इच्छाशक्ति का ध्यान आनंदलहरी में बताया गया है।

साहित्य के अनुसार यहाँ परम्परित रूप अलंकार है।

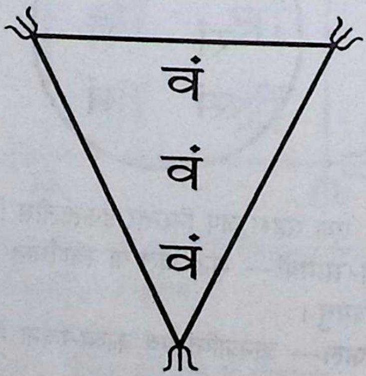

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मन्त्रजप— प्रतिदिन एक हजार जप लगातार इकतालीस दिनों तक करें।
यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु।
नैवेद्य— मधु।
लाभकारीफल— धार्मिक ग्रंथों एवं वैज्ञानिक सिद्धांतो की ज्ञानप्राप्ति।

सावित्रीभिर्वाचां शशिमणिशिलाभङ्गरुचिभि-
र्वशिन्याद्य:भिस्त्वाँ सह जननि सञ्चिन्तयति य:।
स कर्ता काव्यानां भवति महतां भङ्गिसुभगै (रुचिभि-)
र्वचोभिर्वाग्देवीवदनकमलामोदमधुरै: ।।१७।।

पदान्वय— वशिन्याद्याभि: सावित्रीभि: सह शशिमणिशिलाभङ्गरुचिभि: त्वां य: सञ्चिन्तयति (हे) जननि स महतां भङ्गिरुचिभि: वाग्देवीवदनकमलामोदमधुरै: वचोभि: काव्यानां कर्ता भवति:।

श्लोकार्थ— हे जननि ! वह मनुष्य जो वशिनी आदि सावित्रियों के साथ जो चंद्रकांतमणि की शिला तराशी हुई मूर्तियों की शोभा जैसी है, ऐसा ध्यान करता है वह उच्च श्रेणी के काव्यों की रचना करने में सक्षम हो जाता है। उसकी मनोहारी कविता वागीश्वरी के मुखारविन्द के माधुर्य से ओत-प्रोत हो जाती हैं।

व्याख्या— उक्त श्लोक के अंतर्गत सात्त्विक एवं राजसिक दोनों ही देवियों के ज्ञान-शक्ति का ध्यान बतलाया गया है। शक्तियाँ आठ प्रकार की कही गयी हैं, जैसे— वशिनी, कामेश्वरी, मोदिनी, विमला, अरुणा, जयिनी, सर्वेश्वरी और कौलिनी। अ क च ट त प भ श आदि बड़ी वाली समग्र मातृका शक्तियाँ चन्द्रकांत मणियों की भाँति जो सम्पूर्ण वैखरी वाणी का वर्णात्मक आधार स्वरूपा हैं। वे द्रवित होकर उस मणि में वर्णपदमंत्रविग्रहा नव रसों से समाविष्ट होकर वैखरी शक्ति को विकसित करने लगती हैं। यहाँ उच्च श्रेणी के काव्यों का तात्पर्य महाकाव्य रचना से है ।।१७।।

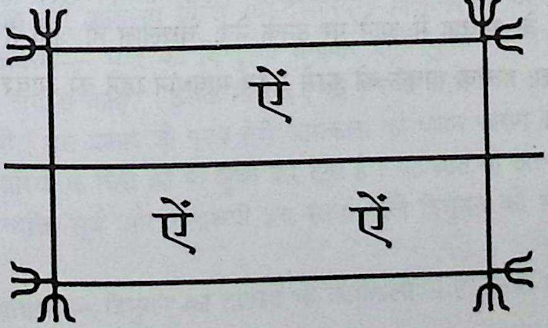

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मन्त्रजप— एक सहस्र जप प्रतिदिन इक्यानबे दिनों तक करें।
यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु। . .
नैवेद्य— मधु, केला, मिश्री।
लाभकारीफल— समस्त कलाओं एवं वैज्ञानिक सिद्धांतो का चहुँमुखी ज्ञान।

तनुच्छायाभिस्ते तरुणतरणिश्रीध (स) रणिभि-
र्दिवं सर्वामुर्वीमरुणिमनिमग्नां स्मरति यः।
भवन्त्यस्य त्रस्यद्वनहरिणशालीननयनाः
सहोर्वश्या वश्याः कतिकति न गीर्वाणगणिकाः ।।१८।।

पदान्वय— तरुणतरणिश्रीसरणिभिः ते तनुच्छायाभिः सर्वां दिवम् ऊर्वीं च अरुणिमनिमग्नां यः स्मरति अस्य त्रस्यद्वनहरिणशालीननयनाः गीर्वाणगणिकाः उर्वस्या सह कतिकति न वश्या भवन्ति?

श्लोकार्थ— तरुण सूर्य की कांति को धारण करने वाले शरीर के प्रतिबिम्ब से आकाश और समूची पृथ्वी को अपनी अरुणिमा में निमज्जित करती हुई तुम्हारा जो स्मरण करता है, भयभीत हुई वन की हरिणियों के समान चंचल नेत्रोंवाली उर्वशी सहित न जाने कितनी ही स्वर्गीय अप्सराएँ उसके वशीभूत हो जाती हैं।

व्याख्या— नीचे के श्लोक से भी इसी भाव की अभिव्यक्ति होती है—

यावकाब्धौ निमग्नां यो दिवं भूमिं विचिन्तयेत्।
तस्य सर्वा वशं याताः त्रैलोक्यवनिता द्रुतम् ॥

इस स्थान में ज्ञानीजनों की उस दिव्यदृष्टि का वर्णन किया गया है जो सचराचर जगत को ब्रह्ममय देखती है। यह वह मधुमती भूमिका है। जिसमें अप्सराएँ साधक को अपने मार्ग से विचलित कर उन्हें पथभ्रष्ट कर दिया करती हैं। उर्वशी, रम्भा आदि देवांगनाओं के पलक निर्निमेष खुले रहते हैं, परन्तु कामशक्ति के आवेश में आने पर उनके नेत्र, चंचलाक्ष हो जाते हैं।

अतः प्रत्येक साधक को इनसे सदैव सावधान रहने की आवश्यकता पड़ती है ॥१८॥

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

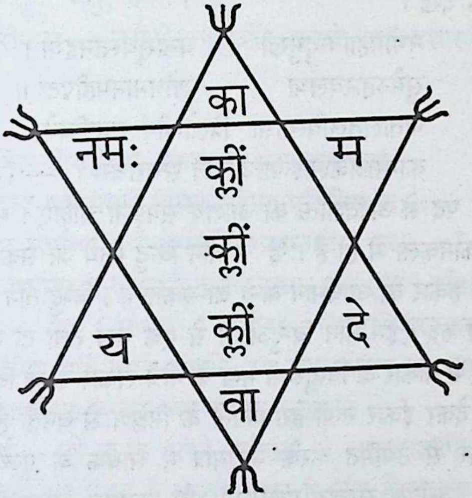

मन्त्रजप— प्रतिदिन एक सहस्त्र जप पैंतालिस दिनों तक करें।
यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु।
नैवेद्य— दूध, पायस, ताम्बूल।
लाभकारीफल— नारी-सम्मोहन की शक्ति।

मुखं विन्दुं कृत्वा कुचयुगमधस्तस्य तदधो
ह (का) रार्धं ध्यायेद्यो हरमहिषि ते मन्मथकलाम्।
स सद्यः संक्षोभं नयति वनिता इत्यतिलघु
त्रिलोकीमप्याशु भ्रमयति रवीन्दुस्तनयुगाम्॥१९॥

पदान्वय— हे हरमहिषि ! मुखं बिन्दुं कृत्वा, तस्याधः कुचयुगं (कृत्वा), तदधः हरार्धं (कृत्वा), तत्र ते मन्मथकलां यः ध्यायेत् सः सद्यः वनिताः संक्षोभं नयतीति यत् तत् अतिलघु किन्तु रवीन्दुस्तनयुगां त्रिलोकीमपि आशु भ्रमयति।

श्लोकर्थ— मुख को बिन्दुरूप बनाकर दोनों कुचों को उनके नीचे दो बिन्दु और लगाना चाहिए। उसके नीचे ह (का) र के आधे भाग का ध्यान करे। हे हरमहिषी ! इस प्रकार जो पुरुष तेरी कामकला का ध्यान धारण करता है, वह शीघ्र ही नारियों के चित्त को भी क्षुब्ध कर देता है। यह बात तो अत्यन्त साधारण है, ऐसा व्यक्ति सूर्य और चन्द्ररूपी द्वय स्तनों वाले त्रिभुवन को भी भ्रमित कर सकता है।

व्याख्या— त्रिभुवन का तात्पर्य भी कामकला से ही लिया गया है। नीचे

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

का एक श्लोक देखें।

नभोमहाबिन्दुमुखी चन्द्रसूर्यस्तनद्वया।
सुमेरुहारवलया शोभमानमहीपदा ॥
पातालतलविन्यासा त्रिलोकीयं तवाम्बिके।
कामराजकलारूपा जागर्ति सचराचरा। — (रुद्रयामल तन्त्र)

हरमहिषी पद से आदिशक्ति का आशय समझना चाहिए। मन्मथकला शब्द का तात्पर्य भी कामकला से ही है। 'ई' में तीन बिन्दु लिये जा सकते हैं। ईकार के नीचे के भाग को हकार का आर्धभाग माना जा सकता है। बिन्दु तीन कहे जाते हैं— ब्रह्मा, विष्णु एवं रुद्र। इन तीन बिन्दुओं में से एक मुख तथा दो स्तन के रूप में है। 'क्लीं' शब्द में ककार के बिन्दुरूपी मुख के नीचे लकार के दो बिन्दुओं को दोनों कुचों की उपमा देकर ईकार रूपी हरार्धांगिनी के मिश्रण से बनती है।

इस प्रकार से उपमित करके नारीमात्र में साधक के पूज्य मातृभाव को दिखाया गया है, क्योंकि सूर्यदेव प्राणरूपी और चन्द्रदेव अमृतरूपी दुग्धपान के द्वारा सम्पूर्ण जगत् का भरण-पोषण करते हैं। कहा गया है—

विद्याः समस्तास्तव देवि भेदाःस्त्रियः समस्ताः सक्ला जगत्सु। अर्थात् संसार की समस्त नारियाँ देवी स्वरूप ही होती हैं।

सूर्य को जगत् का प्राणरूप और चन्द्रमा को मनरूप माना गया है, जैसे— प्राणः प्रजानामुदेत्येषः सूर्यः। चन्द्रमा मनसो जातः।

हृदयस्थल प्राण का और आज्ञाचक्र मनरूपी चन्द्रमा का स्थान होता है। जो योगीजन सूर्य के अभिमुख होकर चन्द्रमा का पान करते हैं तथा दिव्यानन्द का रसास्वादन करते हैं, उन्हें कामवासना की आसक्ति ग्रस्त नहीं करती।

व्याकरण— त्रिलोकी— त्रयाणां लोकानां समाहारस्त्रिलोकी 'सङ्ख्यापूर्वो द्विगुः' इति द्विगुसमासः

'द्विगोश्च' इति ङीप्।

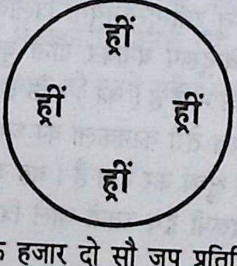

मन्त्रजप— एक हजार दो सौ जप प्रतिदिन पचीस दिनों तक करें।
यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

नैवेद्य— दूध, मधु, केला।

लाभकारीफल— नारियों, पशुओं, दानवों तथा प्रशासकों को मोहित करने की शक्ति।

किरन्तीमङ्गेभ्यः किरणनिकुरुम्बामृतरसं
हृदि त्वामाधत्ते हिमकरशिलामूर्तिमिव यः।
स सर्पाणां दर्पं शमयति शकुन्ताधिप इव
ज्वरप्लुष्टान् दृष्ट्या सुखयति सुधाऽऽधा (सा) रसिरया ।।२०।।

पदान्वय— यः (साधकः) अङ्गेभ्यः किरणनिकुरुम्बामृतरसं किरन्तीं हिमकरशिलामूर्तिमिव हृदि त्वाम् आधत्ते, सः शकुन्ताधिप इव दृष्ट्या सर्पाणां दर्पं शमयति। सुधाधारसिया दृष्ट्या ज्वरप्लुष्टान् सुखयति।

श्लोकार्थ— जो मानव अपने शरीरांगों से अमृतरसरूपी रश्मि-जल का विकास करती हुई तुझे हृदय में धारण करता है और तेरा चन्द्रकांत शिला की मूर्ति सदृश ध्यान अपने हृदय में करता है वह गरुड़ पक्षी के समान साँपों के मद का मर्दन कर देता है और अपनी सुधावर्षिणी नाड़ी के द्वारा दृष्टिनिक्षेप से ज्वरग्रस्त प्राणियों को सुख पहुँचाता है।

व्याख्या— गरुड़पुराण में कहा गया है—

दृष्ट्या सम्मोहयेन्नारीं दृष्ट्यैव हरते विषम्।
दृष्ट्या चातुर्थिकादींश्च ज्वरान् नाशयते क्षणात्॥

योगी की शाम्भवी मुद्रा में अचलीभूता दृष्टि, दर्शन मात्र से, आज्ञाचक्र की नाड़ी द्वारा कुंडलिनी से वमित गरलामृत का सिंचन कर मानवों के ज्वर का शमन कर देती है। शारीरिकताप के अतिरिक्त सांसारिकताप भी एक प्रकार का महाज्वर है जिसके त्रिताप (दैहिक, दैविक, भौतिक) से भी वह योगी शक्तिपातदीक्षा के बल पर विमुक्त कर देता है॥२०॥

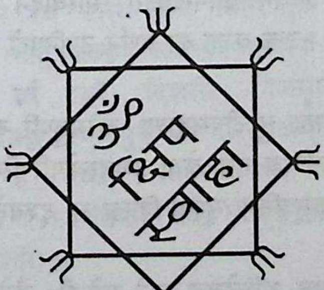

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मन्त्रजाप— प्रतिदिन दो हजार जप पचीस दिनों तक करें।

यन्त्रनिर्माण-सामग्री— विशुद्ध भस्म अथवा जल।

लाभकारीफल— विष के प्रभाव का विनष्टीकरण एवं विष से मुक्ति पाने की क्षमता।

तटिल्लेखातन्वीं तपनशशिवैश्वानरमयीं
निषण्णां षण्णामप्युपरि कमलानां तव कलाम्।
महापद्माटव्यां मृदितमलमायेन मनसा
महान्तः पश्यन्तो दधति परमाह्लादलहरीम्॥२१॥

पदान्वय— तटिल्लेखातन्वीं तपनशशिवैश्वानरमयीं निषण्णां षण्णां कमलानामप्युपरि महापद्माटव्यां निषण्णां तव कलां मृदितमलमायेन मनसा पश्यन्तो महान्तः परमाह्लादलहरीं दधति॥

श्लोकार्थ— महान् पुरुष तेरी विद्युत-रेखा जैसी क्षीण, सूर्य-चन्द्र और अग्नि की त्रिमयी कला को षट्कमलों के ऊपर कमलों के महावन में मलमाया से विशुद्ध अन्तःकरण द्वारा अवलोकन करते तथा परमानन्द की तरंग को धारण करते हैं।

व्याख्या— उक्त श्लोक में भीतरी आज्ञाचक्र के ऊपर मूर्धागत ज्योति-दर्शन का स्वरूप दर्शाया गया है। पहले के श्लोकों में कथित ध्यान, निम्नस्तर के हैं। यहाँ 'कला' शब्द का आशय चित्स्वरूपा शक्ति से है और महापद्माटवी का तात्पर्य सहस्रार से है।

षट्चक्र का भेदन करने के पश्चात जब कुंडलिनीशक्ति सहस्रार में उठ जाती है तब उसकी कला विद्युत के समान चमकीली रेखा के सदृश भासित होती है। वह कला, प्रकाश, उष्णता और प्राणदायिनीशक्ति देने वाले सूर्य, अमृतस्राव करने वाले चन्द्र और अग्नि— इन तीनों तेजों से संयुक्त होती है।

इस कला का अत्यन्त आनन्दकारी रसास्वादन केवल शुद्ध अन्तःकरण वाले ही कर सकते हैं। उक्त कला का वर्णन उपनिषदों में इस प्रकार से मिलता है—

शिखा तु दीपसङ्काशा तस्मिन्नुपरि वर्तते।
अर्धमात्रा तथा ज्ञेया प्रणवस्योपरि स्थिता॥
पद्मसूत्रनिभा सूक्ष्मा शिखा सा दृश्यते परा।

— ब्रह्मविद्योपनिषद्

षट्कमलों के छह अधिदेवता माने गये हैं, जैसे— मूलाधार के ब्रह्मा,

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

स्वाधिष्ठान के विष्णु, मणिपूर के रुद्र, अनाहत के ईश्वर, विशुद्ध के सदाशिव और आज्ञाचक्र के परशिव।

इन कमल-दलों की संख्या भी तत्त्वों की कला के अनुसार ही होती है। अग्नि की १०, सूर्य की १२ और चन्द्रमा की षोडश कलाएँ क्रमशः मणिपूर, अनाहत, और विशुद्ध के दलों के समान हैं। ब्रह्मा, विष्णु और रुद्रदेव की १०-१० कलाएँ हैं। ईश्वर की चार और सदाशिव की सोलह कलाएँ हैं। मूलाधार की चार, स्वाधिष्ठान की छह और आज्ञाचक्र की दो शिराओं को भी कला मान लिया जाय तो सम्पूर्ण योग एक सौ होता है। उक्त विवरण स्वामी विष्णुतीर्थ के मतानुसार है ॥२१॥

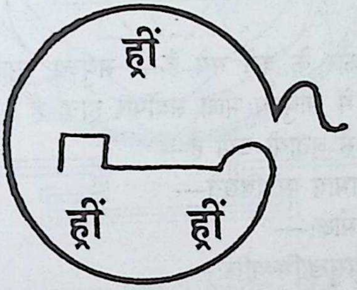

मन्त्रजप— नित्यप्रति एक सहस्र जप पैंतालिस दिनों तक करें।

यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्ण या चाँदी नामक धातु।

नैवेद्य— केला, मधु, गुड़।

लाभकारीफल— शत्रुता एवं क्रोध पर विजय पाने के अतिरिक्त सभी पर विजय प्राप्त करना।

भवानि त्वं दासे मयि वितर दृष्टिं सकरुणा-
मिति स्तोतुं वाञ्छन् कथयति भवानि त्वमिति यः।
तदेव त्वं तस्मै दिशसि निजसायुज्यपदवीं
मुकुन्दब्रह्मेन्द्रस्फुटमुकुटनीराजितपदाम्॥२२॥

पदान्वय— (हे) भवानि! त्वं दासे मयि सकरुणां दृष्टिं वितर स्तोतुं वाञ्छन् भवानि त्वमिति यः कथयति तस्मै तदैव त्वं मुकुन्दब्रह्मेन्द्रस्फुटमुकुटनीराजितपदां निजसायुज्यपदवीं दिशसि॥

श्लोकार्थ— हे भवानि! तू मुझ सेवक पर भी अपनी दयार्द्रदृष्टि डाल—

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

इस प्रकार की स्तुति करते समय कोई मोक्षार्थी 'भवानि त्वं' अर्थात् मैं तू हो जाऊँ, का उच्चारण करे तो तू उसी क्षण उसे अपना सायुज्यपद प्रदान कर डालती है।

वह पद ऐसा है जिसकी ब्रह्मा, विष्णु और देवराज इन्द्र भी अपने शिर के मुकुटों के प्रकाश से आरती किया करते हैं।

व्याख्या— उक्त श्लोक में भक्ति की श्रेष्ठता दिखलायी गयी है जिसके द्वारा भगवती के कृपाकटाक्ष मात्र से ही मोक्ष की तत्काल प्राप्ति हो जाती है। कहा गया है—

भक्त्या मामभिजानाति यावान्यश्चास्मि तत्त्वतः।
ततो मां तत्त्वतो ज्ञात्वा विशते तदनन्तरम्॥

— श्रीमद्भगवतगीता

मोक्ष चार प्रकार के कहे गये हैं— सयुज्य, सालोक्य, सामीप्य और सारूप्य। इन चारों में सायुज्य मोक्ष सर्वोपरि होता है। दर्शनशास्त्रों में इसकी श्रेष्ठता निम्न प्रकार से बतायी गयी है—

कर्मणामात्मलाभान्न परं विद्यते—	आपस्तम्बः
अविद्याध्वंसो मोक्षः—	शङ्करः
नित्यनिरतिशयसुखाभिव्यक्तिः—	मीमांसकाः
गुणपुरुषान्यताख्यातिः—	साङ्ख्याः
नित्ययोगशक्तिनिभालनानितरानन्दानुभूतिः—	पातञ्जलाः
आत्यन्तिकी दुःखनिवृत्तिः पुरुषस्य मोक्षः—	तार्किकाः
निर्विषयबुद्धिसन्तानधारावलोकनम्—	बौद्धाः
नित्योर्ध्वगमनम्—	जैनाः
मरणमेव मोक्षः—	चार्वाकाः

नित्यनादानुसन्धानेन निरन्तरोङ्कारशब्दोच्चारणान्नादंब्रह्मणि लयः— ब्रह्मवादिनः

परब्रह्म का ऐक्य तो कालोपरांत श्रवण, मनन तथा निदिध्यासन द्वारा होता है, परन्तु उक्त श्लोकानुसार जाने-अनजाने भगवती का स्तवन करते समय जो भक्त 'भवानित्वं' पद का केवल उच्चारण कर लेता है वह भगवती के अनुग्रह से सायुज्य मोक्षपद का अधिकारी बन जाता है ॥२२॥

व्याकरण— भवानि— इन्द्रवरुणभवशर्वरुद्र....................

इत्यादिना आनुक् ङीष् च

मयि— चतुर्थ्यर्थे सप्तमी

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

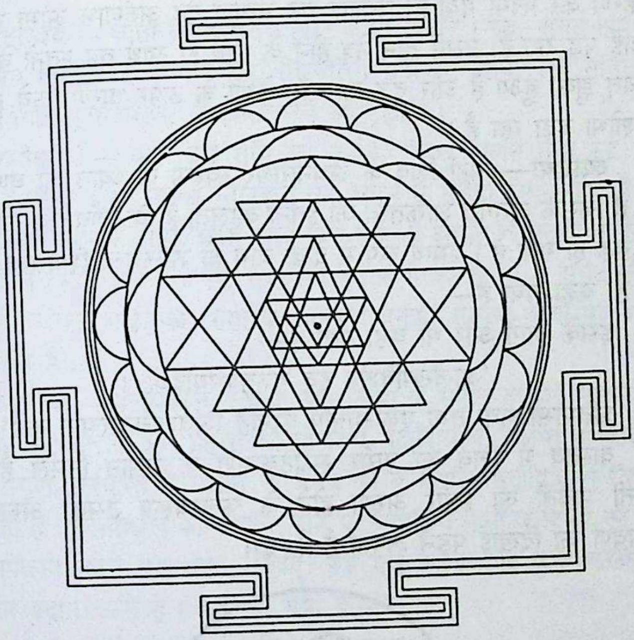

मन्त्रजप— एक सहस्र जप निरन्तर पैंतालिस दिनों तक करें।

यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णनिर्मित यंत्र को पवित्र स्थान में स्थापित कर पूजन-अर्चन करें।

नैवेद्य— मधु, त्रिमधु, दधि, दूध, चित्रान्न।

लाभकारीफल— समस्त अभिलाषाओं की पूर्ति, उन्नति तथा प्रभुत्व-शक्ति का विकास।

त्वया हृत्वा वामं वपुरपरितृप्तेन मनसा
शरीरार्द्धं शम्भोरपरमपि शङ्के हृतमभूत्।
यदेतत् (तथाहि) त्वद्रूपं सकलमरुणाभं त्रिनयनं
कुचाभ्यामानम्रं कुटिलशशिचूडालमुकुटम् ।।२३।।

पदान्वय— शम्भोर्वामं वपुः त्वया हृत्वा अपरितृप्तेन मनसा अपरमपि शरीरार्धं हृतमभूदिति शङ्के, यत् एतत् त्वद्रूपं सकलमरुणाभं त्रिनयनं कुचाभ्यामानम्रं कुटिलशशिचूडालमुकुटम्॥

श्लोकार्थ— क्या तेरा मन, शिव का वामांग अपहृत करके भी संतुष्ट नहीं हुआ ? मुझे तो इस बात का संदेह होता है कि उनके दूसरे आधेशरीर का

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

भी हरण कर लिया गया है। क्योंकि वह सम्पूर्ण देह अरुणाभ आभा से तेरा है दिखाई पड़ रहा है। उसमें तीन नेत्र होने के साथ ही साथ वह स्तनों के बोझ से किंचित् झुका हुआ है और दूज का चाँद केशों के ऊपर धारण किये हुए मुकुट की शोभा बढ़ा रहा है।

व्याख्या— यहाँ शिव के अर्धनारीश्वर स्वरूप के ध्यान का वर्णन किया गया है जिसके अंतर्गत शक्तितत्त्व की इतनी बहुलता है कि शिवतत्त्व को समझना ही दुरूह हो गया है। यथार्थ रूप में देखा जाय तो शक्तितत्त्व शिवतत्त्व से पृथक् नहीं है। कहा गया है—

इसके आगे और भी कहा गया है—

'आलेख्यविशेष इंव गजवृषभयोर्द्वयो: ।

प्रतिभासो यथा तथा एकस्मिन्नपि परमार्थे शिवशक्तिकल्पनां कुर्म' इति।

वास्तव में शिव का शरीर स्फटिकमणि के समान निर्मल है, किन्तु भगवती पार्वती का शरीर अरुण होने के फलस्वरूप उसकी अरुणाभा से अरुणवर्ण का दिखाई पड़ने लगता है ॥२३॥

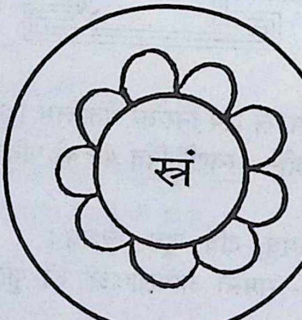

मन्त्रजप— तीन सहस्त्र जप तीस दिनों तक निरन्तर करें।

यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु।

नैवेद्य— दूध, पायस।

लाभकारीफल— ऋण एवं संकट से उद्धार।

जगत्सूते धाता हरिरवति रुद्रः क्षपयते
तिरस्कुर्वन्नेतत्स्वमपि वपुरीशः स्थगयति (स्थिरयति)।
सदा पूर्वः सर्वं तदिदमनुगृह्णाति च शिव-
स्त्वदाज्ञामालम्ब्य क्षणचलितयोर्भ्रूलतिकयोः ॥२४॥

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पदान्वय— धाता जगत् सूते । हरिः जगत् अवति । रुद्रः जगत् क्षपयते । ईशः एतत् तिरस्कुर्वन् स्वमपि वपुः तिरयति । सदापूर्वः शिवः सर्वं तदिदं तव क्षणचलितयोः भ्रूलतिकयोः आज्ञामालम्ब्य अनुगृह्णाति ।

श्लोकार्थ— ब्रह्मा इस सृष्टि का सर्जन, विष्णु पालन तथा रुद्र संहार करते हैं । परन्तु ईश्वर सबको तिरस्कृत कर अपने में सर्वदा स्थिर रहते हैं और शिव, जिनके नाम के आगे 'सदा' शब्द लगा हुआ है अर्थात् वे सदाशिव के नाम से संबोधित किये जाते हैं । ऐसे सदाशिव इन सभी को अपने में समेट लेते हैं अथवा तेरे चंचल भौंहों की आज्ञा का आलम्ब बनकर सम्पूर्ण जीवों पर अनुग्रह किया करते हैं ।

व्याख्या— प्रलयकाल में ब्रह्मा और विष्णु के सहित रुद्र भी महेश्वर तत्त्व में विलीन हो जाते हैं और महेश्वर भी बीजरूप सदाशिव में विलुप्त हो जाते हैं । परन्तु सम्पूर्ण प्रलयान्त के पश्चात् भी प्रभव की बीजशक्ति सदाशिव में विद्यमान रहा करती है । प्रलयकाल की समाप्ति होने पर सदाशिव मानो जगदम्बा की आज्ञा का अनुपालन करते हुए ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र एवं महेश्वर पर कृपा करके उन्हें नवजीवन प्रदान करते हैं । कहा भी गया है—

"सृष्टिस्थित्युपसंहारनिरोधानुग्रहात्मकम् ।
कल्पं पञ्चविधं यस्मात्तं नुमः शाश्वतं शिवम् ।। — शाम्भवदीपिका

अर्थात् भगवती ही सबकी आधीश्वरी हैं, क्योंकि प्रभव और प्रलय दोनों ही कार्य, शक्ति के हैं । शक्ति की प्रभुता इतनी अधिक है कि उससे विवश होकर सदाशिव सृष्टि-रचना के लिए बाध्य हो जाता है ।।२४।।

मन्त्रजप— प्रतिदिन एक हजार जप तीस दिनों तक करें ।

यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु ।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

नैवेद्य— मधु, ऊर्द, पूआ, तिल का आटा।
लाभकारीफल— समस्त विपदाओं का निवारण।

त्रयाणां देवानां त्रिगुणजनितानां तव शिवं
भवेत्पूजा पूजा तव चरणयोर्या विरचिता।
तथा हि त्वत्पादोद्वहनमणिपीठस्य निकटे
स्थिता ह्येते शश्वन्मुकुलितकरोत्तंसमुकुटाः ।।२५।।

पदान्वय— तव त्रिगुणजनितानां त्रयाणामपि देवानां तव चरणयोः या पूजा विरचिता भवेत् सैव पूजा तथा त्वत्पादोद्वहनमणिपीठस्य निकटे हि यस्मात् मुकुलितकरोत्तंसमुकुटाः शश्वदेते स्थिताः ।।

श्लोकार्थ— तेरे त्रिगुणात्मक गुणों से प्रादुर्भूत इन तीनों देवों (ब्रह्मा विष्णु, रुद्र) का तेरे चरण कमलों के पूजन से ही पूरी पूजा हो जाती है। अतः ये तीनों देव तेरे चरणों को धारण करने वाले मणिनिर्मित आसन के समीप अपने शिरोभूषण की शोभा बढ़ाने के लिए करबद्ध होकर खड़े रहते हैं।

व्याख्या— ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र और महेश्वर का पूजन अलग-अलग करना आवश्यक नहीं होता। केवल भगवती के पूजन-मात्र से ही सबका पूजन हो जाता है। पुराणों में कहा गया है—

"विष्णुपूजासहस्राणि शिवपूजाशतानि च।
अम्बिकाचरणार्चायाः कलां नार्हन्ति षोडशीम् ।।"

—देवीपुराण

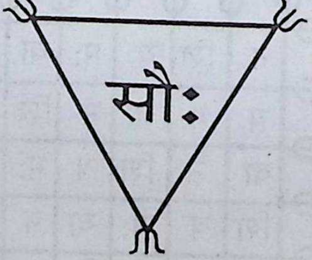

मन्त्रजप— प्रतिदिन एक हजार जप डेढ़ मास तक करें।
यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु।
नैवेद्य— मधु।
लाभकारीफल— व्यवसाय में उन्नतिबर्धक, उत्कृष्ट पद लाभ।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विरिञ्चिः पञ्चत्वं व्रजति हरिराप्नोति विरतिं
विनाशं कीनाशो भजति धनदो याति निधनम् ।
वितन्द्री माहेन्द्री विततिरपि संमीलित दृशा
महासंहारेऽस्मिन्विहरति सति त्वत्पतिरसौ ।।२६।।

पदान्वय— विरिञ्चः पञ्चत्वं व्रजति । हरिः विरतिम् आप्नोति । कीनाशः विनाशं भजति । धनदः निधनं याति । माहेन्द्री विततिरपि सम्मीलितदृशा वितन्द्री । अस्मिन् महासंहारे सति असौ त्वत्पतिः हरः विहरति ।।

श्लोकार्थ— हे सती ! सम्पूर्ण प्रलयकाल में ब्रह्मा पाँचवीं अवस्था को प्राप्त हो जाता अर्थात् वह भी मृत्यु की गोद में चला जाता है । विष्णुदेव विरत हो जाते हैं, यमराज का भी विनाश हो जाता है, यक्षपति कुबेर का भी निधन हो जाता है । जो कभी निद्रा के वशीभूत नहीं होता, वह सहस्रनेत्रवाला, निद्राजयी महेन्द्र भी अपनी आँखें मूँद लेता है, परन्तु तेरे पति शिव तो सदा विहार करते रहते है ।

व्याख्या— समस्त ब्रह्माण्ड के विघटन होने पर सभी अधिष्ठाता पुरुषों का संहार हो जाता है, परन्तु तुम्हारा पति तो उस समय भी विहरणशील बना रहता है । पातिव्रत्यधर्म की इतनी महिमा है कि उसका सौभाग्य, सदैव ही अखंड बना रहता है और उसका कोई अनिष्ट नहीं होता । शास्त्रों में कहा गया है—

सुतं पततं प्रसमीक्ष्य पावके न बोधयामापतिं पतिव्रता ।
अभूत्तदानिं व्रतभङ्गशङ्कया हुताशवश्चन्दनपङ्कशीतलः ।।

अतः प्रलयान्त में भी सदाशिव बने रहते हैं। सदाख्यतत्त्व में विश्व का बीज निहित रहता है क्योंकि बीज अक्षय होता है । वेदों का कथन है—

सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथा पूर्वमकल्पयद् दिवञ्च पृथ्वीं चान्तरिक्षमथो स्वः।

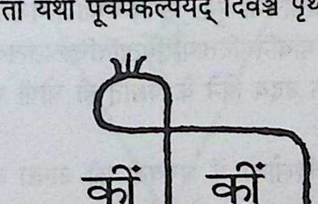

मन्त्रजप— नित्यप्रति एक सहस्र जप छह दिनों तक करें ।

यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु ।

नैवेद्य— गुड़, पायस ।

लाभकारीफल— शत्रुओं का विनाश ।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

जपो जल्पः शिल्पं सकलमपि मुद्राविरचनं
गतिः प्रादक्षिण्यं भ्रमणमशनाद्याहुतिविधिः ।
प्रणामः संवेशः सुखमखिलमात्मार्पणदशा
सपर्यापर्यास्तव भवतु यन्ते विलसितम् ।।२७।।

पदान्वय— आत्मार्पणदृशा जपः, जल्पः, सकलमपि शिल्पं मुद्राविरच[नं] गतिः प्रादाक्षिण्यभ्रमणम्, अशनादि आहुतिविधिः संवेशः प्रणामः अखिलं सुखं [यत्] यद्विलसितं तव सपर्यापर्यायः भवतु ॥

श्लोकार्थ— मन्त्रजाप के समान बोलना, समस्त मुद्राओं की विरचन[ा] के समान कर्मकांड, प्रदक्षिणा के समान गमनागमन, आहुति के सदृश भोजन-पान, प्रणाम के सदृश शयन और सभी सुखों के उपभोग में आत्मसमर्पण क[ी] दृष्टि अर्थात् मेरा जो कुछ भी विलास है, वह सब तेरे पूजन-पद्धति का ह[ी] एक क्रम है ।

व्याख्या— पूजन के तीन भेद बतलाये गये हैं, जैसे— अपरापूजा, पराऽपरा पूजा तथा परापूजा । किसी स्थान में मूर्ति, यन्त्र आदि को स्थापित क[र] बाह्यभावना से की गयी पूजा, अपरापूजा कही जाती है ।

सूर्यमण्डलमध्यस्थां देवीं त्रिपुरसुन्दरीम् ।
पाशाङ्कुशधनुर्बाणान् धारयन्तीं प्रपूजयेत् ।।

आंतरिक भावना से युक्त होकर ध्यानादिकर्म करना ही पराऽपरा पूजा है तथा अद्वैत ब्रह्म की भावना परापूजा कही जाती है ।

इसी प्रकार के पूजन को अल्पसार और महासार भी कहा गया है, जैसे—

अल्पसारा फल्गुप्रयोजना पुनः कर्मबन्धमालिन्यजननी ।
महासारा तु मनोभावनिवेदितापरिमिताविच्छिन्नतत्स्वरूपभावना पूजा ।

ऋतम्भरा प्रज्ञा के उदय होने के पश्चात् ही योगी महासार या परापूजा का अधिकार पाता है ।

अब तक के पूर्वश्लोकों में भगवती की अपरा और पराऽपरा पूजा का वर्णन दिया गया था। परन्तु उक्त श्लोक में परापूजा का कथन है। इसके अतिरि[क्त] यहाँ ज्ञानयोग का लक्षण भी वर्णित है ।

स्फोटात्मक शब्दों के सार्थक और निरर्थक क्रम को ही 'जल्प' नाम दिया गया है । वर्णमाला के वर्णों के उच्चारण को एकाक्षरीमंत्र का गया है । सभी पद मन्त्रवत् हैं । अतः सभी जल्प, जाप के समान है ।

कहा गया है कि तेरी कृपा से ही स्वेच्छया जल्प होता है, जैसे—

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

गेहं नाकति गर्वितः प्रणमति स्त्रीसङ्गमो मोक्षति
द्वेषी मित्रति पातकं सुकृतति क्ष्मावल्लभो दासति।
मृत्युर्वैद्यति दूषणं गुणयति त्वत्पादसंसेवनात्
तां वन्दे भवभीतिभञ्जनकरीं गौरीं महासुन्दरीम्॥

विभिन्न कर्मों के प्रतिपादन हेतु जो भी क्रियाएँ हाथों द्वारा होती हैं, वे सभी पूजन-काल में हाथों के अभिनयों से की गयी मुद्राओं के सदृश हैं। भगवती सर्वत्र विद्यमान हैं।

अतः चलते-फिरते समय भी उनकी प्रदक्षिण होती रहती है। हवनीय अग्नि का कार्य भी देवता को हव्य पदार्थ पहुँचाना होता है। खाने-पीने की क्रिया भी आहुति देने के समान है। भगवान् श्रीकृष्ण ने अर्जुन से कहा था कि मैं ही सभी प्राणियों में जठराग्नि के रूप में अवस्थित रहकर खाद्य पदार्थ को पचाता हूँ जैसा कि नीचे के श्लोक से स्पष्ट है—

अहं वैश्वानरो भूत्वा प्राणिनां देहमाश्रितः।
प्राणापानसमायुक्तः पचाम्यन्नं चतुर्विधम्॥ गीता १५.१४

या देवी सर्वभूतेषु क्षुधारूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमोनमः॥ दुर्गा सप्तशती ५.२६

सोते-जागते शरीर का भूशायी होना भी भगवती को साष्टांग प्रणाम के तुल्य है। अतः हमारी प्रत्येक चेष्टाओं द्वारा भगवती का पूजन ही हुआ करता है॥२७॥

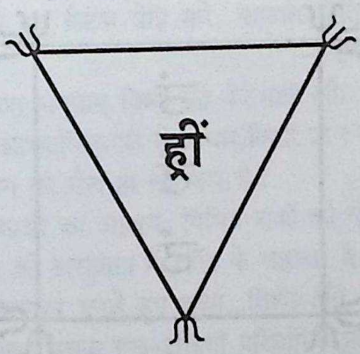

मन्त्रजप— लगातार डेढ़ मासतक प्रतिदिन एक हजार जप करें।
यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु।
नैवेद्य— गुड़, पायस।
लाभकारीफल— आत्मबोध एवं ईश्वर-साक्षात्कार।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सुधामप्यास्वाद्य प्रतिभयजरामृत्युहरिणीं
विपद्यन्ते विण्व विधिशतमखाद्या दिविषदः ।
करालं यत्क्ष्वेलं (डं) कवलितवतः कालकलना
न शम्भोस्तन्मूलं तव जननि ताटङ्कमहिमा ।।२८।।

पदान्वय— विश्वे विधिशतमखाद्याः दिविपदः प्रतिभयजरामृत्युहरिणीं सुधा[m]आस्वाद्यापि विपद्यन्ते। करालं क्ष्वेलं कवलितवतः शम्भोः कालकलना नास्ति[ति] यत् तन्मूलं तव ताटङ्कमहिमा ।।

श्लोकार्थ— सृष्टिकर्ता ब्रह्मा और शतक्रतु अर्थात् इंद्रादि देवगण जरामृत्[यु] की अपहारिका सुधा-पान करके भी जगत् में काल के भक्ष्य बन जाते हैं और हलाहल विषपायी शिव पर कला का कोई वश नहीं चलता। इसका कारण क्या है ? हे जननि ! यह तेरे कर्णफूलों की महत्ता है।

व्याख्या— ताटंक एक विशेष प्रकार का कर्णभूषण होता है। यह सौभाग्य का सूचक माना जाता है। विधवा स्त्रियाँ इसे धारण नहीं करतीं। रामचरित मानस में कहा गया है—

छत्र मुकुट ताटंक सब, हते एक ही बान।

भगवान् शंभु विषपान के फलस्वरूप भी अमरत्व को प्राप्त हैं परन्तु देवगण सुधा-पान करने पर भी मृत्यु की गोद में समा जाते हैं। इसका एकमात्र कारण भगवती का अखंड सौभाग्य है। यह भगवती के सतीत्व की महिमा है।

व्याकरण— कलना— न्यासश्रन्यो युजिति युच्। "अजाद्यतष्टाप्"

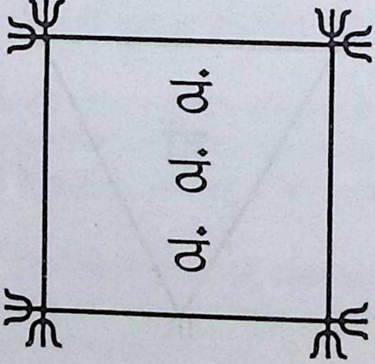

मन्त्रजप— एक हजार जप प्रतिदिन पैंतालिस दिनों तक करें।
यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु।
नैवेद्य— दूध, पायस, त्रिमधु, ताम्बूल।
लाभकारीफल— अलक्षित मृत्यु से रक्षण।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

किरीटं वैरिञ्चं परिहर पुरः कैटभभिदः
कठोरे कोटीरे स्खलसि जहि जम्भारिमुकुटम् ।
प्रणम्रेष्वेतेषु प्रसभमुपयातस्य भवनं
भवस्याभ्युत्थाने तव परिजनोक्तिर्विजयते ।।२९।।

पदान्वय— एतेषु प्रणम्रेशु (सत्सु) भवनमुपयातस्य भवस्य प्रसभं तवाभ्युत्थानं परिजनोक्तिर्विजयते— पुरः वैरिञ्चं किरीटं परिहर, कैटभभिदः कठोरे कोटीरे स्खलसि, जम्भारिमुकुटं जहि ।

श्लोकार्थ— अपने आवासस्थल में शिवशंकर के अकस्मात् आगमन पर उनके स्वागतार्थ खड़े होकर आगे बढ़ने पर तेरी परिचारिकाओं की इन उक्तियों की जय हो— सामने ब्रह्मा के मुकुट से सावधान रहें, कैटभदैत्य के वध करने वाले विष्णु के कठोर मुकुट से बचें नहीं तो ठोकर लग जायेगी, जम्भारि इन्द्रदेव के मुकुट से भी बचकर आगे बढ़े ।

व्याख्या— जिस समय भगवान विष्णु क्षीरसागर में शयन कर रहे थे उस समय उनकी देह की मैल से दो दानव, मधु और कैटभ नाम के उत्पन्न हो गये थे। वे दैत्य उत्पन्न होते ही ब्रह्माजी को खाने के लिए उनकी ओर दौड़ पड़े । भयातुर होकर ब्रह्मा जी ने भगवती की प्रार्थना की । महामाया भगवती ने भगवान् को योगनिद्रा से जागृत कर दिया । तब विष्णु ने उन दोनों राक्षसों का वधकर ब्रह्माजी को निर्भय बना दिया । दशानन-पत्नी मन्दोदरी ने भी रावण को समझते हुए कहा था—

अति बल मधु कैटभ जेहि मारे, महावीर दिति-सुत संहारे ॥

—रामचरति मानस, लंकाकाण्ड

इसी कारण भगवान् विष्णु को कैटभारि और मधुसूदन की संज्ञा भी दी जाती है । यदि आध्यात्मिकपक्ष से विचार किया जाय तो मन की भ्रांति ही कैटभ रूप है और कान की मैल ही कीटरूप है ।

परिचारिकाओं का आशय, विभिन्न चक्रों की योगिनियों से है । जागने पर शंकर से मिलन की उत्सुकता में शक्ति के सहस्रार में आरोहण करते समय नीचे के चक्रों पर नमस्कार करते हुए ब्रह्मा, विष्णु और इन्द्र के मुकुटों से आघात लगने की आशंका सूचक उक्त-उक्तियाँ परिचारिकाओं की स्वाभाविक ही लगती हैं । मूलाधार में ब्रह्मा का तथा स्वाधिष्ठान में विष्णु का स्थान माना गया है । पृथ्वीतत्त्व का अधिपति इन्द्र है । कुंडलिनी तक पहुँचने के निमित्त साधक की शक्ति का ठहराव होना आवश्यक है ॥२९॥

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

व्याकरण— जहि— यहाँ जहि धातुशब्द 'जहीहि' अर्थ में प्रयुक्त किया गया है। इसमें धातु 'हा' है इसमें हन् नहीं है और इसे लोट् लकार, मध्यमपुरुष एकवचन का रूप नहीं समझना चाहिए अन्यथा इसका अर्थ गलत हो जाएगा।

साहित्य के अनुसार यहाँ उदात्त अलंकार का वर्णन है।।

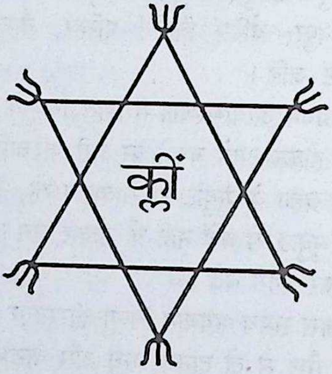

मन्त्रजप— प्रतिदिन एक हजार जप पैंतालिस दिनों तक करें।

यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु।

नैवेद्य— मधु, ऊर्द, पूआ।

लाभकारीफल— दुर्जन शत्रुओं का सज्जन मित्रों में परिवर्तन।

स्वदेहोद्भूताभिर्घृणिभिरणिमाऽऽद्याभिरभितो
निषेव्ये नित्ये त्वामहमिति सदा भावयति यः।
किमाश्चर्यं तस्य त्रिनयनसमृद्धिं तृणयतो
महासंवर्ताग्निर्विरचयति नीराजनविधिम्।।३०।।

पदान्वय— हे निषेव्ये ! हे नित्ये ! स्वदेहोद्भूताभि: घृणिभि: अणिमाद्याभि: अभितोऽवस्थिताभि: परिवृतां त्वां य: साधक: अहमिति सदा भावयति, त्रिनयनसमृद्धिं तृणयत: तस्य महासंवर्ताग्नि: नीराजनविधिं विरचयतीत्यत्र किमाश्चर्यम् ?

श्लोकार्थ— हे सेवनीय, वरेण्य, नित्य, अपने शरीर से निकलने वाली अणिमादिक सिद्धियों रूपी रश्मियों से आवेष्टित तेरा भक्त जो 'त्वां अहम्' अर्थात् तुझे अपना ही स्वरूप समझकर अपने मन में सदैव भावना किया करता है, त्रिनयन के ऐश्वर्य को भी तिनके के बराबर तुच्छ समझने वाले उस साधक की संवर्ताग्नि भी आरती किया करता है तो इसमें आश्चर्य की क्या बात है।

व्याख्या— ब्रह्मवेत्ता ब्रह्म के ही समान हो जाता है। वह प्रलयकाल में भी क्षुब्ध नहीं होता। संवर्ताग्नि का प्रज्वलित होना ही मानो उसकी आरती उतारने

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

के समान है । ऐसा योगी समस्त अभिलाषओं का पूर्ण करने वाला, षोडशारचक्रस्थ कामाकर्षिणी आदि षोडश नित्य कलाओं को विजित कर, नित्य मोक्षपदप्राप्ति की ही आकांक्षा रखता है । भगवती की उपासना का फल ब्रह्मात्मैक्य की अपरोक्ष अनुभूति का उदय होना ही माना जाता है ।

सिद्धियाँ— आठ प्रकार की कही गयी है— १. अणिमा २. गरिमा ३. लघिमा, ४. महिमा ५. ईशित्व ६. वशित्व ७. प्राप्ति और ८. प्राकाम्य ।

१. अणिमा सिद्धि— मानसिक संकल्पमात्र से ही परमाणु के समान शरीर का सूक्ष्म हो जाना ।

लंकानगरी में प्रवेश करते समय हनुमान जी ने इस सिद्धि का उपयोग किया था, जैसे—

मशक समान रूप कपिधरी, लंकहि चले सुमरि नरहरि ।

— रामचरितमानस, सुन्दरकाण्ड

२. गरिमा सिद्धि— हलका होने पर भी पर्वत से भी भारी हो जाना जैसे—

रामप्रताप सुमिरि कपि कोपा, सभा माँझ प्रणकरि पद रोपा ।
जौ मम चरण सकहिं शठ टारी, फिरौ राम सीता मैं हारी ॥

—रामचरित मानस, लंकाकाण्ड

३. लघिमा सिद्धि— अत्यन्त भारी होते हुए भी हलका हो जाना । योगिराज श्रीकृष्ण ने अपनी कनिष्ठा ऊँगली पर विशाल गोवर्धन पर्वत को उठा लिया था ।

४. महिमा सिद्धि— इच्छा मात्र से ही शरीर का विस्तार कर लेना । हनुमानजी ने इसी सिद्धि के बल पर अपने शरीर का विस्तार कर अशोकवाटिका में सीताजी को दिखलाया था, जैसे— रामचरितमानस, सुन्दरकाण्ड

५. ईशिता सिद्धि— समस्त भौतिक पदार्थों के निर्माण और विनाश करने का सामर्थ्य ।

६. वशित्व सिद्धि— किसी को अपने वशीभूत करने की क्षमता ही वाशित्व सिद्धि है ।

७. प्राप्ति सिद्धि— इच्छित वस्तु की तत्क्षण उपलब्धि होना।

८. प्राकाम्य सिद्धि— इच्छामात्र से ही कामना की पूर्ति होना।

व्याकरण— त्रिनयन— त्रीणि, नयनानि मार्गाः प्रापकाः सूर्यचन्द्राग्निरूपाः यस्य दर्शनायेति स त्रिनयनः ।

यद्वा— इडापिङ्गलासुषुम्नामार्गाः त्रयः तद्दर्शने उपाया इति त्रिनयनः सदशिवः।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

यद्वा— त्रीणि नयनानि चक्षूंषि यस्य स त्रिनयनः।

मन्त्रजप— नित्यप्रति एक सहस्र जप छियानबे दिनों तक करें।

यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु।

नैवेद्य— मधु, त्रिमधु, ताम्बूल।

लाभकारीफल— आधिदैविक (दैवी कारणों से होने वाली) शक्तियों की उपलब्धि।

चतुःषष्ठ्यातन्त्रैः सकलमतिसन्धाय भुवनं
स्थितस्तत्तत्सिद्धिं प्रसवपरतन्त्रैः पशुपतिः।
पुनस्त्वन्निर्बन्धादखिलपुरुषार्थैकघटना-
स्वतन्त्रं ते तन्त्रं क्षितितलमवातीतरदिदम्॥३१॥

पदान्वय— पशुपतिः सकलं भुवनं तत्तत्सिद्धिप्रसवपरतन्त्रैः चतुष्षष्ट्या तन्त्रैः अतिसन्धाय स्थितः। पुनस्त्वन्निर्बन्धाद् अखिलपुरुषार्थैकघटनास्वतन्त्रं ते तन्त्रमिदं क्षितितलमवातीतरत्॥

श्लोकार्थ— पशुपति शिव ने चौंसठ प्रकार के तंत्रों से समस्त भुवनों को परिपूरित कर दिया। वे सभी तन्त्र, अपनी उन सिद्धियों के दाता हैं जो प्रत्येक का अपना अलग-अलग विषय है। तदनन्तर वे तेरे आग्रह से सम्पूर्ण पुरुषार्थों के प्रदाता, तेरे स्वतन्त्र तंत्र को पृथ्वी पर ले आए।

व्याख्या— उक्त श्लोक में चौंसठतंत्रों का विवरण है, परन्तु यह पुस्तक उन चौंसठतंत्रों से पृथक् है क्योंकि चौंसठतंत्र मुक्ति के साथ त्रिवर्गफल के परिणामस्वरूप अन्य तंत्रों की अपेक्षा नहीं रखते। इन तंत्रों में श्रीविद्या के रहस्य का निरूपण किया गया है। यह विद्या ही ब्रह्मविद्या है। इस विषय पर लिखित कलानिधि, चन्द्रकला, ज्योतिष्मती, भुवनेश्वरी, कुलेश्वरी, कुलार्णव, दुर्वासामत तथा बार्हस्पत्यमुख्य ग्रंथ हैं।

६४ तन्त्र— (१) मायाप्रपञ्चनिर्माणफलदायि महामायाशम्बरतन्त्र।
(२) योगिनीनां जालदर्शनं योगिनी जालशम्बरम्

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

(३) तत्त्वानां पृथ्वीव्यादीनाम् अन्योन्यं प्रतिभासनम् यस्मिन् तत् शाम्बरम् । **अष्टकत्रयम्**

८ भैरवाष्टकम्—

सिद्धभैरव १, वटुकभैरव २, कङ्कालभैरव ३, कालभैरव ४, कालाग्निभैरव ५, योगिनीभैरव ६, महाभैरव ७, शक्तिभैरव ८

८ बहुरूपाष्टकम्— शक्ति से समुद्भूतरूप आठ हैं।

(१) ब्राह्मी, (२) माहेश्वरी, (३) कौमारी, (४) वैष्णवी, (५) वाराही, (६) माहेन्द्री, (७) चामुण्डा, (८) शिवदूती।

८ यमलाष्टकम्— कामसिद्धान्त कामसिद्धान्त निरूपित तन्त्र आठ यमल हैं।

(१) ब्रह्मयामल (२) विष्णुयामल
(३) रुद्रयामल (४) लक्ष्मीयामल
(५) उमायामल (६) स्कन्दयामल
(७) गणेशयामल (८) जयद्रथयामल

२८. षोडशनित्यप्रतिपादनं विद्याचन्द्रज्ञानम्।
२९. समुद्रयानोपायहेतुः मालिनीविद्या
३०. जाग्रतामपि निद्राहेतुः **महासम्मोहनम्**
३१. वामजुष्ट।
३२. महादेव।
३३. वातुल।
३४. वातुलोत्तर।
३५. कामिक।
३६. षट्कमलभेदसहस्रारं हृद्भेदतन्त्रम्
३७. तन्त्रभेद
३८. गुह्यतन्त्र
३९. चन्द्रकलानां वादः प्रतिपादनं यस्मिन् तन्त्रे **कलावादं** वात्स्यायनादिकम्।
४०. वर्णोत्कर्षविधिर्यत्र प्रवर्तते तत् **कलासारम्**।
४१. गुटिकासिद्धिहेतुः कुण्डिकामतम्।
४२. मतोत्तर।
४३. वीणाख्य— सम्भोगयक्षिणीतन्त्रम्।
४४. त्रोतल— गुटिकाञ्जनपादुकासिद्धिः।
४५. त्रोतलोत्तर— चतुष्षष्टिसहस्रसङ्ख्याक्यक्षिणीनां दर्शनम्।
४६. पञ्चामृत— आयुर्दीर्घविज्ञानम्।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मारणहेतुयुक्ततन्त्राणि

४७. रूपभेद
४८. भूतडामर
४९. कुलसार
५०. कुलोड्डीश
५१. कुलचूडामणि

कापालिकसिद्धान्तैकदेशिदिगम्बरमतम्

५२. सार्धज्ञानोत्तर
५३. महाकालीमत
५४. अरवेश
५५. मोदिनी ईशा
५६. विकुण्ठेश्वर

क्षपणाकानां तन्त्राणि

५७. पूर्वआम्नाय
५८. पश्चिमआम्नाय
५९. दक्षिणआम्नाय
६०. उत्तरआम्नाय
६१. निरुत्तरआम्नाय
६२. विमल
६३. विमलोत्तर
६४. देवीमत

अवातीतरत्— ''णिश्रिद्रुस्रुभ्यः कर्तरि चङ्'' इति चङि कृते, ''चङि'' इति द्वित्वे च कृते ''सन्वल्लधुनि चङ्परेऽनग्लोपे'' इति सन्वद्भावे कृते, ''सन्यतः'' इतीत्वे ''दीर्घोः'' इति दीर्घे च कृते, ''इतश्च'' इति तिप इकारलोपे अतीतरदिति लुङि रूपम् ।

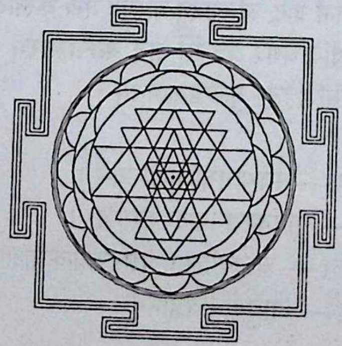

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मन्त्रजप— प्रतिदिन एक हजार जप डेढ़ मास तक करें।

यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु।

नैवेद्य— मधु, दूध।

लाभकारीफल— समस्त जनों को विमुग्ध करने एवं चहुँमुखी उन्नतिकारक शक्ति।

शिवः शक्तिः कामः क्षितिरथ रविः शीतकिरणः
स्मरो हंसः शक्रस्तदनु च परामारहरयः।
अमी हल्लेखाभिस्तिसृभिरवसानेषु घटिता
भजन्ते वर्णास्ते तव जननि नामावयवताम्॥३२॥

पदान्वय— (हे जननि !) शिवः शक्तिः कामः क्षितिः अथ रविः शीतकिरणः स्मरः हंसः शक्रः तदनु च परामारहरयः इत्येते वर्णाः तिसृभिः हल्लेखाभिः अवसानेषु घटिताः ते वर्णाः तव नामावयवतां भजन्ते॥

श्लोकार्थ— (हे जननि !) शिव (क) शक्ति (ए) काम (इ) क्षिति (पृथ्वी) (ई) रवि, (ह) शीतकिरण (चन्द्रमा) (स), स्मर (कामदेव) (क), हंस (ह), शक्र (ल), तदनंतर परा (शक्ति) मार (कामदेव), हरि— इन तीनों के अन्त में तीन हल्लेख ह्रीं जोड़कर तेरे नाम के अंग-स्वरूप अक्षरों का साधकगण स्मरण करते है।

व्याख्या— यह हादि लोपामुद्रा (अगस्त्य-पत्नी) का मंत्र कहा गया है। इसमें पन्द्रह अक्षर होते हैं। षोडशी का सोलहवाँ अक्षर गुरु से समझना चाहिए।

दर्शाद्याः पूर्णिमान्ताश्च कलाः पञ्चदशैव तु।
षोडशी तु कला ज्ञेया सच्चिदानन्दरूपिणी॥

पन्द्रह कलाओं के नाम इस प्रकार है—

दर्शा, दृष्टा, दर्शता, विश्वरूपा, सुदर्शना, आप्यायमाना, आप्यायमाना, आप्याया, सूनृता, इरा, आपूर्यमाणा, आपूर्यमाणा, पूरयन्ती, पूर्णा, पौर्णमासी।

मन्त्र के चार पाद हैं। पहला तीन पाद— वाग्भवकूट, कामकला कूट और शक्तिकूट के नाम से जाने जाते हैं। चतुर्थ पाद श्रीकूट है। प्रथम तीन पादों को अग्नि, सूर्य और चन्द्र, रुद्र, विष्णु तथा ब्रह्मा की क्रमशः ज्ञानशक्ति, क्रियाशक्ति और इच्छाशक्ति; जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्ति अवस्था के अनुरूप विश्व, तैजस और प्राज्ञ; सत्त्व, रजस् और तमस् का गुण समझना चाहिए। चौथा पाद तुरीयपाद होता। बाह्यउपासना के निमित्त ऋषि, छन्द, देवता, विनियोग आदि की आवश्यकता पड़ती है परन्तु अन्तर्याग में केवल आत्मतत्त्व पर चिंतन करने का लक्ष्य प्रमुख

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

होता है ।.

शिव, शक्ति, काम और क्षिति— इन्हें आग्नेय खण्ड कहते हैं। रवि, शीत किरण, स्मर, हंस और शक्र— सौर खण्ड कहे जाते हैं। पर, मार तथा हर— ये सौम्य खण्ड हैं।

तुरीयमेकाक्षर— चन्द्रकला नामक खंड है । कहा गया है—

'त्रिखण्डो मातृकामन्त्रः सोमसूर्यानलात्मकः ।'

इस चन्द्रकला खंड का ज्ञान गुरु के मार्गदर्शन द्वारा करना चाहिए।

सोलहवीं कला के अधीनस्थ होकर ही दूसरी कलाएँ घटती-बढ़ती रहती हैं। इस कला में वृद्धि एवं क्षय होता रहता है । अतः इस विद्या को श्रीविद्या के नाम से जाना जाता है । कृष्ण तथा शुल्क पक्ष की सभी तिथियाँ, पूर्णिमा तथा अमावस्या के सहित चंद्रमा की षोडश कलाएँ कही जाती हैं और कृष्णपक्ष आने पर सूर्य में ही अस्त हो जाया करती हैं ।

ज्योतिःशास्त्र में भी इसका कथन किया गया है, जैसे—

प्रतिपन्नाम विज्ञेया चन्द्रस्य प्रथमा कला ।
द्वितीयाद्या द्वितीयाद्याः पक्षयोश्शुक्लकृष्णयोः ।।

अमावस्या के दिन पूर्णिमा की कला अस्त हो जाने के पश्चात् जो चन्द्रकला शेष रहती है वही सोलहवीं नित्यकला कही जाती है । चन्द्रमा का वही वास्तविक प्रतिबिम्ब प्रत्येक कलाओं में सूर्य के प्रकाश से वृद्धि एवं ह्रास के रूप में चमकती रहती हैं ।

षोडश कलाओं के नाम इस प्रकार वर्णित हैं—

त्रिपुरसुन्दरी कला, कामेश्वरी कला, भगमालिनी कला, नित्यक्लिन्ना कला, भेरुण्डाख्या कला, वह्निवासिमी कला, महाव्रजेश्वरी या महाविद्येश्वरी कला, रौद्रीकला, त्वरिता कला, कुलसुन्दरी कला, नीलपताका कला, विजया कला, सर्वमङ्गला कला, ज्वाला कला, मालिनी कला, चिद्रूपा कला ।

षोडशी कला की उपमा वेदों में मधुकरी से दी गयी है, जैसे—

इयं वाव सरघा ।
तस्या अग्निरेव सारघं मधु ।
ता मधुकृतेः।
मधुवृषा

मधुमक्षिका को सरघा के नाम से जाना जाता है । ये मक्षिकाएँ रात्रि में अमृत का निर्माण करती हैं । अतः श्रीविद्या के साधक भी शुक्लपक्षीय रात्रियों में ही कुंडलिनी की जागृति किया करते हैं ।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

कृष्णपक्षीय दिनों के नाम इस प्रकार हैं—

प्रस्तुतं विष्टुतं संस्तुतं कल्याणं विश्वरूपम्। शुक्रम् अमृतं तेजस्वि तेजः समिद्धम्। अरुणं भानुमत् मरीचिमत् अभितपत् तपस्वत्।

शुक्लपक्षीय दिनों के नाम ये हैं—

संज्ञानं विज्ञानं प्रज्ञानं जानद अभिजनत्। सङ्कल्पमानं प्रकल्पमानम् उपकल्पमानम् उपक्लृप्तम्। क्लृप्तम् श्रयो वसीव आयत् सम्भूतं भूतम्॥

सहस्रार में आरोहण करते समय कुंडलिनी मानस चंद्रमंडल में सूराख बना देती है जिसके परिणाम स्वरूप वहाँ पर चंद्रमा की समस्त कलाएँ अमृतस्राव के कारण नित्य चमका करती हैं। अतः इसी कारण इसे नित्या कहा जाता है। पुनः ये कलाएँ विशुद्धचक्र पर उतरकर उसकी सोलह पंखुड़ियों पर प्रकाशित हो जाती हैं। मानस चंद्रमंडल का वैन्दव स्थान कहा जाता है। यह विशुद्ध चितिशक्ति की आनंदमयी कला का स्थान होता है जिसे महात्रिपुरसुन्दरी या श्री के नाम से संबोधित किया जाता है ॥३२॥

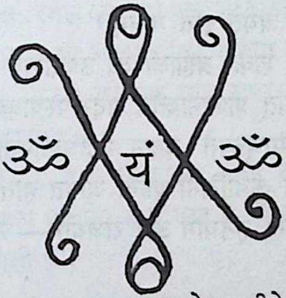

मन्त्रजप— प्रतिदिन एक हजार जप डेढ़ महीने तक करें।

यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु।

नैवेद्य— दधि, अन्न, ऊर्द, पूआ।

लाभकारीफल— समस्त विज्ञानों का ज्ञान एवं व्यवसाय में सफलता।

स्मरं योनिं लक्ष्मीं त्रितयमिदमादौ तव मनो-
र्निधायैके नित्ये निरवधिमहाभोगरसिकाः।
भजन्ति त्वां चिन्तामणिगुणनिबद्धाक्षव (र) लयाः
शिवाऽग्नौ जुह्वन्तः सुरभिघृतधाराऽऽहुतिशतैः ॥३३॥

पदान्वय— (हे नित्ये !) तव मनोः आदौ स्मरं योनिं लक्ष्मीम् इदं त्रितयं निधाय निरवधि महाभोगरसिकाः एके चिन्तामणिगुणनिबद्धाक्षवलयाः शिवाग्नौ त्वां सुरभिघृतधाराहुतिशतैः जुह्वन्तः भजन्ति॥

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

श्लोकार्थ— (हे नित्ये !) स्मर (कामदेव क्लीँ), योनि (ह्रीँ) अ
लक्ष्मी (श्रीँ) इन तीनों को तेरे मंत्र के आदि (वर्णों के स्थान) पर स्थापित क
निरवधि महाभोग के रसिकजन तेरे कुछैक भक्त चिन्तामणियों की पिरोयी
रुद्राक्ष की माला पर तेरा स्मरण करते हैं और शिवा अग्नि—(कुण्डलिनी मुख
हवन कुंड में सुरभि (गौ) सहस्रार के घृत (अमृत) की शतधाराओं
आहुतियाँ प्रदान करते हैं।

व्याख्या— यह कादि मूल विद्या का मंत्र है। इसमें भी पंचदशी का
देखने को मिलता है।

'एके' पद के प्रयोग से ऐसा जान पड़ता है कि अन्य मतावलंबी साधक
असीम भोगों की अभिलाषा से सकाम भाव में अनुष्ठान करते हैं। वे इसी मंत्र
आराधना करते हैं और जपान्त में आहुति भी देते हैं, परन्तु भगवत्पाद शंकराच
आनन्दलहरी के बत्तीसवें श्लोक के आराधक थे, क्योंकि वे एक संन्यासी थे अ
उन्होंने अपनी समस्त आकांक्षाओं का संन्यास (परित्याग) कर दिया था।

मन्त्र— 'मननात् त्रायते इति मन्त्रम्।'

आशुतोष भगवान शंकर ब्रह्माजी को उपदेशित करते हैं—

मननात् प्राणानाच्चैव मद्रूपस्यावबोधनात्।
मन्त्रमित्युच्यते ब्रह्मन् मदधिष्ठानतोपि वा ॥

अर्थात् मंत्रजाप से कुंडालिनी शक्ति जागृत होती है। शक्ति के जागृत
जाने पर मंत्रयोग, लययोग, हठयोग और राजयोग— ये चारों ही विकसित हो
हैं— योगशिखोपनिषद

इसी उपनिषद् में आगे और भी कहा गया है—

मन्त्रो लयो हठो राजयोगोऽन्तर्भूमिका क्रमात्।
एक एव चतुर्धायं महायोगोऽभिधीयते ॥

माला— अक्षमालोपनिषद् में माला की संस्कार विधि का वर्णन इस प्र
किया गया है— सर्वप्रथम माला को गंध, द्रव्य और पंचगव्य से स्नान कराक
अष्टगंध से लेपित कर, अक्षत-पुष्पादि से पूजा करके 'अ' वर्ण से लेकर 'क्ष' व
तक मंत्रों की भावना करते हुए प्रतिष्ठा करनी चाहिए ॥३३॥

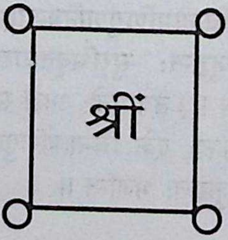

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मन्त्रजप— प्रतिदिन एक सहस्र जप पैंतालिस दिनों तक करें।
यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु
नैवेद्य— मूँग और मधु।
लाभकारीफल— धन-धान्य में वृद्धि।

शरीरं त्वं शम्भोः शशिमिहिरवक्षोरुहयुगं
तवात्मानं मन्ये भगवति नवा (भवा) त्मानमनघम्।
अतः शेषः शेषीत्ययमुभयसाधारणतया
स्थितः सम्बन्धो वां समरसपरानन्दपरयोः ।।३४।।

पदान्वय— (हे भगवति !) शशिमिहिरवक्षोरुहयुगं शरीरं शम्भोस्त्वमेव । तवात्मानमनवं नवात्मानं मन्ये। अत: शेष: शेषी इत्ययं सम्बन्ध: समरसपरानन्दपरयो: वाम् उभयसाधारणतया स्थित: ॥

श्लोकार्थ— (हे भगवती !) मैं ऐसी परिकल्पना करता हूँ कि तू ही शिव का शरीर है जिसके वक्षः स्थल पर सूर्य-चन्द्ररूपी स्तन द्वय उठे हुए हैं और तेरी आत्मा सारे भाव (जगत्) की आत्मा शंकर अथवा नवात्मा शंकर है। अतः तुम दोनों में पराशक्ति और आनन्द की एक साथ समरसता होने के फलस्वरूप शेष तथा शेषीवत् संबंध स्थापित है।

व्याख्या— वैदिक तथा पौराणिक उक्ति के अनुसार सूर्य, चन्द्र को भगवान के विराट स्वरूप का नेत्र कहा गया है, परन्तु यहाँ उन्हें प्रकृति के दोनों उरोजों से उपमा दी गयी है।

कहा गया है—

सूर्यचन्द्रौ स्तनौ देव्याः तावेव नयने स्मृतौ।
उभौ ताटङ्कयुगलमित्येषा वैदिकी श्रुतिः ॥

सम्पूर्ण विश्व को सूर्य द्वारा प्राणदायिनी शक्ति तथा चन्द्र से सोमरस की उपलब्धि होती है आध्यात्मिक दृष्टि से भी सूर्य हत्प्रदेश तथा चन्द्र मस्तिष्क में निवसित होकर प्राणियों का रक्षण करते है।

यहाँ पर शिव तथा शक्ति का संबंध आधार तथा आधेय के रूप में दर्शाया गया है। यदि 'पर' पद को शिव मान लिया जाय तो 'आनन्द' पद को शक्ति का ही रूप जानना चाहिए। दोनों में ही समरसता का भाव उसी प्रकार निहित है जिस प्रकार शर्करा और उसके मीठेपन में होता है ॥३४॥

भगवति— उत्पत्त्यादिवेदनं भगः तद्वती भगवती।

उत्पत्तिं च विनाशं च भूतावावागतिं गतिम्।
वेत्ति विद्यामविद्यां च स वाच्यो भगवानिति ॥

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

'नवात्म' शब्द का अर्थ शंकर है शिव, शक्ति तथा श्रीचक्र ये तीनों ही नव व्यूहों से युक्त हैं। इन तीनों के व्यूहात्मक स्वरूप निम्नलिखित प्रकार से हैं—

शिव के व्यूह—

कालव्यूह— निमेषादिकल्पान्तावच्छिन्नकालसमुदाय: कालव्यूह: ।

कुलव्यूह— नीलादिरूपव्यूह: ।

नामव्यूह— संज्ञास्कन्ध: ।

ज्ञानव्यूह— विज्ञानस्कन्ध: ।

चित्तव्यूह— अहङ्कारपञ्चकस्कन्ध: ।

नादव्यूह— रोगच्छाकृतिप्रयत्नस्कन्ध: ।

बिन्दुव्यूह— षट्चक्रसङ्घ: ।

कलाव्यूह— पञ्चाशत्कलानां वर्णात्मिकानां सङ्घ: ।

जीवव्यूह— भोक्तृस्कन्ध: ।

शक्ति के व्यूह—

वामा, ज्येष्ठा, रौद्री, अम्बिका, इच्छा, ज्ञान, क्रिया, शान्ति और परा।

श्रीचक्र के व्यूह— ४ श्रीकण्ठ और ५ शिवयुवतियाँ।

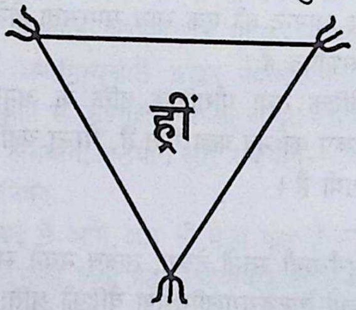

मन्त्रजप— एक हजार जप नित्यप्रति पैंतालिस दिनों तक करें।

यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु।

नैवेद्य— मधु।

लाभकारीफल— प्रज्ञाशक्ति-वर्धन।

मनस्त्वं व्योमस्त्वं मरुदसिसारथिरसि
त्वमापस्त्वं भूमिस्त्वयि परिणतायां नहि परम्।
त्वमेव स्वात्मानं परिणमयितुं विश्ववपुषा
चिदानन्दाकारं शिवयुवति भावेन विभृषे ।।३५।।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पदान्वय— (हे शिवयुवति !) मनस्त्वं व्योम स्त्वं मरुदसि मरुत्सारथिरसि त्वमापस्त्वं भूमिः। त्वयि परिणतायां परं न हि। त्वमेव स्वात्मानं विश्ववपुषा परिणमयितुं भावेन चिदानन्दाकारं बिभृषे।

श्लोकार्थ— (हे शिवयुवति !) तू मन है, तू आकश है, तू वायु है तथा वायु जिसका सारथि है— वह अग्नि भी तू ही है। तू जल है, तू भूमि है, तेरे अतिरिक्त अन्य कुछ भी नहीं है। तूने ही स्वयं को परिणत करने हेतु चिदानन्दाकार को विराट् शरीर के द्वारा प्रत्यक्ष किया है।

व्याख्या— मन, आकाश, वायु, अग्नि, जल तथा पृथ्वी— ये सब सत् शक्ति के विकार हैं। इनके द्वारा आज्ञा, विशुद्ध, अनाहत, हत, मणिपूर, स्वाधिष्ठान तथा आधार-चक्रों से संबंधित तत्त्वों के अधिदेवताओं को इंगित किया गया है।

ब्रह्म ही सत् स्वरूप है। उसके संबंध में कहा गया है—

'एकोऽस्मि बहु स्यां प्रजायेय।'

सृष्टि-उत्पत्ति के पूर्व यह एक ही अद्वितीय था। तत्पश्चात् वह स्वयं ही तेज, जल, अन्नादि अनेक रूपों में बदल गया। इसकी अद्वितीयता के फलस्वरूप अन्य कुछ भी नहीं था।

पंचमहाभूत, पंचतन्मात्राएं, पंचकर्मेंद्रियाँ, पंचज्ञानेन्द्रियाँ एवं मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार का अन्तःकरण चतुष्टय ये सभी सत् शक्ति के ही परिणाम हैं जो चितिशक्ति के प्रकाश से चेतन और अचेतन के रूप में परिलक्षित होते हैं। इच्छा, ज्ञान और क्रियाशक्ति के भेदानुसार वह पराशक्ति तीन रूपों में दिखाई देती है—

परास्य शक्तिर्विविधैव श्रूयते स्वाभाविकी ज्ञानबलक्रिया च॥

—श्वेताश्वतरोपनिषद्

'त्वयि परिणतायाम्' इस उक्ति के द्वारा निर्विकाररहित परिणाम बतलाया गया है। कहा गया है—

शृणु देविमहाज्ञानं सर्वज्ञानोत्तमं प्रिये।
येन विज्ञानमात्रेण भवाब्धौ न निमज्जति॥

अर्थात् हे देवि ! सभी ज्ञानों में सर्वोत्तम महाज्ञान मैं तुम्हें बता रहा हूँ जिसे तुम श्रवण करो। इस विज्ञान को जान लेने पर कोई प्राणी इस भवसागर में नहीं पड़ता।

आगे और भी कहा गया है—

त्रिपुरा परमा शक्तिराद्या जाता महेश्वरि।
स्थूलसूक्ष्मविभागेन त्रैलोक्योत्पत्तिमातृका॥

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

कवलीकृतनिश्शेषतत्त्वग्रामस्वरूपिणी ।
यस्यां परिणतायां तु न किञ्चित्परमिष्यते ॥

व्याकरण— शिवयुवति— युवतिशब्दात् 'सर्वतोऽक्तिन्नर्थादित्येके' इति ङीप् । त्यास्सम्बुद्धिः ।

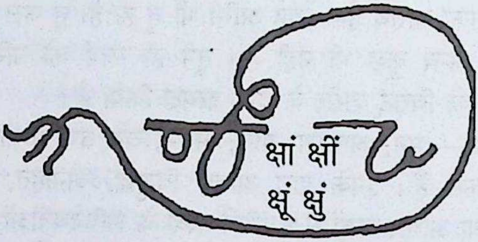

मन्त्रजप— प्रतिदिन एक हजार जप निरन्तर डेढ़ मास तक करें ।
यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु । (विशेष— हर्रे का सेवन)
नैवेद्य— मधु, दूध, पायस ।
लाभकारीफल— क्षयरोग से मुक्ति ।

तवाज्ञाचक्रस्थं तपनशशिकोटिद्युतिधरं
परं शम्भुं वन्दे परिमिलितपार्श्वं परचिता ।
यमाराध्यन् भक्त्या रविशशिशुचीनामविषये
निरालोके लोके निवसति हि भालोकभुवने ।।३६।।

पदान्वय— (हे भगवति !) तवाज्ञाचक्रस्थं तपनशशिकोटिद्युतिधरं परं शम्भुं परचिता परिमिलितपार्श्वं वन्दे । यं भक्त्या आराध्यन् रविशशिशुचीनाम् अविषये निरालोके भालोकभुवने निवसति हि ॥

श्लोकार्थ— तेरे आज्ञाचक्र में अवस्थित करोड़ो सूर्य-चन्द्र के तेज से समन्वित परशिव की मैं वन्दना करता हूँ जिसका वाम भाग पराचिति से एकीभूत है । जो व्यक्ति भक्तिभाव से उसकी उपासना करते हैं वे उससे देदीप्यमान लोक में निवसित होते हैं । जो सूर्य, चन्द्र और अग्नि के ग्रहण का विषय नहीं है या समस्त आतंकों से रहित है अथवा सूर्य, चन्द्र और अग्नि का विषय न होने के फलस्वरूप उनके प्रकाश से आलोकित नहीं है ।

व्याख्या— अखिल ब्रह्माण्ड और पिण्ड— दोनों भगवती के देहान्तर्गत ही हैं । ब्रह्मांडरूपी विराट शरीर में आज्ञाचक्र या अन्य चक्रों को स्थिर करना असंभव है । काल्पनिक मूर्ति के ध्यान में भी चक्रों की कल्पना किये जाने पर

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

साधक को अपने ही आज्ञाचक्र में ध्यान करने के लिए विवश होना पड़ेगा।

उक्त श्लोक में 'तव' पद प्रयुक्त होने का आशय यह भी हो सकता है कि साधक को अपना शरीराभिमान परित्यक्त कर स्थूल और सूक्ष्म शरीर को भगवती का ही स्वरूप जानना चाहिए।

सुषुम्नानाड़ी में अवस्थित सभी चक्र चितिशक्ति के विभिन्न केन्द्र स्थल होने के परिणाम स्वरूप भगवती के ही चक्र माने जाते हैं।

कहा गया है—

सुषुम्नायै कुण्डलिन्यै सुधायै चन्द्रमण्डलात्।
मनोन्मन्यै नमस्तुभ्यं महाशक्त्यै चिदात्मने ॥

—योगशिखोपनिषद् ६.३

ब्रह्मलोक स्वयं अपने ही प्रकाश से प्रकाशित रहता है। वहाँ सूर्य, चन्द्र और अग्नि की गतिशीलता नहीं रहती। इसके संबंध में उपनिषदों ने कहा है—

न तत्र सूर्यो भाति न चन्द्रतारकं
नेमा विद्युतो भान्ति कुतोऽयमग्निः।
तमेव भान्तमनुभाति सर्वं
तस्य भासा सर्वमिदं विभाति ॥ मुण्डकोपनिषद् २.२.१०

सहस्रार परमज्योति का स्थान है। वह तीनों से ऊपर स्थित है। उस स्थान में पहुँचकर साधक सांसारिक आवागमन से मुक्त हो जाता है।

मन्त्र दो प्रकार के बतलाये गये हैं, जैसे—

'परचिदम्बपादं परशम्भुनाथपदम्'— इति मन्त्रद्वयम्। अर्थात् एक परचिदम्बपाद और दूसरा परशम्भुनाथपाद।

मन की चौंसठ रश्मियों में से अर्धांश परशम्भु की और अर्धांश पराचिति की किरणों से आशय है ॥३६॥

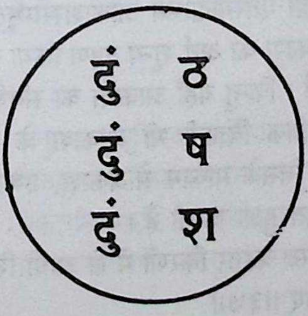

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मन्त्रजप— एक हजार जप प्रतिदिन डेढ़ महीने तक करें।
यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु।
नैवेद्य— मधु, ऊर्द का पूआ।
लाभकारीफल— सम्पूर्ण विपत्तियों का निवारण।

विशुद्धौ ते शुद्धस्फटिकविशदं व्योमजनकं
शिवं सेवे देवीमपि शिवसमानव्यवसिताम्।
ययोः कान्त्या यान्त्याः शशिकिरणसारूप्यसरणे-
विधूतान्तर्ध्वान्ता विलसति चकोरीव जगती ।।३७।।

पदान्वय— (हे भगवति !) ते विशुद्धौ शुद्धस्फटिकविशदं व्योमजन[कं] शिवं शिवसमानव्यवसितां देवीमपि सेवे, ययोः यान्त्याः शशिकिरणासारूप्यसर[णे] कान्त्यास्सकाशात् जगती विधूतान्तर्ध्वान्ता चकोरीव विलसति।

श्लोकार्थ— तेरे विशुद्ध चक्र में आकाशतत्त्व के जनक, शुद्ध स्फटि[क] मणि के समान स्वच्छ शिव की और शिव के तुल्य सुव्यवसित देवी की भी सेवा करता हूँ। जिन दोनों की चंद्रमा के किरणों के समान दीप्ति से जग[त्] अंधकार विहीन हो गया है, चकोरी की भाँतिप्राह्लादित होता है।

व्याख्या— कहा गया है—

त्वामाश्रिता महाभागाः प्राप्नुवन्त्यचिरेण माम्।
केवलं त्वामनादृत्य मां भजन्तो विचेतनाः।
नार्हन्ति मम सायुज्यं ब्रह्मकल्पशतैरपि॥
विशुद्धचक्रमोक्षप्रदा कुण्डलिनी शक्तिः स्वपिति।
सा कुण्डलिनी कण्ठोद्र्ध्वभागे सुप्ता चेद्योगिनां मुक्तये भवति।
—शाण्डिल्योपनिषद् १.[...]

विशुद्ध चक्र को आकाश का स्थान बतलाया गया है। श्रुति का कहना है—

"तस्माद्वा एतस्मादात्मन आकाशस्सम्भूतः।"

समान्यतया आकाश का अर्थ शून्य ग्रहण किया जाता है अर्थात् नभमण्डल बिलकुल रिक्त स्थान है। किन्तु यहाँ आकाश का संबंध भावात्मक तत्त्व से मान[ा] गया है। पाश्चात्य भौतिक विज्ञानी भी आकाश के स्थान पर एक तत्त्व का अस्तित्व स्वीकारते हैं जिसके माध्यम से प्रकाश, उष्णता, विद्युत तथा चुंबकीय किरणें पृथ्वी पर प्रसरित हुआ करती हैं।

आकाशस्थ समस्त बहत्तर किरणों में से आधी शिव की तथा आधी किरणें शक्ति की जाननी चाहिए ॥३७॥

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

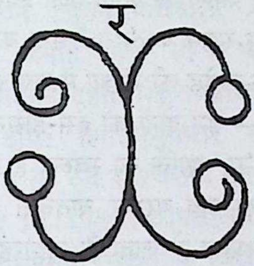

मन्त्रजप— पाँच सहस्र की संख्या में पैंतालिस दिनों तक जप करें।

यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु।

नैवेद्य— गुड़ पायस, नारीयल, केला।

लाभकारीफल— अमांगलिक प्रभाव डालने वाले मनुष्यों या पदार्थों से सुरक्षा।

समुन्मीलत्संवित्कमलमकरन्दैकरसिकं
भजे हंसद्वन्द्वं किमपि महतां मानसचरम्।
यदालापादष्टादशगुणितविद्यापरिणति-
र्यदादत्ते दोषाद्गुणमखिलमद्भ्यः पय इव ।।३८।।

पदान्वय— (हे भगवति !) समुन्मीलत्संवित्कमलमकरन्दैकरसिकं महतां मानसचरं किमपि हंसद्वन्द्वं भजे, यदालापात् अष्टादशगुणितविद्यापरिणतिः, यद् दोषात् अखिलं गुणम् अद्भ्यः पय इव आदत्ते ।।

श्लोकार्थ— हत्प्रदेश में खिले हुए संवित् कमलपुष्प से निर्गत होने वाले पराग के एकमात्र प्रेमी उस किसी (विलक्षण) हंसों के जोड़े का मैं स्मरण करता हूँ जो महान् पुरुषों के मनरूपी मानससरोवर में विहार करता है, जिसके वार्तालाप का सुफल अट्ठारह विद्याओं की व्याख्या है तथा जो दोषों से सम्पूर्ण गुण को इस भाँति निकाल लेता है जिस प्रकार जल मिलाये गये दूध से केवल दूध को बाहर कर लेता है।

कहा गया है—

अनुपममनुभूतिस्वात्मसंवेद्यमाद्यं
विततसकलविद्यालापमन्योन्यमुख्यम्।
सकलनिगमसारं सोऽहमोङ्कारगम्यं
हृदयकमलमध्ये हंसयुग्मं नमामि ।।

—योगानुशासन

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

व्याख्या— संवित् कमल का स्थान वक्ष: स्थल में है। इसी को आत्मा का स्थान कहा जाता है। इस स्थान पर 'हंस:' मन्त्र का जप होता है।

'हंस:' मंत्र का एक करोड़ की संख्या में जप करने पर यह कमल विकसित होता है। 'हं' और 'स:'— इन दोनों को हंस-हंसिनी का युगल कहा जाता है। 'हं' शब्द पुमान् है और 'स:' शक्ति का स्वरूप है।

हंस पक्षी का जोड़ा जब परस्पर बातचीत करता है तो योगिजनों को अट्ठारह विद्याओं का ज्ञान प्राप्त हो जाता है। अट्ठारह प्रकार की विद्याओं के नाम इस प्रकार से कथित है—

शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, ज्योतिष, छन्द, चारों वेद, दोनों मीमांसा, दर्शन, न्याय, पुराण, आयुर्वेद, धनुर्वेद, नीतिशास्त्र, गांधर्वविद्या एवं धर्मशास्त्र।

हंसों का जोड़ा दीपशिखा के समान है। नारायणोपनिषद्, खण्ड १३ में कहा गया है—

तस्य (हृदयस्य) मध्ये वह्निशिखा अजीवोद्ध्र्वा व्यवस्थिता:। नीलतोयदमध्यस्था विद्युल्लेखेव भास्वरा ।। नीवारशूकवत्तन्वी पीता भास्वत्यणूपमा। तस्या: शिखायां मध्ये च परमात्मा व्यवस्थित:। स ब्रह्मा स शिव: स हरि: सेन्द्र: सोऽक्षर: परम: स्वराट् ।।

—नारायणोपनिषद्

मनोमयोऽयं पुरुषो भा: सत्यस्तस्मिन्नन्तर्हृदये यथा व्रीहिर्वा यवो वा स एव सर्वस्येशान: सर्वस्याधिपति: सर्वमिदं प्रशास्ति यदिदं किञ्च ।।३८।।

—बृहदारण्यक उपनिषद्

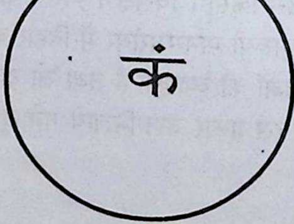

मन्त्रजप— प्रतिदिन एक हजार जप पैतालिस दिनों तक करें।
यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु।
नैवेद्य— ऊर्द का ११ पूआ, पान, नारीयल, केला।
लाभकारीफल— बाल्यावस्था में विपत्तियों से परिरक्षण।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

तव स्वाधिष्ठानं हुतवहमधिष्ठाय निरतं
तमीडे संवर्त जनति महतीं तां च समयाम् ।
यदालोके लोकान् दहति महति क्रोधकलिते
दयार्द्रा या दृष्टिः शिशिरमुपचारं रचयति ।।३९।।

पदान्वय— (हे जननि !) तव स्वाधिष्ठाने हुतवहं संवर्तमधिष्ठाय निरतं तम् ईडे, समयां तां महतीं च ईडे । महति क्रोधकलिते यदालोके लोकान् दहति सति या दयार्द्रा दृष्टिः शिशिरमुपचारं रचयति सा त्वदीया दृष्टिरिति शेषः ॥

श्लोकार्थ— (हे जनति !) तेरे स्वाधिष्ठानचक्र में अग्नितत्व को अधिष्ठान (प्रभाव) में रखने के लिए जो संवर्ताग्नि रहता है, उसके तथा उस समया देवी का मैं स्तवन करता हूँ। जिस क्षण संवर्ताग्नि कुपित होकर त्रैलोक्य को दग्ध करने लगता है उस क्षण देवी की दयार्द्र दृष्टि ही उस जलन का उपचार करती है ।

व्याख्या— कुंडलिनी शक्ति के जागृत होने का फल समाधिस्थ होना है । योगी पुरुष प्रतिप्रसव क्रम का सहारा लेकर ही षट्चक्र का भेदन करता है तथा पंचमहाभूतों पर विजय पाता है । सृष्टिक्रम में प्रभवाभिमुख होकर ही शक्ति विविध प्रकार की रचना करने लगती है, मानो वह करुणार्द्र दृष्टि से संवर्ताग्नि को शीतल करके लोकानुग्रह का कार्य करती है ।

इस लयक्रम के प्रखर हो जाने पर शरीरनाश होने की संभावना बनी रहती है, परन्तु प्रायः ऐसा नहीं होता । शरीर ही भोग और मोक्ष का एकमात्र साधन है। क्योंकि शास्त्रों में भी कहा गया है—

"शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम् ।"

अतः जबतक जीवन्मुक्ति की अवस्था प्राप्त नहीं हो जाती तब तक शरीर का रक्षण करना परम कर्तव्य माना जाता है ।

स्वाधिष्ठानचक्र में संवर्ताग्नि शिवरूप है और समया देवी जल की शिवात्मिका शक्ति । मणिपूर में मेघेश्वर पर्जन्य जल की शिवात्मिका शक्ति है और सौदामिनी अग्नि की शक्त्यात्मिका शक्ति ।

कुंडलिनी, हंस, बिन्दु तथा चितिशक्ति— ये सब एक ही शक्ति के विभिन्न रूप माने गये हैं ॥३९॥

कहा भी गया है—

पिण्डं कुण्डलिनी शक्तिः पदं हंसः प्रकीर्तितः ।
रूपं बिन्दुरिति ख्यातं रूपातीतस्तु चिन्मयः ॥

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ठं	पं	पः
षं	सं	

मन्त्रजप— प्रतिदिन एक माला (१०८ बार) जप बारह दिनों तक करें।
यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु।
नैवेद्य— दूध, दूध पायस, मधु।
लाभकारीफल— दुःस्वप्नों का शमन।

तडित्वन्तं शक्त्या तिमिरपरिपन्थस्फुरणया
स्फुरन्नानारत्ना भरणपरिणद्धेन्द्रधनुषम्।
तव (तमः) श्यामं मेघं कमपि मणिपूरैकशरणं
निषेवे वर्षन्तं हरमिहिरतप्तं त्रिभुवनम्॥४०॥

पदान्वय— (हे भगवति !) तव मणिपूरैकशरणं तिमिरपरिपन्थिस्फुरणया शक्त्या तडित्त्वन्तं स्फुरन्नानारत्नाभरणपरिणद्धेन्द्रधनुषं श्यामं हरमिहिरतप्तं त्रिभुवनं वर्षन्तं कमपि मेघं निषेवे।

श्लोकार्थ— तेरे मणिपूर के शरणागत हुए श्याम मेघों में रूपधारक 'कं' जल की भी मैं सेवा करता हूँ, जिसमें तिमिर (अंधकार) की प्रतिद्वन्द्विता करने वाली बिजली की चमक, आभूषणों में जटित विविध मणियों की चमक के समान इन्द्रधनुषी रूप धारण किये हुए हैं तथा जो अग्नि और सूर्य के परिताप से तप्त त्रिलोकी पर वर्षा कर रहे हैं।

व्याख्या— कहा गया है—

मणिपूरैकवसतिः प्रावृषेण्यस्सदाशिवः।
अम्बुदात्मतया भाति स्थिरसौदामिनी शिवा॥ सिद्धगुटिका

'स्फुरन्नानारत्नाभरणपरिणद्धेन्द्रधनुषं' का आशय मौर्वीरहित धनुष से है। ऐसा आगमग्रन्थों में कथित है।

ये सभी लोक जल में ही प्रतिष्ठित हैं—

'इवे वै लोका अप्सु प्रतिष्ठताः।'

जल के द्वारा ही सूर्य, चन्द्र, अग्नि और समस्त नक्षत्रों की उत्पत्ति हुआ करती है। वेदों का कहना है—

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

तदेवाऽभ्युक्ता । अपां रसगुदयं सन् ।
सूर्ये शुक्रं समाभ्रतम् । अपां रसस्य
यो रसः। तं वो गृह्णाम्युत्तमम्। इति । —ऋग्वेद

जलतत्त्वात्मक मणिपूर में प्रतिष्ठित नीव श्री चक्रात्मिका है ।

योऽप्सु नावं प्रतिष्ठितां वेद ।
प्रत्येव तिष्ठति ।।४०।।

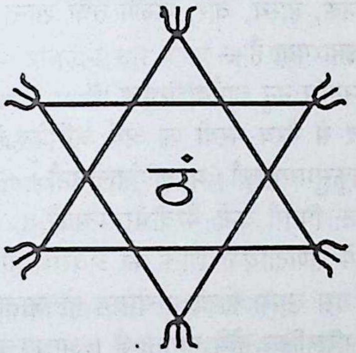

मन्त्रजप— एक हजार जप प्रतिदिन डेढ़ महीने तक करें ।

यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु ।

नैवेद्य— मधु, दूध पायस, ताम्बूल ।

लाभकारीफल— स्वप्नावस्था में इच्छित वस्तु का दर्शन ।

तवाधारे मूले सह समयया लास्यपरया
(शिवा) नवात्मानं मन्ये नवरसमहाताण्डवनटम् ।
उभाभ्यामेताभ्यामुद (भ) य विधिमुद्दिश्य दयया
सनाथाभ्यां जज्ञे जनकजननीवज्जगदिदम् ।।४१।।

पदान्वय— (हे भगवति) तव मूले आधारे लास्यपरया समयया सह नवरसमयाताण्डवनटं नवात्मानं मन्ये। इदं जगत उदयविधिमुद्दिश्य एताभ्याम् उभाभ्यां दयया सनाथाभ्यां जनकजननीमत् जज्ञे ।

श्लोकार्थ— तेरे मूलाधार में लास्यपरायण अर्थात् नर्तन करती हुई समया देवी के साथ नवधा रसपूरित तांडव नृत्य करने वाले नवात्मा शिवजी का मैं ध्यान करता हूँ । यह जगत् इन दोनों के जनक-जननीवत् करुणा से प्रभावित होने के फलस्वरूप अपने को धन्य मानता है ।

व्याख्या— समया देवी के द्वारा समयाचार की आराध्या देवी निर्देशित है ।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

भगवती के नर्तन को लास्यनाम से विभूषित किया गया है।

जैसे—

"स्त्रीकर्तृकं नृत्यं लास्यमित्युच्यते।"

भगवान शिव के नृत्य का नाम ताण्डव है, जैसे—

"पुंकर्तृकं नृत्यं ताण्डवमित्युच्यते।"

साहित्य के अनुसार रस नव प्रकार के माने जाते हैं, जैसे— शृंगार, रौद्र, अद्‌भुत, बीभत्स, भयानक, हास्य, वीर, करुण तथा शान्त।

महिम्नस्तोत्र में कहा गया है—

"जगद्रक्षायै त्वं नटसि ननु वामैव विभुता।"

'उभाभ्याम्' शब्द से भैरव-भैरवी का अर्थ अभिप्रेत है—

जपाकुसुमसङ्काशौ मदघूर्णितलोचनौ।
जगतः पितरौ वन्दे भैरवीभैरवात्मकौ॥

जब आधारचक्र में प्राणदायिनी शक्ति का अवरोध होता है तब शरीर में कम्पन्न होने लगता है, उस समय योगी नृत्यमग्न हो जाता है और उसे उसी स्थान में सम्पूर्ण विश्व परिलक्षित होने लगता है। आधारचक्र के अंतर्गत जो सृष्टि का आधार है, वहीं समस्त देवता और वेद रहा करते हैं। अतः आधारचक्र का आश्रय ग्रहण करना चाहिए। यह नृत्य आनंद ब्रह्मा के उन्मेष से प्रेरित होता है तथा प्रलय कालीन विराम भी नृत्य के परिश्रम के पश्चात् विश्रामरूपी आनन्द का आभोगरूपी निमेष है। शिवजी के इस आनन्दातिरेकरूपी तांडव नृत्य को वेदों में संवर्तन कहा गया है, परन्तु भगवत्पाद शंकराचार्य ने विवर्तन माना है।

"इस शिवताण्डव का साक्षात् प्रकटीकरण तारिकाओं की झिलमिलाहट में ग्रहों के नर्तन में, सूर्य के उदयास्त काल में, पृथ्वी की षड्ऋतुओं (ग्रीष्म, वर्षा, शरद, हेमन्त, शिशिर एवं वसन्त) के शृंगारयुक्त नाट्य में, चन्द्रकलाओं में, विद्युत-क्रीड़ा में; वसन्त की शीतल-मंद-सुगंधित पवन के झकोरों में, पुष्पों के हास्य में, सागर की हिलोरों में हिमपात में हिमकणों के नृत्य में, आँधी-तूफान की तीव्रगति में, नदियों के कलकल रव में, पर्वतों के शृंगार में, सस्यश्यामला भूतल के आँचल की हिलोरों में, पशु-पक्षियों की अठखेलियों में, मानव की मस्तानी चालों में एवं सभी स्थानों में किया जा सकता है।"

इन सब विराट् विश्वसृष्टि-प्रसार का यह निम्नतम स्तर का मूलाधार है जिसमें भगवती के इस लास्यनृत्य और शिव के तांडवनृत्य को युगपत् आवलोकन करने वाले आराधक जीवनमुक्ति का आनन्द उठाते हैं॥४१॥

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

यं

ह्रीं

मन्त्रजप— प्रतिदिन चार हजार जप एक मास तक करें।

यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु।

नैवेद्य— मधु।

लाभकारीफल— उदर रोगों से मुक्ति।

मुकुट का ध्यान—

गतैर्माणिक्यत्वं गगनमणिभिः सान्द्रघटितं
किरीटं ते हैमं हिमगिरिसुते कीर्तयति यः।
स नीडे यच्छायाच्छुरणशबलं चन्द्रशकलं
धनुः शौनासीरं किमिति न निबध्नाति धिषणा ।।४२।।

पदान्वय— (हे हिमगिरिसुते !) माणिक्यत्वं गतैः गगनमणिभिः सान्द्रघटितं हैमं ते किरीटं यः कीर्तयति सः नीडे यच्छायाच्छुरणशबलं चन्द्रशकलं शौनासीरं धनुरिति धिषणां किं न निबध्नाति ॥

श्लोकार्थ— (हे हिमवान् पुत्री !) तेरे स्वर्णनिर्मित मुकुट के वर्णन करते समय मनुष्य के मन में इन्द्रधनुष के उदय होने की धारण क्यों न होगी ! क्योंकि वह किरीट जब तारिकारूपी मणियों से घनीभूत हुआ तब चन्द्रखण्ड द्वारा निर्मित वह घोंसले के समान जान पड़ने लगा और वह उषःकालीन प्रकाश में विविध रंगों का चमक रहा है।

व्याख्या— उषःकालीन गगन मण्डल प्रकृति देवी का मुकुट है। इस स्थान में कृष्णपक्षीय चतुर्दशी तिथि और अमावस्या के संधिकाल में पड़ने वाले उषाकाल का चित्र, चित्रित किया गया है। कृष्णपक्षीय चतुर्दशी की तिथि भगवती की आराधना के लिए महत्त्वपूर्ण मानी जाती है। यदि अन्य मास की चतुर्दशी के अतिरिक्त कार्तिक मास की कृष्ण चतुर्दशी ग्रहण की जाय तो अत्युत्तम है। क्योंकि उस दिन की चतुर्दशी को नरक चतुर्दशी या रुद्रचतुर्दशी भी कहते हैं ॥४२॥

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

साहित्य के अनुसार यहाँ उत्प्रेक्षा, अतिशयोक्ति, अपह्नव एवं सन्देह अलंकार प्रत्यक्षरूप से दिखाई पड़ते हैं।

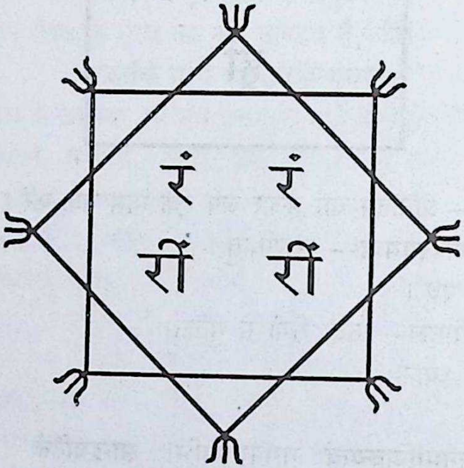

मन्त्रजप— नित्यप्रति एक हजार जप पैंतालिस दिनों तक लगातार करें।
यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु।
नैवेद्य— मिश्री।
लाभकारीफल— जलोदर (पेट में जलधिक्य रोग की अचूक चिकित्सा)
केशों का ध्यान—

धुनोतु ध्वान्तं नस्तुलितदलितेन्दीवरवनं
घनस्निग्धं श्लक्ष्णं चिकुरनिकुरुम्बं तव शिवे।
यदीयं सौरभ्यं सहजमुपलब्धुं सुमनसो
वसन्त्यस्मिन्मन्ये बलमथनवाटीविटपिनाम्॥४३॥

पदान्वय— (हे शिवे !) तुलितदलितेन्दीवरवनं घनस्निग्धं श्लक्ष्णं तव चिकुरनिकुरुम्बं नः ध्वान्तं धुनोतु। यदीयं सहजं सौरभ्यम् उपलब्धुम् अस्मिन् बलमथनवाटीविटपिनां सुमनसः वसन्तीति मन्ये॥

श्लोकार्थ— (हे शिवे !) तेरे गहन, चिक्कण, कोमल केशों का समूह, जो विकसित कमलवन के तुल्य जान पड़ते हैं, वे हमारे अज्ञानांधकार को दूर करें जिसमें पिरोये हुए नन्दनकानन (इन्द्र का बगीचा) के पुष्प, अपने को सुगंधित करने हेतु स्वयं ही यहाँ आकर वास कर रहे हैं।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

व्याख्या— केश-सज्जा के निमित्त रमणियाँ प्रायः अपने केशों में पुष्प गूँथती हैं। उस पुष्प-ग्रंथन के द्वारा अपने केशों को सुवासित करना ही उनका अभीष्ट होता है। परन्तु भगवती के केशों की सुगंधि से स्वयं पुष्प, सुगंधित हो उठते हैं ॥४३॥

यहाँ साहित्यानुसार उपमा, उत्पेक्षा, संसृष्टि तथा संकर अलंकारों का वर्णन है।

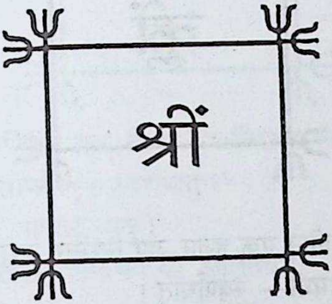

मन्त्रजप— प्रतिदिन तीन सहस्र जप डेढ़ महीने तक करें।

यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु।

नैवेद्य— मधु।

लाभकारीफल— सभी को मोहित करने की क्षमता एवं सभी कार्यों में सफलता की प्राप्ति।

वहन्ती सिन्दूरं प्रबलकबरीभारतिमिर-
द्विषां वृन्दैर्बन्दीकृतमिव नवीनार्ककिरणम्।
तनोतु क्षेमं नस्तव वदनसौन्दर्यलहरी-
परिवाहस्रोतःसरणिरिव सीमान्तसरणिः ॥४४॥

पदान्वय— (हे भगवति !) तव वदनसौन्दर्यलहरीपरीवाहस्रोतस्सरणिरिव स्थिता तव सीमान्तसरणिः प्रबलकबरीभारतिमिरद्विषां वृन्दैः बन्दीकृतं नवीनार्ककिरणमिव सिन्दूरं वहन्ती नः क्षेमं तनोतु ॥

श्लोकार्थ— तेरे मुखमंडल की सौन्दर्यलहरी के प्रवाह-पथ के समान सिन्दूर से पूरित तेरे केशों की माँग हमारे कुशल-क्षेम का प्रसारण करे जो कि केशों के बोझिल अंधकार रूपी प्रचंड शत्रु-समूहों से बंदी बनायी हुई उदयाभिमुख नवीन सूर्य-रश्मि के तुल्य है।

व्याख्या— सदैव ही ऊपर से नीचे की ओर स्रोत प्रवाहित हुआ करता

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

है। किन्तु भगवती की शोभा की दीप्ति ऊर्ध्वगामिनी है। परन्तु यहाँ योगिये ज्ञानोदय के पूर्व ही ज्ञान का प्रत्यक्षीकरण होना है ॥४४॥

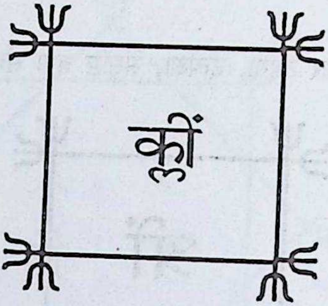

मन्त्रजप— प्रतिदिन एक हजार जप निरन्तर बारह दिनों तक करें।
यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु।
नैवेद्य— गुड़ पायस।
लाभकारीफल— सम्पूर्ण रोगों से मुक्ति।

अलकों का ध्यान—

अरालैः स्वाभाव्यादलिकलभसश्रीभिरलकैः
परीतं ते वक्त्रं परिहसति पङ्केरुहरुचिम्।
दरस्मेरे यस्मिन्दशनरुचि किञ्जल्करुचिरे
सुगन्धौ माद्यन्ति स्मरदहनचक्षुर्मधुलिहः ॥४५॥

पदान्वय— (हे भगवति!) स्वाभाव्यादरालैः अलिकलभसश्रीभिः अलकैः परीतं ते वक्त्रं पङ्केरुहरुचिं परिहसति। दरस्मेरे दशनरुचिकिञ्जल्करुचिरे सुगन्धौ यस्मिन् स्मरदहनचक्षुर्मधुलिहः माद्यन्ति ॥

श्लोकार्थ— प्राकृतिक रूप से घुँघराली, युवाभ्रमरों की दीप्तिमान अलकावलि से आच्छादित तेरा मुखमंडल कमलों के सौदर्य का उपहास करता है; जिसमें स्फटिक् मणि के समान सुन्दर दाँतों से किंचित मुस्कुराहट काल में निर्गत होने वाली सुगंध पर कामारि शिवजी के नेत्ररूपी भ्रमर मतवाले हो उठते हैं।

व्याख्या— इसका आशय यह है कि निराकार ब्रह्म, प्रकृति के गुणों का भोग करने वाला भी है ॥४५॥

यहाँ पर रूपक, उपमा और संकर अलंकार हैं।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

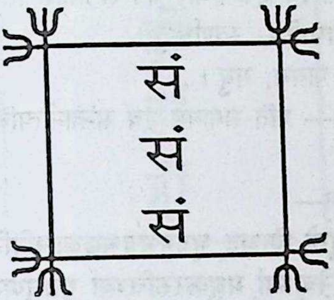

मन्त्रजप— प्रतिदिन एक सहस्त्र जप निरन्तर चालिस दिनों तक करें।
यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु।
नैवेद्य— दूध, पायस, मधु।
लाभकारीफल— वाग्वैभव की उपलब्धि।

ललाट (भाल) का ध्यान—

ललाटं लावण्यद्युतिविमलमाभाति तव यद्
द्वितीयं तन्मन्ये मुकुटघटितं चन्द्रशकलम्।
विपर्यासन्यासादुभयमपि सम्भूय च मिथः
सुधालेपस्यूतिः परिणमति राकाहिमकरः ।।४६।।

पदान्वय— (हे भगवति !) तव यत् ललाटं लावण्यद्युतिविमलम् आभाति तत् मुकुटघटितं द्वितीयं चन्द्रशकलं मन्ये। यद्यस्मात्कारणात् उभयमपि विपर्यासन्यासात् मिथः सम्भूय च सुधालेपस्यूतिः राकाहिमकरः परिणमति ॥

श्लोकार्थ— सौन्दर्य-कांति से चमकीला जो तेरा निर्मल ललाट है, उसे मैं मुकुट में जटित चन्द्रमा की दूसरी कला ही जानता हूँ जो एक दूसरे पर विपरीत क्रमानुसार होने के फलस्वरूप दोनों का रूप एकाकार होकर तथा अमृत से लिप्त होकर पूर्णचन्द्र बन गया है॥४६॥

यहाँ उत्प्रेक्षा और अतिशयोक्ति दोनों ही अलंकार हैं इसके साथ ही अंगागिभाव होने के कारण संकर अलंकार भी है।

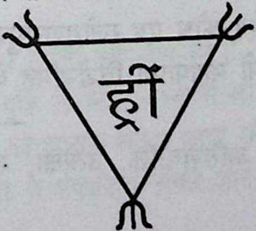

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मन्त्रजप— प्रतिदिन एक हजार जप लगातार पैंतालिस दिनों तक।
यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु।
नैवेद्य— दूध, पायस, मधु।
लाभकारीफल— पति-समागम एवं सन्तानोत्पत्ति।

भृकुटी का ध्यान—

भ्रुवौ भुग्ने किञ्चिद् भुवनभयभङ्गव्यसनिनि
त्वदीये नेत्राभ्यां मधुकररुचिभ्यां धृतगुणम्।
धनुर्मन्ये सव्येतरकरगृहीतं रतिपतेः
प्रकोष्ठे मुष्टौ च स्थगयति निगूढान्तरमुमे ।।४७

पदान्वय— (हे) उमे ! भुवनभयभङ्गव्यसनिनि ! त्वदीये किञ्चिद्भुग्ने भ्रुवौ मधुकररुचिभ्यां नेत्राभ्यां धृतगुणं रतिपतेः सव्येतरकरगृहीतं प्रकोष्ठे मुष्टौ च स्थगयति सति निगूढान्तरं धनुर्मन्ये ।।

श्लोकार्थ— हे भुवन-भयनाशन में आनंदित होने वाली उमा ! भौंहों की त्योरी खिंच जाने पर मैं उसकी उपमा, वामहस्त में धारण किये हुए कामदेव के धनुष से देता हूँ। जिस धनुष की प्रत्यंचा भौंरों की दीप्ति वाले तेरे दोनों नयनों की बनी हुई है तथा जिसका मध्यवर्ती भाग मुष्टिका और कलाई के नीचे छिपा हुआ है।

व्याख्या—इसका आंतरिक अभिप्राय यह है कि भगवती की भृकुटी का ध्यान करने से कामपिपासा शांत होकर समस्त प्रकार के भय का निवारण होता है।

षट्रिपुओं (काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मात्सर्य) में काम सबसे प्रबल शत्रु होता है। अतः मानो भगवती ने उसका धनुष स्वयं ही छीन लिया है ।।४६।।

राम चरितमानस में कहा गया है—

'को जग जाहि न काम नचावा।'

और भी कहा गया है—

काम एष क्रोध एष रजोगुणसमुद्भवः।
महाशनो महापाप्मा विद्धेनमिह वैरिणम् ।।

—श्रीमद्भगवद्गीता ३,३७

यहाँ एक साथ ही अतिशयोक्ति, उत्प्रेक्षा, रूपक, सन्देह और संकर अलंकारों का वर्णन है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ह्रीं
ह्रीं
ह्रीं

मन्त्रजप— प्रतिदिन सात हजार जप पचीस दिनों तक करें।
यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु।
नैवेद्य— नारीयल, केला, मधु।
लाभकारीफल— देवताओं एवं पुरुषों को आकृष्ट करने की शक्ति।

तीनों नेत्रों का ध्यान—

अहः सूते सव्यं तव नयनमर्कात्मकतया
त्रियामां वामं ते सृजति रजनीनायकतया।
तृतीया ते दृष्टिदरदलितहेमाम्बुजरुचिः
समाधत्ते सन्ध्यां दिवसनिशयोरन्तरचरीम्।।४८।।

पदान्वय— (हे भगवति!) तव सव्यं नयनम् अर्कात्मकतया अहस्सूते। ते वामं नयनं रजनीनायकतया त्रियामां सृजति। ते तृतीया दृष्टिः दरदलितहेमाम्बुजरुचिः दिवसनिशयोः अन्तरचरीं सन्ध्यां समाधत्ते।

श्लोकार्थ— तेरा दायाँनेत्र सूर्यात्मक होने से दिवस का निर्माण होता है तथा बायाँनेत्र चन्द्रात्मक होने के परिणाम स्वरूप रात्रि की सृष्टि होती है एवं किंचित् विकसित स्वर्णनिर्मित कमल के सौन्दर्य से समाहित तेरी तीसरी दृष्टि दिवस एवं रात्रि के बीच में पड़ने वाली सन्ध्या के समान है।

व्याख्या— यहाँ दिवाकाल से जाग्रत, निशाकाल से सुषुप्ति तथा सायंकाल से स्वप्नावस्था का भाव लेना चाहिए। क्योंकि बृहदारण्यक उपनिषद् में कहा गया है—

'सान्ध्यं तृतीयं स्वप्नस्थानम्।'

भगवती की दया-दृष्टि से जाग्रतावस्था में जगत् का भान अज्ञात स्वरूप में होता है, रात्रि में सुषुप्ति का अज्ञानान्धकार छाया रहता है, किन्तु वह भगवती के चन्द्रात्मक नेत्र के प्रकाश से प्रकाशित होकर ज्ञान की समाधि में परिवर्तित हो

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

जाता है। सन्ध्यारूपी स्वप्नावस्था ज्ञान की वह श्रेणी है जिसमें सम्पूर्ण जगत् स्वप्न के समान भासित होने लगता है ॥४८॥

परन्तु ज्ञानी पुरुष जाग्रतावस्था में भी जगत् को ब्रह्ममय देखता है श्रीमद्भगवद्गीता में भी कहा गया हैं—

'यो मां पश्यति सर्वत्र सर्वं च मयि पश्यति।'

महाभारतयुद्ध में अर्जुन के मोहग्रस्त हो जाने पर भगवान श्रीकृष्ण ने उन्हें अपने विराट्स्वरूप का दर्शन कराया जिसमें उन्होंने सभी लोगों को अवस्थित देखा—

तत्रैकस्थं जगत्कृत्स्नं प्रविभक्तमनेकधा।
अपश्यद्देवदेवस्य शरीरे पाण्डवस्तदा॥

—श्रीमद्भगवद्गीता

बु	शु	च
गु	र	कु
के	श	रा

मन्त्रजप— प्रतिदिन एक सहस्र जप उन्नीस दिनों तक करें।
यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु।
नैवेद्य— चित्रान्न, केला, मधु।
लाभकारीफल— ग्रहों के अशुभकारी फलों के शमन की शक्ति।

विशाला कल्याणी स्फुटरुचिरयोध्या कुवलयैः
कृपाधाराऽऽधारा किमपि मधुराऽऽभोगवतिका।
अवन्ती दृष्टिस्ते बहुनगरविस्तारविजया
ध्रुवं तत्तन्नामव्यवहरणयोग्या विजयते॥४९॥

पदान्वय— (हे भगवति!) ते दृष्टिः विशाला कल्याणी स्फुटरुचिः कुवलयैः अयोध्या कृपाधाराऽऽधारा किमपि मधुरा आभोगवतिका अवन्ती

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

बहुनगरविस्तारविजया तत्तन्नामव्यवहरणयोग्या ध्रुवं विजयते ।

श्लोकार्थ— तेरी दृष्टि विशाला, कल्याणी, विकसित कमलों के सुन्दरता की उपमा से भी ऊँची अयोध्या, कृपा-धार के समान धारा, किंचित मधुरा, भोगदात, सर्वजनरक्षिणी अवन्तिका पुरी, अनेक विस्तृत नगरों पर विजय पाने वाली विजया तथा निश्चित रूप से इन अनेक नगरियों के नाम से संबोधित अनेक अर्थों के संशय को हरण करने के योग्य है ।

व्याख्या— भगवती की दृष्टि में आठ प्रकार के भाव समाहित हैं, जैसे— उदारता के फलस्वरूप विशाला, कल्याणदायिनी होने के कारण ही कल्याणी कही जाती हैं । कमलों के सौन्दर्य के समान दीख पड़ने से अयोध्या, मधुर होने के कारण मधुरा, भोगदातृ होने के परिणामस्वरूप भोगवतिका भी हैं । सबका परित्राण करने से अवन्तिका तथा अनन्त पराक्रमशीला होने से विजया है।

कुछ विद्वानों के मतानुसार उनकी दृष्टि के आठ स्वरूप निम्न प्रकार से हैं—

अन्तर्विकसित दृष्टि होने से विशाला, आश्चर्यमयी दृष्टि से धारा, नेत्रों के किंचित धूर्णित होने से मधुरा, मैत्री भाव से परिपूर्ण होने के कारण भोगवती, जिस निष्पाय दृष्टि से सरलता झाँकती हो वही आवन्तिकापुरी है तथा तिरछी दृष्टि होने के परिणामस्वरूप विजया कही जाती हैं । इन अष्टदृष्टियों का प्रभाव क्रमशः अष्टकर्मों— उच्चाटन, आकर्षण, द्रवीकरण, सम्मोहन, वशीकरण, ताड़न, विद्रावण और मारण पर पड़ता है ।।४९।।

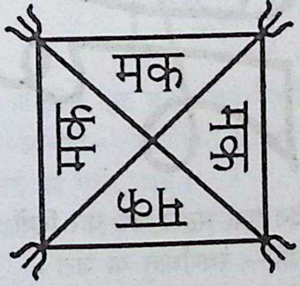

मन्त्रजप— नित्यप्रति एक हजार जप पच्चीस दिनों तक करें ।

यन्त्रनिर्माण-सामग्री— हल्दी को मंत्रोच्चारण के पश्चात् तैल में मिश्रित कर उसे किसी हरे रंग की आँखों वाले १५ वर्षीय बालक की हथेली पर रखकर अग्नि में छिड़के ।

नैवेद्य— मूँग और मधु ।

लाभकारीफल— गुप्तनिधि का पता लगना ।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

कवीनां सन्दर्भस्तवकमकरन्दैकरसिकं
कटाक्षव्याक्षेपभ्रमरकलभौ कर्णयुगलम् ।
अमुञ्चन्तौ दृष्ट्वा तव नवरसास्वादतरला-
वसूयासंसर्गादलिकनयनं किञ्चदरुणम् ।।५०।।

पदान्वय— (हे भगवति !) कवीनां सन्दर्भस्तवकमकरन्दैकरसिकं तव कर्णयुगलं कटाक्षव्याक्षेपभ्रमरकलभौ नवरसास्वादतरलौ अमुञ्चन्तौ दृष्ट्वा असूयासंसर्गात् अलिकनयनं किञ्चिदरुणम् ।

श्लोकार्थ— कविजनों के कवितारूपी गुच्छों से उठने वाली महक के सुगंधग्राही रसिक, कानों का साथ छोड़ने वाले, तेरे विक्षेपयुक्त कटाक्ष, तिरछे नयन से देखने वाले भौरों के समान कविताओं के नव रसों (श्रृंगार, वीभत्स, रौद्र, अद्भुत, भयानक, वीर, हास्य, करुण तथा शान्त) का आस्वादन करने हेतु व्याकुल दोनों चपल नेत्रों को देखकर ईर्ष्यावश मस्तक वाला तेरा तीसरा नेत्र किंचित् अरुणाभ है ।

व्याख्या— यहाँ पर रूपक, अपह्नव और अतिशयोक्ति अलंकार का वर्णन है । अंगांगिभाव होने के कारण संकीर्ण भी है ।।५०।।

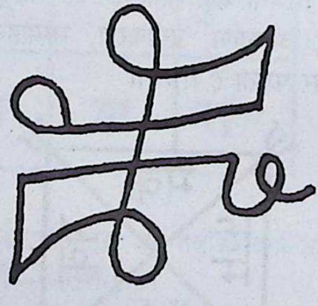

मन्त्रजप— प्रतिदिन एक सहस्र जप चार दिनों तक करें ।

यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु या जल ।

नैवेद्य— चीनी, मिश्री, गुड़, केला, मधु, नारीयल ।

लाभकारीफल— शरीर में विस्फोटक दाने निकलने वाले रोग का निवारण ।

शिवे श्रृङ्गारार्द्रा तदितरजने कुत्सनपरा
सरोषा गङ्गायां गिरिशचरिते विस्मयवति ।
हराहिभ्यो भीता सरसिरुहसौभाग्यजयिनी
सखीषु स्मेरा ते मयि जननि दृष्टिः सकरुणा ।।५१।।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पदान्वय— (हे जननि !) ते दृष्टिः शिवे शृङ्गारार्द्रा, तदितरजने कुत्सनपरा, गङ्गायां सरोषा, गिरिशचरिते विस्मयवती हराहिभ्यो भीता, सरसिरुहसौभाग्यजननी, सखीषु स्मेरा, मयि सकरुणा।

श्लोकार्थ— तेरी दृष्टि शिव के प्रति शृंगारी भावना से ओत-प्रोत है, अन्य जनों के लिए कुत्सित, उपेक्षात्मक, गंगा पर क्रोधपूर्ण, शिव के चरित्रों पर विस्मय कारिणी, शिवजी के साँपों से भयभीत, कमलों के सौन्दर्य को पराभूत करने वाली तथा सहेलियों के प्रति मुस्कुराहट से युक्त है। हे जननि ! मेरे ऊपर भी तेरी करुणार्द्र दृष्टि है।

व्याख्या— उक्त श्लोक में शान्त रस का नामोल्लेख नहीं किया गया है, क्योंकि भगवती की स्वाभाविक दृष्टि तो शांत रस से भावित है जो शांति कला का ही सहज स्वभाव है। रस नव प्रकार के कहे गये हैं जो इस प्रकार से हैं—

शृंगार, वीभत्स, रौद्र, अद्भुत, भयानक, वीर, हास्य, करुण और शांत।

यहाँ स्पष्ट रूप से विरोधाभास अलंकार है ॥५१॥

क्लीं
क्लीं
क्लीं

मन्त्रजप— प्रतिदिन एक हजार जप पैंतालिस दिनों तक करें।

यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु अथवा चन्दन का लेपन।

नैवेद्य— ऊर्द का पूआ, मधु।

लाभकारीफल— मोहनिद्रा उत्पन्नकारिणी शक्ति।

गते कर्णाभ्यर्णं गरुत इव पक्ष्माणि दधती
पुरां भेत्तुश्चित्तप्रशमरसविद्रावणफले।
इमे नेत्रे गोत्राधरपतिकुलोत्तंसकलिके
तवाकर्णाकृष्टस्मरशरविलासं कलयतः ॥५२॥

पदान्वय— (हे गोत्राधरपतिकुलोत्तंसकलिके !) तव इमे नेत्रे कर्णाभ्यर्ण गते पक्ष्माणि गरुत इव दधती पुरां भेत्तुः चित्तप्रशमरसविद्रावणफले आकर्णकृष्टस्मरशरविलासं कलयतः ॥

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

श्लोकार्थ— (हे पर्वतराज के कुल की प्रमुख कलिके !) ये तेरे दोनों नयन बाणों के समान कर्ण-पर्यन्त खिंचे हुए हैं जो पंखों के स्थान पर पलकें धारण कर रखे हैं तथा त्रिपुरारि के मन की शांति को भंग करने वाले फलक से युक्त हैं। और वे कानों तक खींचे गये कामदेव के बाणों जैसा कार्य कर रहे हैं।

व्याख्या— कामदेव के बाणों से प्रहारित मनुष्य का मन विक्षुब्ध हो उठता है अर्थात् परब्रह्म में भी स्पन्दन होने लगता है। इसी भाव का वर्णन नीचे की पंक्तियों में भी किया गया है।, जैसे—

भयउ ईशमन क्षोभविशेखी।
नयन उघारि सकल दिशि देखी ॥

—रामचरितमानस, बालकाण्ड

यहाँ निदर्शनालंकार का वर्णन किया गया है ॥५२॥

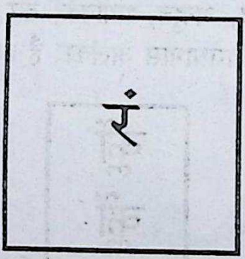

मन्त्रजप— प्रतिदिन एक हजार जप डेढ़ मास तक करें।
यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु।
नैवेद्य— तिल, दूध, पायस।
लाभकारीफल— नेत्र एवं कर्ण रोगों की अचूक चिकित्सा।

विभक्तत्रैवर्ण्यं व्यतिकरितलीलाञ्जनतया
विभाति त्वन्नेत्रत्रितयमिदमीशानदयिते।
पुनः स्रष्टुं देवान्द्रुहिणहरिरुद्रानुपरतान्
रजः सत्त्वं विभ्रत्तम इति गुणानां त्रयमिव ॥५३॥

पदान्वय— (हे ईशानदयिते !) इदं त्वन्नेत्रत्रितयं व्यतिकरितलीलाञ्जनतया विभक्तत्रैवर्ण्यम् उपरतान् द्रुहिणहरिरुद्रान् देवान् पुनः स्रष्टुं रजस्सत्त्वं तम इति गुणानां त्रयमिव बिभ्रत् विभाति ॥

श्लोकार्थ— (हे ईशान की दयिते !) तेरे तीन नेत्रों में तीन प्रकार का अंजन लगा होने से मानो वे अलग-अलग तीन रंगों में भासित हो रहे हैं और

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

महाप्रलयान्त में त्रिदेवों (ब्रह्मा, विष्णु एवं रुद्र) को पुनः उत्पन्न करने हेतु सत्त्व, रज और तम— इन तीन गुणों को धारण किये हुए से जान पड़ रहे हैं।

व्याख्या— सत्त्वगुण का श्वेत वर्ण, रजोगुण का रक्तवर्ण तथा तमोगुण का नीलवर्ण माना जाता है। विष्णु सत्त्वगुण के, ब्रह्मा रजोगुण के और रुद्र तमोगुण के अधिदेवता हैं। अतएव प्रलयान्त में मानो भगवती के तीनों नेत्र खुल जाने के कारण वह उनमें सत्त्व, रज और तमरूपी तीन भाँति का अंजन आँखों में आँज लेती है। दृष्टि के एक होने पर भी उसमें तीन गुणों के मिश्रण से वह तीन प्रकार की परिलक्षित होती है। सृष्टि, स्थिति तथा संहारकारिणी शक्तियाँ एक ही शक्ति होने पर भी तीन रूपों में विभक्त हैं॥५३॥

यहाँ उत्प्रेक्षा अलंकर का वर्णन किया गया है।

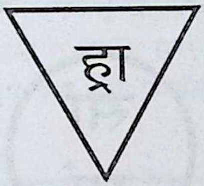

मन्त्रजप— पैंतालिस दिनों तक प्रतिदिन तीन सहस्र जप करें।

यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्ण धातु तथा उसका दीपक तले स्थापन।

नैवेद्य— गुड़ का पूआ, ऊर्द का पूआ, दूध पायस।

लाभकारीफल— सम्पूर्णकार्यों में सफलतादायक।

पवित्रीकर्तुं नः पशुपतिपराधीनहृदये
दयामित्रैर्नेत्रैररुणधवलश्यामरुचिभिः।
नदः शोणो गङ्गा तपनतनयेति ध्रुवममुं (मयं)
त्रयाणां तीर्थानामुपनयसि सम्भेदमनघम्॥५४॥

पदान्वय— (हे पशुपतिपराधीनहृदये !) दयामित्रैः अरुणधवलश्यामरुचिः नेत्रैः शोणो नदः गङ्गा तपनतनयेति त्रयाणां तीर्थानाम् अमुम् अनघं सम्भेदं पवित्रीकर्तुम् उपनयसि ध्रुवम्।

श्लोकार्थ— (पशुपति भगवान शंकर की पराधीनता में हृदयार्पण करने वाली हे भगवती !) अरुण, शुक्ल तथा श्यामवर्णीय सौन्दर्य से परिपूर्ण दयार्द्र नेत्रों से शोण (सोनभद्र), गंगा और यमुना नदी— इन तीनों तीर्थ स्थानों के तुल्य हम लोगों को पावन करने के लिए ही तू पवित्र संगम स्थल बना रही है।

व्याख्या— नासिका के अग्रभाग पर, भ्रूमध्यवर्ती स्थान में तथा ललाट-

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

प्रदेश में ध्यान करने की विधि योगांग के प्रमुख साधन माने जाते हैं। उक्त तीनों स्थान में ध्यानधारण करके अपने चित्तवृत्ति को ध्यानावस्थित कर देना ही तीन तीर्थों में स्नान करने के समान है।

योगियों का अन्तःकरण भगवती के ध्यानरूपी संगमस्थल में लीन हो जाने पर पावन हो जाता है, केवल संगम के जल में अवगाहन करने से कुछ नहीं होता। इसके संबंध में कहा गया है—

तीर्थानि तोयपूर्णानि देवान् पाषाणमृण्मयान्।
योगिनो न प्रपद्यन्ते आत्मध्यानपरायणाः॥

यहाँ उत्प्रेक्षा अलंकार का वर्णन है॥५४॥

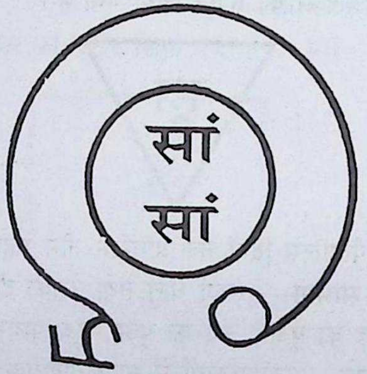

मन्त्रजप— एक हजार जप पैंतालिस दिनों तक करें।
यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु।
नैवेद्य— गुड़, पायस।
लाभकारीफल— समस्त स्त्री रोगों में गुणकारी चिकित्सा।

निमेषोन्मेषाभ्यां प्रलयमुदयं याति जगती
तवेत्याहुः सन्तो धरणिधरराजन्यतनये।
त्वदुन्मेषाज्जातं जगदिदमशेषं प्रलयतः
परित्रातुं शङ्के परिहृतनिमेषास्तव दृशः॥५५॥

पदान्वय— (हे धरणिधरराजन्यतनये!) तव निमेषोन्मेषाभ्यां जगती प्रलयमुदयं यातीति सन्तः आहुः। अतः त्वदुन्मेषात् जातम् अशेषम् इदं जगत् प्रलयतः परित्रातुं तव दृशः परिहृतनिमेषाः इति शङ्के॥

श्लोकार्थ— (हे धरणिधर राजन्य हिमवान्सुते!) सज्जनों का कथन है

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

कि तेरे नेत्र बंद कर लेने से जगत् का प्रलय तथा नेत्रों को खोल देने से जगत् की सृष्टि होती है। प्रलयोपरांत सम्पूर्ण सृष्टि की उत्पत्ति तेरे नेत्र खोल देने के फलस्वरूप ही हुई है। मुझे आशंका होती है कि उसके रक्षणार्थ ह्यी तेरे पलकों ने झपकना बन्द कर दिया है।

व्याख्या—देवताओं की पलकें भी सर्वदा खुली रहती हैं अर्थात् वे उठती-गिरती नहीं है। इसी लिए भगवती के नेत्र भी सदा खुले ही रहते हैं। कहा गया है—

"देवतानामनिमेषत्वं स्वभावसिद्धम्।"

और भी कहा गया है—

लोकाश्चतुर्दश महेन्द्रमुखाश्च देवा
मातस्त्रयी मुनिगणाश्च वसिष्ठमुख्यः।
सद्यो भवन्ति न भवन्ति समस्तमूर्तेः
सम्मीलनेन तव देवि निमीलनेन॥५५॥

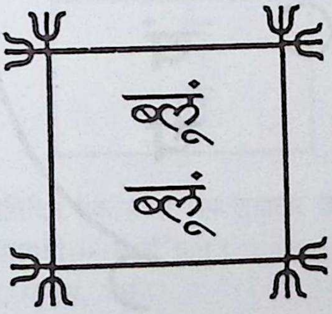

मन्त्रजप— एक हजार की संख्या में जप करें।
यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु।
नैवेद्य— केला, दूध, पायस, मधु, ताम्बूल।
लाभकारीफल— अण्डव्याधि विनाश।

तवापर्णे कर्णेजपनयनपैशुन्यचकिता
निलीयन्ते तोये नियतमनिमेषाः शफरिकाः।
इयं च श्रीर्बद्धच्छदपुटकपाटं कुवलयं
जहाति प्रत्यूषे निशि च विघटय्य प्रविशति॥५६॥

पदान्वय— हे अपर्णे! तव कर्णेजपनयनपैशुन्यचकिताः शफरिकाः अनिमेषास्तोये निलीयन्ते नियतम्। (किञ्च—) इयं च श्रीः बद्धच्छदपुटकपाटं

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

कुवलयं प्रत्यूषे जहाति निशि च तत् विघटय्य प्रविशति ॥

श्लोकार्थ— (हे अपर्णे !) खुली आँखों वाली मछलियाँ सदैव जल में छिपी रहती हैं। उनके मन में यह आशंका बनी रहती है कि कहीं उनके नेत्र तेरे कानों में चुगली न कर दें, परन्तु यह लक्ष्मी तो प्रातः होते ही कपाटों (दरवाजे के पल्ले) के समान बंद हो जाने वाली बलवती कमलिनी को छोड़ जाती है और निशाकाल में उन्हें खोलकर प्रविष्ट हो जाती हैं।

व्याख्या— उक्त श्लोक में कवि ने काव्यात्मक रीति से नेत्रों के प्रतिद्वन्द्वी मछली और कमलिनी का अत्यन्त रोचक वर्णन किया है ॥५६॥

यहाँ प्रारम्भ में उत्प्रेक्षा तथा अन्त में अतिशयोक्ति अलंकार का वर्णन है।

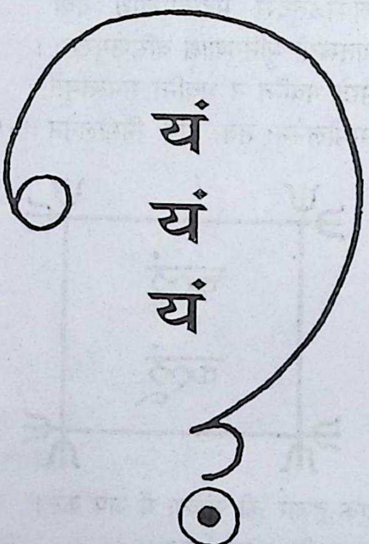

मन्त्रजप— प्रतिद्रिन बीस हजार जप पैंतालिस दिनों तक करें।
यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु।
नैवेद्य— मधु।
लाभकारीफल— समस्त अवरोधों का निवारण।

दृशा द्राघीयस्या दरदलितनीलोत्पलरुचा
दवीयांसं दीनं स्नपय कृपया मामपि शिवे।
अनेनायं धन्यो भवति न च ते हानिरियता
वने वा हर्म्ये वा समकरनिपातो हिमकरः ॥५७॥

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पदान्वय— हे शिवे ! द्राघीयस्या दरदलितनीलोत्पलरुचा दृशा दवीयांसं दीनं कृपया मामपि स्नपय अयम् अनेन धन्यो भवति। इयता ते हानिर्नच तथा हि— हिमकरः वने वा हर्म्ये वा समकरनिपातो हि। (स्वच्छान्तःकरणानां सर्वसाधारण्यं स्वभावसिद्धमिति भावः)।

श्लोकार्थ— (हे शिवे !) अल्प विकसित नील कमल की शोभा से पूर्ण दूरतक अवलोकन करने वाली अपनी दृष्टि से दूरस्थित मुझ दीन-हीन को कृपा पूर्वक स्नान करा दे। ऐसा करने से यह दीन धन्य हो उठेगा और इस कार्य में तेरी कोई हानि होने की संभावना भी नहीं है, क्योंकि चंद्रकिरणें वनों तथा भवनों में समान रूप से प्रविष्ट होती हैं।

व्याख्या— यहाँ देवी-दृष्टि की एकरूपता दिखलायी गयी है। अर्थात् देवी के लिए सर्वजन समान होते हैं। इसी कारण भक्त देवी से विनय कर रहा है कि मुझ दीन-हीन को भी अपनी कृपा का भाजन बना ले ॥५७॥

यहाँ अर्थान्तरन्यास अलंकार का वर्णन देखने में आता है।

श्रीं श्रीं

मन्त्रजप— प्रतिदिन एक हजार जप लगातार छह दिनों तक करें।

यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्ण धातु।

नैवेद्य— दूध, पायस, मधु।

लाभकारीफल— सर्वोदय की उपलब्धि।

कनपटियों का ध्यान—

अरालं ते पालीयुगलमगराजन्यतनये
न केषामाधत्ते कुसुमशरकोदण्डकुतुकम्।
तिरश्चीनो यत्र श्रवणपथमुल्लङ्घ्य विलस-
न्नपाङ्गव्यासङ्गो दिशति शरसन्धानधिषणाम् ॥५८॥

पदान्वय— हे अगराजन्यतनये ! ते पालीयुगलमरालं कुसुमशरकोदण्डकुतुकं केषां नाधत्ते। यत्र तिरश्चीनः विलसन् अपाङ्गव्यासङ्ग श्रवणपथमुल्लङ्घ्य शरसन्धानधिषणां दिशति॥

श्लोकार्थ— (हे पर्वतराज हिमवान् पुत्री !) तेरी दोनों कुटिल कनपटियाँ

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

किसकी दृष्टि में पुष्पबाणधारी धनुष के कोनों का कौतूहल उत्पन्न न करेंगी। जहाँ श्रवणेन्द्रिय का उल्लंघन करके तेरी तिरछी दृष्टि कपनटियों के पार कान तक पहुँचे हुए बाण के समान परिलक्षित होती है जो दोनों भौंहरूपी धनुष पर चढ़ा हुआ है ॥५८॥

यहाँ भ्रांतिमद् एवं संदेहालंकार दोनों ही हैं। अंगांगिभाव होने के परिणाम स्वरूप शंकर है।

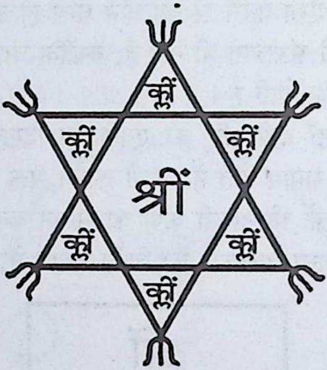

मन्त्रजप— प्रतिदिन एक हजार जप निरन्तर पैंतालिस दिनों तक करें।

यन्त्रनिर्माण-सामग्री— केसर का चूर्ण।

नैवेद्य— मधु।

लाभकारीफल— समस्त प्राणियों का विमुग्धीकरण एवं सभी रोगों से मुक्ति।

मुख का ध्यान—

स्फुरद्गण्डा भोगप्रतिफलितताटङ्कयुगलं
चतुश्चक्रं मन्ये तव मुखमिदं मन्मथरथम्।
यमारुह्य (यमाश्रित्य) द्रुह्यत्यवनिरथमर्केन्दुचरणं
महावीरो मारः प्रमथपतये सज्जितवते ॥५९॥

पदान्वय— (हे भगवति!) तव इदं मुखं स्फुरद्गण्डाभोगप्रतिफलितताटङ्कयुगलं चतुश्चक्रं मन्मथरथं मन्ये। यमारुह्य मारः महावीरस्सन् अवनिरथमर्केन्दुचरणं सज्जितवते प्रमथपतये द्रुह्यति।

श्लोकार्थ— तेरे चमकीले कपोलों पर प्रतिबिम्बित दोनों कानों के कर्णफूलों से संयुक्त तेरा मुखमंडल मुझे चार पहियों वाला कामदेव का रथ मालूम पड़ रहा

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

है जिस पर रथारूढ़ होकर परमवीर कामदेव— सूर्य-चन्द्ररूपी दो पहियों वाले पृथ्वीरूपी रथ पर युद्ध के निमित्त सज्जित होकर शिव के विपरीत खड़ा है।

व्याख्या— यहाँ देवी के मुखमंडल रूपी रथ का आश्रय ग्रहण कर कामदेव शंकर के सम्मुख युद्ध करने का साहस दिखा रहा है॥५९॥

यहाँ पहले उत्प्रेक्षा, तत्पश्चात् काव्यलिंग और अतिशयोक्ति अलंकार का वर्णन किया गया है।

काव्यलिंग तथा अतिशयोक्ति के अंगागिभाव होने के फलस्वरूप संकर है।

ऐं **क्लीं** **सौः**

मन्त्रजप— प्रतिदिन एक हजार की संख्या में पैंतालीस दिनों तक जप करें।

यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु।

नैवेद्य— गुडोदन, मधु।

लाभकारीफल— स्त्री-पुरुषों को आकृष्ट करने की शक्ति।

सरस्वत्याः सूक्तीरमृतलहरीकौशलहरीः
पिबन्त्याः शर्वाणि श्रवणचुलुकाभ्यामविरलम्।
चमत्कारश्लाघाचलितशिरसः कुण्डलगणो
झणत्कारैस्तारैः प्रतिवचनमाचष्ट इव ते॥६०॥

पदान्वय— हे शर्वाणि! ते अमृतलहरीकौशलहरीः सूक्तीः श्रवणचुलुकाभ्यामविरलं पिबन्त्याः चमत्कारश्लाघाचलितशिरसः सरस्वत्याः कुण्डलगणः तारः झणत्कारैः प्रतिवचनभाचष्ट इव।

श्लोकार्थ— (हे शर्वाणि!) सरस्वती की सौन्दर्यमयी उक्ति को जो सुधालहरी के कौशल का हरण करती है, श्रवणरूपी चुल्लिकाओं द्वारा सतत पान करते समय तेरे कुंडलगण चमत्कारपूर्ण उक्तियों के प्रशंसासूचक शिर हिलाते हुए प्रतिक्षण बनकर मानो ऊँकार के उच्चारण के समान अपने हुंकार द्वारा उत्तर दे रहे हों।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

व्याख्या— जिस प्रकार आधुनिक काल में स्वीकृति के लिए 'हाँ' या 'हूँ' शब्द का प्रयोग किया जाता है उसी प्रकार पूर्वकाल में स्वीकृति सूचक शब्द के लिए 'ऊँ' शब्द का प्रयोग किया जाता था ॥६०॥

निम्नश्लोक से इस बात की पुष्टि होती है—

तद्वा एतदनुज्ञाक्षरं यद्धि किञ्चानुजानाति ॐ इत्येव तदा हैषा एव समृद्धिर्यदनुज्ञा समर्धयिता ह वै कामानां भवति यस्तदेवं विद्वानक्षरमुद्गीथमुपास्ते ।

—छान्दोग्योपनिषद् १,१.८

यहाँ पूर्वार्ध में अतिशयोक्ति तथा उत्तरार्ध में उत्प्रेक्षा अलंकार है। अंगांगिभाव होने के कारण संकर है ।

शर्वाणि— इन्द्रवरुणभवशर्वरुद्रमृड इत्यादि से आनुक् और ङीप प्रत्यय।
लहरीवीचिकोर्मयः इति विश्वप्रकाशः ।

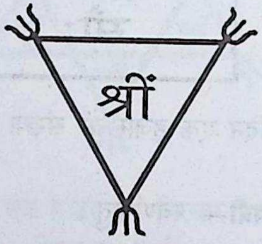

मन्त्रजप— एक हजार जप प्रतिदिन पैंतालिस दिनों तक करें ।
यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु ।
नैवेद्य— मधु, दूध, पायस ।
लाभकारीफल— समस्त ज्ञान की प्राप्ति ।

नासिका का ध्यान—

असौ नासावंशस्तुहिनगिरिवंशध्वजपटि !
त्वदीयो नेदीयः फलतु फलमस्माकमुचितम् ।
वहत्यन्तर्मुक्तशिशिरकरनिःश्वासगलितं
समृद्ध्या यत्तासां बहिरपि च मुक्तामणिधरः ॥६१॥

पदान्वय— हे तुहिनगिरिवंशध्वजपटि ! त्वदीयोऽसौ नासावंशः अस्माकम् उचितं नेदीयः फलं फलतु। सः अन्तः मुक्तः वहति। यद्यस्मात्कारणात् तासां समृद्ध्या शिशिरकरनिश्वासगलितं बहिरपि च मुक्तामणिधरः ॥

श्लोकार्थ— (हे हिमालय कुलपताका की पताके !) तेरी नासिका की

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

यह बाँस हमारे लिए शीघ्र ही समुचित फलदायी हो अथवा उसके ऊपर हमारे लिए उचित फलोत्पादन हो, क्योंकि उसके अंदर तेरे अतीव शीतल नि:श्वासों से मोतियों का निर्माण हो रहा है तथा नाक़ के वाम नथुने में तो उनकी इतनी प्रचुरता है कि एक मुक्तामणि बाहर की ओर भी दिखलायी पड़ रही है।

व्याख्या— 'वंश' शब्द के दो अर्थ निकलते हैं। एक बाँस नामक वृक्ष तथा दूसरा कुल। अर्थात् हिमालयोत्पन्न बाँस पर ध्वजा फ़हरायी जाय तो उसकी पताका के समान भगवती की उपमा है। इससे भिन्न अर्थ में भगवती को हिमालय कुल की ध्वज-पताका सरीखा बतलाया गया है।

'मुक्ता' शब्द के भी दो अर्थ ग्रहण किये जाते हैं। प्रथम अर्थ में मोती को मुक्ता कहा जाता है और दूसरे अर्थ में जीवनमुक्त, पुरुष की संज्ञा भी मुक्त होती है। जिस प्रकार बाँसवृक्ष फलविहीन होता है, परन्तु उसकी नलिकाओं में मोतियों का प्रादुर्भाव माना जाता है। उसी प्रकार भगवती के मुक्तावत् उत्तम कुल में अर्थात् भगवती के उज्जवल आराधक सम्प्रदाय में ही मुक्तपुरुष उत्पन्न हुआ करते हैं।

हिमगिरिकन्या का श्वास भी हिम के सदृश शीतल होना चाहिए जिसके स्पर्श को पाकर ओस-कण भी शीघ्र ही जमकर मुक्तामणियों के रूप में परिवर्तित हो जाया करते हैं। शीतल श्वासप्रवास से परमशांति का आशय है जिसके स्पर्श-मात्र से ही मानव जीवनमुक्ति का लाभ पाता है।

यदि किसी मनुष्य में ठण्ढी साँस चलने लगे तो उससे अल्पावधि में उसकी मृत्यु की सूचना मानी जाती है। यहाँ भगवती की साँस को शीतल बतलाया गया है। भगवती के शांतिपूर्ण अन्तर्मन का ऐसा पराक्रम है जिसके कारण मृत्यु को भी भयभीत होना पड़ता है। ऐसे निश्वास के स्पर्श-मात्र से आराधक शीघ्र ही जीवन्मुक्ति का आनन्द उठाते हैं ॥६१॥

यहाँ पर रूपक अलंकार का दिग्दर्शन कराया गया है।

मन्त्रजप— प्रतिदिन बारह हजार जप आठ दिनों तक करें।

यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

नैवेद्य— नारीयल, केला, मधु।
लाभकारीफल— सकल पुरुषवश्यता।

ओष्ठों का ध्यान—

प्रकृत्याऽऽरक्तायास्तव सुदति दन्तच्छदरुचेः
प्रवक्ष्ये सादृश्यं जनयतु फलं विद्रुमलता।
न बिम्बं तद्बिम्बप्रतिफलनरागादरुणितं
तुलामध्यारोढुं कथमिव न लज्जेत कलया।।६२।।

पदान्वय— हे सुदति ! तव प्रकृत्या आरक्तायाः दन्तच्छदरुचेः साद‍ृ प्रवक्ष्ये। विद्रुमलता फलं जनयतु। बिम्बं पुनः तद्बिम्बप्रतिफलनरागादरुणि कलयापि तुलामध्यारोढुं कथमिव न लज्जेत्।

श्लोकार्थ— हे सुन्दर दन्तावलियों वाली भगवती ! प्रकृतया लालवर्ण तेरे होंठों की शोभा की समानता करने वाले पदार्थों के नाम बताता हूँ। यदि मूं की लता में फल लग जायें (तो उतने सुन्दर कहे जा सकते हैं) किन्तु बिम्बाफ नहीं उनकी लालिमा तो तेरे बिम्ब की प्रतिबिंबित अरुणिमा की फलक के सम है। यदि किसी प्रकार उनसे तेरे होंठों की सदृशता भी की जाय तो वे तेरे ओष्ठ सौन्दर्य की एक कला के बराबर भी सुन्दरता की श्रेणी में न आ पाने के कार लज्जित नहीं होंगे ॥६२॥

व्याकरण— सर्व प्रथम रक्त और शुक्ल वर्ण का वर्णन वेदों एवं आग ग्रन्थों में किया गया था, जैसे—

"रक्तशुक्लवर्णपदद्वन्द्वम्।"
और "आजामेकां लोहितशुक्लकृष्णाम्।"

आगे और भी कहा गया है—

"यानि सौम्यानि शोणानि, शृङ्गाररसभाञ्जि च।
तान्यम्ब शक्तिपातेन सम्पन्नानीति निश्चयः ॥"

यहाँ अतिशयोक्ति अलंकार का वर्णन है।

मं
मं
मं

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मन्त्रजप-- आठ हजार जप प्रतिदिन आठ दिनों तक करें।
यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु।
नैवेद्य— ऊर्द का पुआ, मधु।
लाभकारीफल— अनिद्रा नाशक, गहरी नींद आना।

मुस्कान का ध्यान—

स्मितज्योत्स्नाजालं तव वदनचन्द्रस्य पिबतां
चकोराणामासीदतिरसतया चञ्चुजडिमा।
अतस्ते शीतांशोरमृतलहरीमाम्लरुचयः
पिबन्ति स्वच्छन्दं निशिनिशि भृशं काञ्जिकधिया॥६३॥

पदान्वय— (हे भगवति !) तव वदनचन्द्रस्य स्मितज्योत्स्नाजालं पिबतां चकोराणाम् अतिरसतया चञ्चुजडिमा आसीत् अतस्ते आम्लरुचयः शीतांशोरमृतलहरीं काञ्जिकधिया स्वच्छन्दं निशिनिशि भृशं पिबन्ति।

श्लोकार्थ— तेरे चन्द्रमुख की मुस्कराहटरूपी चाँदनी की प्रचुरता का पान कर, अत्यन्त मधुर होने के फलस्वरूप चकोरों की चोंच अतिरसास्वादन के कारण जड़वत् हो गयी है अर्थात् वहाँ से हट गयी है। अतएव अम्ल रस के अभिलाषी चन्द्रमा के अमृतलहरी को कांजी समझकर स्वच्छन्दतापूर्वक प्रत्येक रात्रि में पान करते रहते हैं।

व्याख्या— इसके संबंध में निम्न श्लोक कहा गया है—

वक्रास्ये वदनं तुण्डमित्यमरः।
"चञ्चुस्त्रोटिरुभे स्त्रियाम्।" इत्यमरः॥

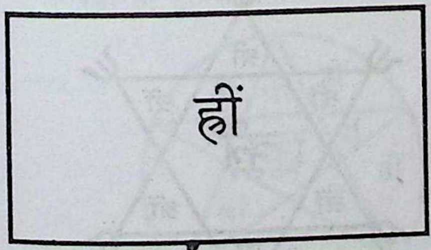

मन्त्रजप— तीस हजार जप प्रतिदिन एक-मास तक करें।
यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु।
नैवेद्य— नारीयल।
लाभकारीफल— वशीकरण की शक्ति प्राप्त करना।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

जिह्वा का ध्यान—

अविश्रान्तं पत्युर्गुणगणकथाऽऽम्रेडनजपा
जपापुष्पच्छाया तव जननि जिह्वा जयति सा ।
यदग्रासीनायाः स्फटिकदृषदच्छच्छविमयी
सरस्वत्या मूर्तिः परिणमति माणिक्यवपुषा ।।६४।।

पदान्वय— हे जननि ! तव सा जिह्वा अविश्रान्तं पत्युः गुणगणकथाम्रेडनजपा जपापुष्पच्छाया जयति, यदग्रासीनायाः सरस्वत्याः स्फटिकदृषदच्छच्छविमयी मूर्तिः माणिक्यवपुषा परिणमति।

श्लोकार्थ— (हे जननि !) किसी प्रकार की थकान का अनुभव किये बिना ही निरन्तर पति के गुणनुवाद का जाप करने वाली जपाकुसुम (अड़हुल) की कांति के समान लाल जिह्वा की जय है जिसके अगले भाग पर विराजमान स्फटिक प्रस्तर की भाँति विशुद्ध दीप्तिमयी सरस्वती की प्रतिमा के शरीर का वर्ण माणिक्य (सूर्यकांतमणि) के समान परिवर्तित हो गया है ।

व्याख्या— स्फटिक मणि का स्वाभाविक गुण है कि उस पर समीप की वस्तु का रंग दिखाई पड़ने लगता है। अतः जिह्वा के अग्रभाग पर आसीन सरस्वती देवी का स्फटिकवत् स्वच्छ रंग जिह्वा के रंग से रक्तवर्णीय भासित होने लगता है ॥६४॥

आगम ग्रन्थों में भी कहा गया है—

"तत् एव समुद्भूताः तस्यामेव कृतालयाः ।
तत्स्वरूपास्तत्प्रतापा नवावरणदेवताः ॥"

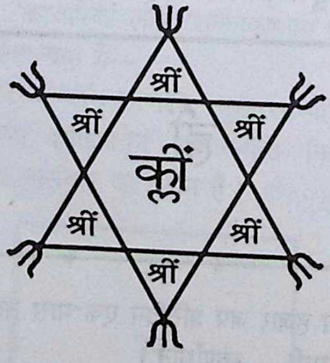

मन्त्रजप— प्रतिदिन दश हजार जप आठ दिनों तक करें ।

यन्त्रनिर्माण-सामग्री— केसर का चूर्ण ।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

नैवेद्य— गुड़ पायस, मधु।
लाभकारीफल— किसी को वशीभूत करने की शक्ति।

रणे जित्वा दैत्यानपहृतशिरस्त्रैः कवचिभि-
र्निवृत्तैश्चण्डांत्रिपुरहरनिर्माल्यविमुखैः।
विशाखेन्द्रोपेन्द्रैः शशिविशदकर्पूरशकला
विलीयन्ते मातस्तव वदनताम्बूलकवलाः॥६५॥

पदान्वय— हे मातः! रणे दैत्यान् जित्वा अपहृतशिरस्त्रैः कवचिभिः निवृत्तैः चण्डांशत्रिपुरहरनिर्माल्यविमुखैः विशाखेन्द्रोपेन्द्रैः शशिविशदकर्पूरशकलाः तव वदनताम्बूलकवलाः विलीयन्ते॥

श्लोकार्थ— हे माते! दानवों को रणभूमि में विजित कर उनके अपहृत शिरस्त्राण और कवचों को उतारकर शिवजी के निर्माल्य से विमुखी कृत जो चण्ड का अंश होता है, स्कन्द, इन्द्र और उपेन्द्र ये तीनों तेरे मुख के पान के ग्रास को, जिसमें चन्द्रवत् स्वच्छ कर्पूरखण्ड पड़े रहते हैं— उन्हें ग्रहण करते हैं।

व्याख्या— शंकर के एक गण का नाम चण्ड है। उसका स्थान नन्दी के दक्षिण पार्श्व की ओर नन्दी तथा जलहरी के मध्य होता है। शिव के लिए अर्पित निर्माल्य चण्ड का ही भाग होता है, उसे कोई अन्य ग्रहण नहीं कर सकता। अतः चण्ड के निकट खड़े होकर शिवजी का पूजन नहीं किया जाता। ऐसा करने वाले की पूजा व्यर्थ चली जाती है।

पुरस्कार-स्वरूप भगवती को मुख के पान के टुकड़ों को देने से उनका अपने पुत्रों के प्रति वात्सल्य प्रेम उमड़ पड़ता है॥६५॥

"विपञ्ची सा सुतन्त्रीभिः सप्तभिः परिवादिनी" इत्यमरः

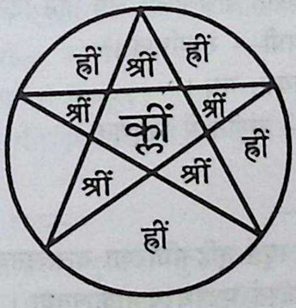

मन्त्रजप— प्रतिदिन एक हजार जप पैंतालिस दिनों तक निरन्तर करें।
यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु। (विशेष— गुग्गुल का धूप)

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

नैवेद्य— मधु।

लाभकारीफल— चतुर्दिक् विजयोपलब्धि।

विपञ्च्या गायन्ती विविधमपदानं पशुपतेः
स्त्वयाऽऽरब्धे वक्तुं चलितशिरसा साधुवचने।
तदीयैर्माधुर्यैरपलपिततन्त्रीफलरवां
निजां वीणां वाणी निचुलयति चोलेन निभृतम्।।६६।।

पदान्वय— (हे भगवति!) पशुपतेः विविधम् अपदानं विपञ्च्या गायन्ती त्वया वक्तुं चलितशिरसा साधुवचने आरब्धे (सति) तदीयैः माधुर्यैः अपलपिततन्त्रीकलरवां निजां वीणां चोलेन निभृतं निचुलयति।

श्लोकार्थ— पशुपति शंकर के विविध अपदानों को वीणा पर गायन करते समय, तेरे शिर हिलाकर सरस्वती के प्रशंसासूचक वचन कहना प्रारंभ करने पर जो अपनी मधुरता के कारण वीणा की झंकार को भी फीका कर देते हैं, सरस्वती अपनी वीणा को वस्त्रों में लपेटकर रख लेती हैं।।६६।।

टिप्पणी— "विपञ्ची सा सुतन्त्रीभिः सप्तभिः परिवादिनी" इत्यमरः। यहाँ अतिशयोक्ति अलंकार का वर्णन आया है।

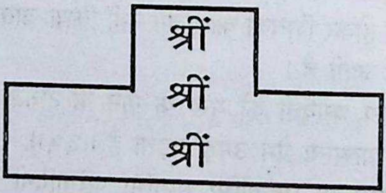

मन्त्रजप— नित्यप्रति पाँच हजार जप तीन दिनों तक करें।

यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु।

नैवेद्य— गुड़ पायस, मधु।

लाभकारीफल— संगीत में निपुणता।

चिबुक का ध्यान—

कराग्रेण स्पृष्टं तुहिनगिरिणा वत्सलतया
गिरीशेनोदस्तं मुहुरधरपानाकुलतया।
करग्राह्यं शम्भोर्मुखमुकुरवृत्तं गिरिसुते
कथङ्कारं ब्रूमस्तव चिबुकमौपम्यरहितम्।।६७।।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पदान्वय— हे गिरिसुते ! तुहिनगिरिणा वत्सलतया कराग्रेण स्पृष्टं गिरीशेन अधरपानाकुलतया मुहुरुदस्तं शम्भोः करग्राह्यम् औपम्यरहितं तव मुखमुकुरवृन्तं चिबुकं ब्रूमः ॥

श्लोकार्थ— (हे गिरितनये !) उपमाविहीन तेरी ठोड़ी का वर्णन हम किस प्रकार करें जिसे तेरे पिता ने वात्सल्य प्रेम से भावित होकर अपनी उँगलियों से स्पर्शित किया है। गिरीश ने अधरामृतपान करने की व्यग्रता से बारम्बार उठाया है जो उस क्षण ऐसी जान पड़ती है मानो वह शम्भु के हाथ में मुखदर्शन के लिये उठाये गये दर्पण का दस्ता हो।

व्याख्या— यहाँ वात्सल्य शब्द से पिता की पुत्रादि के प्रति प्रीति भासित होती है। कहा गया है—

"पुत्रादौ वात्सल्यं, पत्न्यादौ प्रेम, शिष्यादावनुग्रहः, अग्रजादौ भक्तिः।
पुत्र आदिशब्देन गौणपुत्रगौणपत्नीगौणशिष्यगौणाग्रजा गृह्यन्ते ॥

प्रकृति का मुख आईना के समान है जिसमें शंकर का मुख परिलक्षित हो रहा है ॥६७॥

ब्रूमः— 'विभाषा कथमि लिङ्च' । इति लिङर्थे सम्प्रधारणायां लट्।
यहाँ अनन्वयालंकार का कथन है।

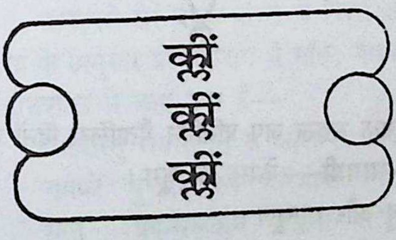

मन्त्रजप— प्रतिदिन एक सहस्र जप डेढ़ मास तक करें।
यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु।
नैवेद्य— मधु दूधपायस ताम्बूल।
लाभकारीफल— वैवाहिकजीवन में स्त्री-पुरुष के प्रेम की प्रगाढ़ता।

ग्रीवा (गरदन) का ध्यान—

भुजाश्लेषान्नित्यं पुरदमयितुः कण्टकवती
तव ग्रीवा धत्ते मुखकमलनालश्रियमियम्।
स्वतः श्वेता कालागुरुबहुलजम्बालमलिना
मृणालीलालित्यं वहति यदधो हारलतिका ॥६८॥

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पदान्वय— (हे भगवति !) तवेयं ग्रीवा पुरदमयितुः भुजाश्लेषात् नित्यं कण्टकवती मुखकमलनालश्रियं धत्ते, यत् अधः स्वतः श्वेता कालागुरुबहुलमलिना हारलतिका मृणालीलालित्यं वहति ॥

श्लोकार्थ— त्रिपुरारि की भुजा का नित्य ही स्पर्श होते रहने के कारण तेरी गरदन खुरदुरी हो रही है, तेरे मुखकमल को अपने में धारण करती हुई कमलनाल जैसी सुन्दर जान पड़ती है, जो स्वयं तो गौरवर्ण की है, किन्तु दीर्घकाल तक अगरु के गहरे लेप के द्वारा कीचड़ से सनी हुई सी क्लान्त दिखाई पड़ रही है और जिसके नीचे हार लटक रहा है ॥६८॥

यहाँ प्रारंभ में निदर्शना एवं रूपक तथा अंत में निदर्शना अलंकार है। अंगागिभाव होने से संकर है।

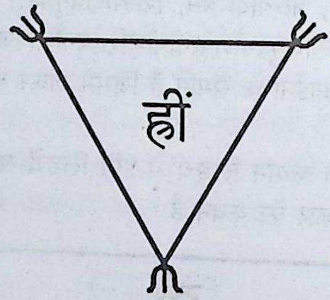

मन्त्रजप— एक सहस्र जप प्रतिदिन पैंतालिस दिनों तक करें।
यन्त्रनिर्माण-सामग्री— केसर का चूरा।
नैवेद्य— मधु और ताम्बूल।
लाभकारीफल— प्रशासकों के विमोहन की शक्ति।

गले का ध्यान—

गले रेखास्तिस्रो गतिगमकगीतैकनिपुणे
विवाहव्यानद्धप्रगुणगुणसङ्ख्याप्रतिभुवः ।
विराजन्ते नानाविधमधुररागाकरभुवां
त्रयाणां ग्रामाणां स्थितिनियमसीमान इव ते ॥६९॥

पदान्वय— (हे भगवति !) गतिगमकगीतैकनिपुणे ! ते गले तिस्रो रेखाः विवाहव्यानद्धप्रगुणगुणसङ्ख्याप्रतिभुवः नानाविधमधुररागाकरभुवां त्रयाणां ग्रामाणां स्थितिनियमसीमान इव विराजन्ते ।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

श्लोकार्थ— (हे गति, गमक तथा गीत में निपुणे !) विवाह-काल में बाँधी गयी तीन मंगलसूत्रों की लड़ियों के कारण जो तेरे गले में तीन रेखाएँ पड़ गयी हैं वे ऐसी मालूम हो रही हैं कि वे विविध भाँति की मधुर राग-रागिनियों के तीन ग्रामों पर गायन करने से उनके स्थिति, नियम आदि की परिसीमा के चिह्न हों।

व्याख्या— सामुद्रिकशास्त्र के मतानुसार गले की त्रिवलियाँ भाग्य रेखाओं की सूचक मानी जाती हैं। कहा गया है—

ललाटे च गले चैव मध्ये चापि वलित्रयम्।
स्त्रीपुंसयोरिदं ज्ञेयं महासौभाग्यसूचकम्॥

मंगलसूत्र को अत्यन्त सौभाग्यसूचक समझा जाता है। विवाह-काल में मंगलसूत्रों की तीन लड़ियाँ गले में बाँधी जाती हैं। वसिष्ठ मुनि ने मंगलसूत्र का लक्षण निम्न प्रकार से बतलाया है—

ब्रह्मविष्ण्वीशरूपं पुरन्ध्रिवृत्तं त्रितं कृतम्।
त्रिरत्नं रुक्मजं स्त्रीणां माङ्गल्याभरणं विदुः॥

गृह्यकार का भी कथन है—

माङ्गल्यतन्तुनानेन बध्वा मङ्गलसूत्रकम्।
वामहस्ते सरं बध्वा कण्ठे च त्रिसरं तथा॥

गायन विद्या के अनुसार प्रत्येक राग में गति, गमक और गीत— ये तीन अंग होते हैं। संगीतशास्त्र में कहा गया है—

"गतिस्तु रागसङ्गीते स आलापः प्रकीर्तितः।
गमको मुख्यनादस्य परिभाषो रसात्मकः॥
गीतं प्रबन्धरूढार्थं रञ्जिता रक्तिरुच्यते॥"

संगीत गति को ही गति की संज्ञा दी जाती है। संगीत को दो गतियाँ होती हैं— एक मार्ग और दूसरी देशी।

स्वर में होने वाले कम्पन को गमक कहते है, जैसे—

"स्वरस्य गमकः कम्पस्स च पञ्चविधस्स्मृतः।"

गीत धातुमत्वात्मक रूप में दो प्रकार का होता है—

"वाङ्मातुरुच्यते गेयं धातुरित्यभिधीयते।"

भगवती तीनों लयों पर गान कर सकती हैं। अतः उनके गले में पड़ी हुई तीन रेखाएँ ऐसी जान पड़ती हैं मानो प्रत्येक ग्राम पर गाने के फलस्वरूप उनके सुरों की अलग-अलग सीमाएँ बन गयी हैं॥६९॥

यहाँ प्रारम्भ में अनुमान तथा अंत में उत्प्रेक्षा अलंकार है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

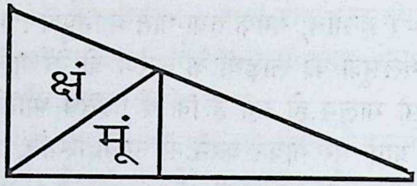

मन्त्रजप— प्रतिदिन एक सहस्र जप पैंतालिस दिनों तक करें।

यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु।

नैवेद्य— मधु।

लाभकारी फल— स्त्रीवशीकरण।

चारों भुजाओं का ध्यान—

मृणालीमृद्वीनां तव भुजलतानाञ्चतसृणां
चतुर्भिः सौन्दर्यं सरसिजभवः स्तौति वदनैः ।
नखेभ्यः संत्रस्यन्प्रथममथनादन्धकरिपो-
श्चतुर्णां शीर्षाणां सममभयहस्तार्पणधिया ॥७०॥

पदान्वय— (हे भगवति !) तव मृणालीमृद्वीनां चतसृणां भुजलतानां सौन्दर्यं सरसिजभवः चतुर्भिर्वदनैः प्रथममथनात् अन्धकरिपोः नखेभ्यः संत्रस्यन् समं चतुर्णां शीर्षाणाम् अभयहस्तार्पणधिया स्तौति।

श्लोकार्थ— पूर्वकाल में किसी समय शिवजी के नाखूनों द्वारा किये गये (पाँचवे शिर के) मंथन का स्मरण करते हुए, भयभीत होकर चारों शिरों के रक्षणार्थ तेरे अभयदानी हाथ की शरण में, अर्पणात्मक भाव से, कमलिनी के समान तेरी चारों लता-तुल्य भुजाओं के सौन्दर्य का ब्रह्मा अपने चारों मुखों से स्तवन करते रहते हैं।

व्याख्या— पौराणिक कथाओं के अनुसार ब्रह्मा के पाँच शिर थे जिनके कारण उन्हें बहुत ही अहंकार था। उनके अहंकार को नष्ट करने हेतु शिवजी ने कुपित होकर उनका शिर अपने नखों से खुरचकर तोड़ दिया था।

"ब्रह्मणः पञ्चमशिरः नखाग्रेणाच्छिनद्धरः"

उस समय की घटना का स्मरण कर ब्रह्मा भगवती की चारों भुजाओं की चतुर्मुखों से सर्वदा स्तुति किया करते हैं। इसका आशय यह प्रतीत होता है कि ब्रह्मा के चारों मुख चार वेदों के द्वारा प्रकृति के कृतित्व का बखान किया करते हैं। सृष्टि-रचना के समय ब्रह्मा को अभिमान उत्पन्न होने पर शिवजी ने उनके पाँचवें शिर को विखंडित कर दिया था॥७०॥

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

यहाँ काव्यालंकार का वर्णन देखने में आता है।

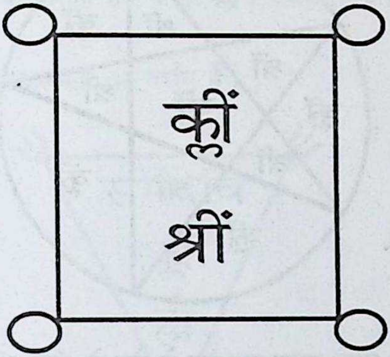

मन्त्रजप— प्रतिदिन एक हजार जप डेढ़ मास तक करें।

यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु।

नैवेद्य— नारीयल, मधु।

लाभकारीफल— पुरुषों को विजित करने की क्षमता।

हाथों का ध्यान—

नखानामुद्योतैर्नवनलिनरागं विहसतां
कराणां ते कान्तिं कथय कथयामः कथमुमे।
कयाचिद्वा साम्यं भजतु कलया हन्त कमलं
यदि क्रीडल्लक्ष्मीचरणतललाक्षाऽरुणदलम्॥७१॥

पदान्वय— हे उमे! नखानामुद्योतैः नवनलिनरागं विहसतां ते कराणां कलयापि साम्यं कथं कथयामः। हन्त कमलं क्रीडल्लक्ष्मीचरणतललाक्षारुणदलं यदि कयाचिद् वा कलया साम्यं भजतु।

श्लोकार्थ— (हे उमे!) तेरे हाथों की शोभा का मैं किस प्रकार वर्णन करूँ? जिनके नखों की दीप्ति सद्यः विकसित कमल की अरुणिमा को भी लज्जित करती है। यदि किसी प्रकार कमलदल की लालिमा से तुलना भी की जाय, तो अरे! वह तो क्रीड़न-काल में लक्ष्मी के चरणों में लगी हुई लाक्षा (लाह) के फलस्वरूप है॥७१॥

टिप्पणी—कर—"पञ्चशाखामयः पाणिः करो हस्तोऽथ तर्जनी" इति विश्वप्रकाशः।

हन्त— "हन्त हर्षेऽनुकम्पायां वाक्यारम्भविषादयोः" इत्यमरः

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

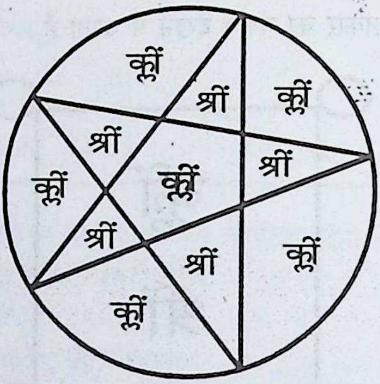

मन्त्रजप— बारह हजार जप बड़ के पेड़ के नीचे प्रतिदिन पैंतालिस दिनों तक करें।

यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु।

नैवेद्य— मधु।

लाभकारीफल— यक्षिणी सिद्धि।

दोनों स्तनों का ध्यान—

समं देवि स्कन्दद्विपवदनपीतं स्तनयुगं
तवेदं नः खेदं हरतु सततं प्रस्नुतमुखम्।
यदालोक्याशङ्काऽऽकुलितहृदयो हासजनकैः
स्वकुम्भौ हेरम्बः परिमृशति हस्तेन झटिति।।७२।।

पदान्वय— हे देवि! तव समं स्कन्दद्विपवदनपीतम् इदं स्तनयुगं प्रस्नुतमुखं नः खेदं सततं हरतु यत् आलोक्य आशङ्काकुलितहृदयः हेरम्बः हासजनकः हस्तेन झटिति स्वकुम्भौ परिमृशति॥

श्लोकार्थ— (हे देवि!) स्कन्द (कीर्तिकेय) तथा गणेश जी के द्वारा दुग्धपान किये गये तेरे दोनों स्तन, जिनके मुख से दुग्ध स्रवित हो रहा है, सदैव ही हमारे खेद का निवारण करें, जिन्हें देखकर पान करते समय गणेश जी संशयान्वित होकर अकुलाहट के कारण शीघ्र अपने हीं शिर के कलशवत् भागों को टटोलकर परिहासात्मक प्रयास करते हैं।

व्याख्या— सभी बालक माँ का दूध पीते समय उनके स्तनों को अपने हाथ से पकड़कर दुग्धपान करते हैं, किन्तु गणेश जी भूलवश अपने ही शिर को पकड़ने लगे जिसे देखकर माता विहँस उठीं॥७२॥

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

हेरम्बः— रम्बते गर्जतीति हेरम्बः ।

"रम्बिलवि गर्जाया" मिति रवि धातोः 'अच्' प्रत्यये । 'इदितो नुम् धातोः" इति नुमागमे हेरम्बः

यहाँ अतिशयोक्तिअलंकार का वर्णन है ।

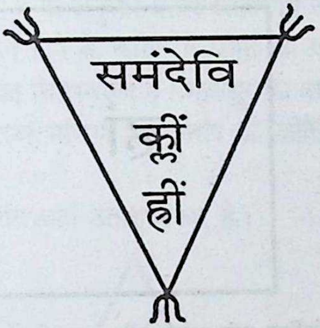

मन्त्रजप— प्रतिदिन पैंतालिस दिनों तक एक हजार जाप करें ।

यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु ।

नैवेद्य— मधु ।

लाभकारीफल— बाधारहित सकुशल यात्रा ।

अमू ते वक्षोजावमृतरसमाणिक्यकुतुपौ
न सन्देहस्पन्दो नगपतिपताके मनसि नः ।
पिबन्तौ तौ यस्मादविदितवधूसङ्गमरसौ
कुमारावद्यापि द्विरदवदनक्रौञ्चदलनौ ।।७३।।

पदान्वय— हे नगपतिपताके ! अमू ते वक्षोजौ अमृतरसमाणिक्यः कुतुपौ। नः मनसि सन्देहस्पन्दो नास्ति। यस्मात्तौ पिबन्तौ अविदितवधूसङ्गम रसौ द्विरदवदनक्रौञ्चदलनौ अद्यापि कुमारौ (भवतः) ।

श्लोकार्थ— (हे नगाधिराज हिमाचल की ध्वजा-तुल्य पुत्री !) अमृत रसपूरित माणिक्य निर्मित कुप्पियों अथवा कलशों के समान तेरे दृढ़ स्तनों को निहारकर हमारे मन में संशय का स्फुरण भी नही होता क्योंकि उन स्तनों का दुग्धपान करने के कारण गणेशजी और स्कन्द (कार्तिकेय) आज भी कुमार ही बने हुए हैं। उन्हें स्त्री-संसर्ग के रसास्वादन का ज्ञान नहीं है ।

व्याख्या— ऋद्धि-सिद्धि दोनों ही गणेशजी की पत्नियों के नाम से जानी जाती है तथा कार्तिकेय के पास देवसेना (देवताओं को सैन्यदल) रूपी पत्नी

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

है। वस्तुतः ये पत्नियाँ न होकर स्त्रीवाची शब्द होने के फलस्वरूप केवल उनकी शक्तियाँ ही हैं। गणेश जी और स्वामिकार्तिकेय दोनों ही नैष्ठिक ब्रह्मचारी हैं ।।७३।।

यहाँ काव्यलिंग और रूपक अलंकार का वर्णन है।

मन्त्रजप— प्रतिदिन एक हजार जप सात दिनों तक करें।

यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु।

नैवेद्य— मधु, दूध।

लाभकारीफल— माताओं के स्तन-दुग्ध में वृद्धि।

वहत्यम्ब स्तम्बेरमदनुजकुम्भप्रकृतिभिः
समारब्धां मुक्तामणिभिरमलां हारलतिकाम्।
कुचाभोगो बिम्बाधररुचिभिरन्तःशबलितां
प्रतापव्यामिश्रां पुरदमयितुः कीर्तिमिव ते ।।७४।।

पदान्वय— हे अम्ब ! कुचाभोगः स्तम्बेरमदनुजकुम्भप्रकृतिभिः मुक्तामणिभिः समारब्धाम् अमलां हारलतिकां बिम्बाधररुचिभिः अन्तश्शबलितां प्रतापव्यामिश्रां पुरदमयितुः कीर्तिमिव वहति ।।

श्लोकार्थ— (हे माते !) तेरे स्तनों का वह भाग जो गजासुर के मस्तकरूपी घड़े से निँकली हुई मुक्तामणियों की स्वच्छ माला धारण किये हुए है उसपर तेरे बिम्बाफल सदृश लाल होंठों की दीप्ति पड़ने से अरुणाभ छाया परिलक्षित होती है। अतः वह हार शिवजी के प्रतापयुक्त कीर्ति के प्रतीक-तुल्य है।

व्याख्या— गजकुम्भ में मुक्तामणियाँ उत्पन्न होती है जिन्हें गजमुक्ता भी कहा जाता है। कहा गया है—

गजकुम्भेषु वंशेषु फणासु जलदेषु च।
शुक्तिकायामिक्षुदण्डे षोढा मौक्तिकसम्भवः ।।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

गजकुम्भे कर्बुराभाः वंशे रक्तसितास्स्मृताः ।
फणासु वासुकेरेव नीलवर्णाः प्रकीर्तिताः ॥
ज्योतिर्वर्णास्तु जलदे शुक्तिकायां सितास्स्मृताः ।
इक्षुदण्डे पीतवर्णाः मणयो मौक्तिकास्स्मृताः ॥

कवियों की परिकल्पना के अनुसार प्रताप रक्तवर्णीय तथा कीर्ति श्वेतवर्णीय होती है। मणियों के निर्मल होने के कारण वे कीर्ति की प्रतीक हैं और उनपर चपकने वाला रंग, प्रताप का चिह्नस्वरूप है। गजासुर का वधरूपी प्रताप शिवजी की शक्ति का प्रतीक है तथा मणियाँ उस प्रताप की कीर्ति के चिह्न माने गये हैं ॥७४॥

अलंकारों के अन्तर्गत यहाँ उत्प्रेक्षालंकार है।

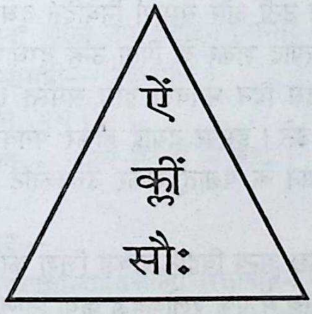

मन्त्रजप— प्रतिदिन एक सौ आठ (१०८) बार पैंतालीस दिनों तक जप करें।

यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु।

नैवेद्य— दूध, पायस, मधु।

लाभकारीफल— सुयश की उपलब्धि।

तव स्तन्यं मन्ये धरणिधरकन्ये हृदयतः
पयः पारावारः परिवहति सारस्वतमिव ।
दयावत्या दत्तं द्रविडशिशुरास्वाद्य तव यत्
कवीनां प्रौढानामजनि कमनीयः कवयिता ।।७५।।

पदान्वय— हे धरणिधरकन्ये ! तव स्तन्यं हृदयतः (उत्थितः) पयःपारावारः सारस्वतमिव परिवहतीति मन्ये। यत् दयावत्या (त्वया) दत्तं तव (स्तन्यं) द्रविडशिशुरास्वाद्य प्रौढानां कवीनां मध्ये कमनीयः कवयिता अजनि ॥

श्लोकार्थ— (हे धरणिधरकन्ये !) मैं इस प्रकार समझता हूँ कि तेरे

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

स्तनों के दुग्ध का पारावार तेरे हृत्प्रदेश में प्रवाहित होने वाले सारस्वत ज्ञान के समान है जिसे पानकर दयावती होकर तेरे दुग्धपान कराने पर द्रविड़शिशु ने प्रौढ़ता-प्राप्त कविजनों के समान सौन्दर्यमयी कविता की रचना कर डाली।

व्याख्या— यह द्रविड़ शिशु कौन था? इस विषय पर विद्वानों में मतैक्य नहीं है। कुछेक विद्वानों के मतानुसार भगवत्पाद शंकर ने स्वयं के लिए ही संकेत किया है। कुछ विद्वानों के कथनानुसार एक बार बालक शंकर को भगवती की अर्चना करने का सुअवसर प्राप्त हुआ। पूजन-काल में नैवेद्य-स्वरूप भगवती को दुग्धार्पण किया जाता था। भगवत्पाद शंकर ने अपनी बाल-सुलभ सरलता के कारण समझा कि भगवती नित्य ही प्रत्यक्ष रूप से दूध पीती हैं, परन्तु उन्हें पीते न देखकर वे रुदन पूर्वक प्रार्थना करने लगे। बालक के निश्छल आग्रह से प्रसन्न होकर भगवती प्रत्यक्ष हो उठीं और सम्पूर्ण निवेदित दूध को पी गयीं।

पूजनोपरांत भगवत्पाद शंकर के पिता उन्हें दुग्धार्पण किये गये दूध को दिया करते थे, परन्तु उस दिन भगवती द्वारा समस्त दूध पी लेने के कारण बालक शकर रुदन कर उठे। इसपर दयार्द्र होकर भगवती ने अपने स्तनों का दुग्धपान कराया। दुग्धपान के पश्चात् शंकर उच्चकोटि की कविता में उनका स्तवन करने लगे।

इसके अतिरिक्त कुछ अन्य विद्वान द्रविड़ शिशु को कांची प्रदेश में उत्पन्न हुआ मानते हैं। इस सम्बन्ध में एक श्लोकबद्ध कथा निम्न प्रकार से कथित है—

"कार्तिकेय एव कुतश्चित् मुनिशापान्मनुष्यजन्म गन्तुकामः कस्याश्चिद्ब्राह्मण्या दरिद्राया उदराज्जातः, स बालकः षण्मासमात्र एव पितरि भिक्षार्थं बहिर्गते मातरि च पानीयाहरणार्थं नदीं प्रस्थितायामतिदारिद्र्याद् दासदासीजनलोकाभावात् एकः सन् रुदन् कुत्रापि गन्तुमशक्तः क्षुधापीडितः क्रन्दनातुरो भवनाङ्गणोपरि भ्रमन् यदृच्छया गगनमार्गेण भर्त्रा सह विहरन्त्या पार्वत्याः सकरुणं दृष्टः, तथा च धूलिं परिमृज्य वाष्पमपनीय स्तन्यमम्बया तस्मै बालकाय प्रतिपादितं च भूमौ निक्षिप्य भगवत्यां गतायां तत्क्षणादेव शिशोः वदनारविन्दात् अनन्तकोटिदिव्यकाव्यप्रवाहाः सम्पन्नाः।

कुछ विद्वानों के मतानुसार द्रविड़ शिशु एक सिद्ध पुरुष थे। उन्होंने कैलास पर्वत के पत्थरों पर एक स्तोत्र का लेखन किया। अपनी कैलास यात्रा में भगवत्पाद शंकर ने उस स्तोत्र को पढ़ा। इनको स्तोत्र पढ़ते देखकर भगवती के संकेत पर उस सिद्ध पुरुष ने स्तोत्र मिटाना प्रारंभ कर दिया, फिर भी पहले के इकतालीस स्तोत्र-श्लोक शंकर ने कंठस्थ कर ही लिये। वही श्लोक इकतालीस की संख्या में यहाँ पहले दिये गये हैं ॥७५॥

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

यहाँ उत्प्रेक्षालंकार का कथन है।

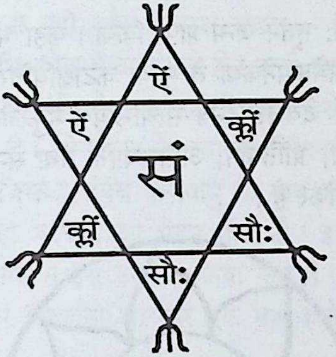

मन्त्रजप— एक सहस्र जप प्रतिदिन निरन्तर तीन दिनों तक करते रहें।
यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु।
नैवेद्य— केला, मधु।
लाभकारीफल— काव्य-संबंधी निपुणता।

नाभि का ध्यान—

हरक्रोधज्वालाऽऽवलिभिरवलीढेन वपुषा
गभीरे ते नाभीसरसि कृतसङ्गो मनसिजः।
समुत्तस्थौ तस्मादचलतनये धूमलतिका
जनस्तां जानीते तव जननि रोमावलिरिति ।।७६।।

पदान्वय— (हे) अचलतनये ! मनसिजः हरक्रोधज्वालावलिभिः अवलीढेन वपुषा गभीरे ते नाभीसरसि कृतसङ्ग । तस्माद्धूमलतिका समुत्तस्थौ। हे जननि ! तां जनः तव रोमावलिरिति जानीते ॥

श्लोकार्थ— हे अचलतनये ! शिव के कोप से भयभीत होकर जब कामदेव ने गम्भीर सरोवर जैसी तेरी नाभि में डुबकी लगायी तो उससे लता के समान उठने वाले धूम की जो रेखा बन गयी, हे जननि ! उसे सामान्यजन तेरी नाभि के ऊपर निकलने वाली रोमावलि मानते हैं।

व्याख्या— यहाँ आध्यात्मिक पक्ष का भाव यह है कि कामावेश के समय भ्रूमध्य में शिव का ध्यान लगाने में, यहाँ उनका ज्ञानरूपी तीसरा नेत्र स्थित है, हृदय में उदित होने वाले काम का ताप नाभिचक्र में पहुँचकर शान्त हो जाता है तथा जल में आग के बुझने में धुआँ-सा ऊपर उठता दिखायी पड़ता है, उसी

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

भाँति नाभि-प्रदेश से उत्थित होने वाली रोमांच की लता के सदृश उठकर शान्त हो जाती है।

कामदेव ने पुनः नूतन जन्म प्राप्त किया। कहा भी गया है—

दग्धं यदा मदनमेकमनेकधा ते मुग्धः कटाक्षविधिरङ्कुरयाञ्चकार।
धत्ते तदा प्रभृति देवललाटनेत्रं सत्येन्द्रियैव मुकुलीकृतमिन्दुमौलिः ॥

यहाँ पर उत्प्रेक्षा, भ्रांतिमान, अतिशयोक्ति तथा सन्देहालंकार है, साथ ही अंगांगिभाव होने से शंकर है।

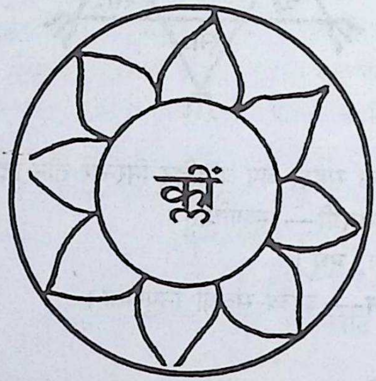

मन्त्रजप— नित्यप्रति बारह हजार जप आठ दिनों तक करें।
यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु।
नैवेद्य— नारीयल, केला, दधि, अन्न, मधु।
लाभकारीफल— समस्तजनों को सम्मोहित करने की शक्ति।

यदेतत्कालिन्दीतनुतरतरङ्गाकृति शिवे
कृशेमध्ये किञ्चिज्जननि तव तद्भाति सुधियाम्।
विमर्दादन्योन्यं कुचकलशयोरन्तरगतं
तनुभूतं व्योम प्रविशदिव नाभिं कुहरिणीम् ॥७७॥

पदान्वय— (हे) शिवे जननि! तव कृशे मध्ये यदेतत्कालिन्दीतनुतरङ्गाकृति किञ्चित् (रोमावलिरूपं वस्तु) सुधियां तद्भाति कुचकलशयोरन्तरगतं तनुभूतं व्योम अन्योन्यं विमर्दादेव कुहरिणीं नाभिं प्रविशदिव भाति।

श्लोकार्थ— हे शिवे ! हे जननि ! तुम्हारे कटि-प्रदेश में यह जो यमुना की क्षीण तरंग के समान किंचित् दिखायी पड़ रही है, वह मानो तेरे कुचकुम्भों के बीच एक दूसरे की रगड़ लगने से पिसते-पिसते पतला हो जाने पर आकाश,

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

तेरे नाभि-विवर में या तेरी नाभि में ही साँपिन की भाँति प्रविष्ट हो रहा है।

व्याख्या— यमुना नदी और आकाश मंडल— इन दोनों का ही रंग श्यामवर्णीय होता है। नाभि-प्रदेश में अवरोहित होने वाली आकाश रूपी रोमावलियाँ हृदय के सूर्यमंडल से नीचे की ओर उतर रही हैं, अतः इसे यमुना नदी की तरंग से उपमित किया गया है। योगशास्त्र के अनुसार पिंगला नामक नाड़ी को भी यमुना कहा गया है। जिसका संबंध प्राणवायु के साथ होता है। प्राणवायु की क्रिया के फलस्वरूप ही षट्चक्र का भेदन होता है। इसी कारण यमुनारूपी पिंगलागत प्राण की क्रिया से इसे उपमित किया गया है ।।७७।।

यहाँ उत्पेक्षा और निदर्शना अलंकार एक साथ होने से संसृष्टि है।

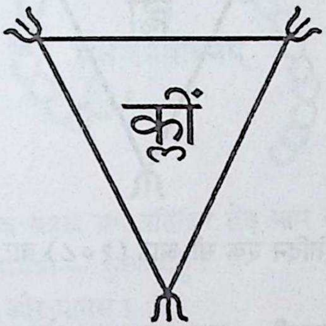

मन्त्रजप— प्रतिदिन दो सहस्र जप दश दिनों तक करें।

यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु।

नैवेद्य— केला, मधु।

लाभकारीफल— राजवश्यता।

स्थिरो गङ्गाऽऽवर्तः स्तनमुकुलरोमावलिलता-
निजावालं कुण्डं कुसुमशरतेजोहुतभुजः ।
रतेर्लीलाऽगारं किमपि तव नाभिर्गिरिसुते
बिलद्वारं सिद्धेर्गिरिशनयनानां विजयते ।।७८।।

पदान्वय— हे गिरिसुते ! तव नाभिः स्थिरो गङ्गावर्तः स्तनमुकुलरोमावलिलतानिजावालं कुसुमशरतेजोहुतभुजः कुण्डं रतेर्लीलागारं गिरिशनयनानां सिद्धेर्विलद्वारं किमपि विजयते ।।

श्लोकार्थ— हे गिरिसुते ! तेरी नाभि की जय हो। तेरी नाभि की उपमा निम्नलिखित प्रकार से संकुचित भाव में दी जा सकती है— १. गंगा का स्थिर

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

आवर्त (भँवर), २. तेरे कुचरूपी विकसित पुष्पों को धारण करने वाली रोमावली-स्वरूपा लता के उगने का गमला, ३. कामदेव के तेजाग्नि को धारण करने वाला होमकुंड, ४. रति का क्रीडास्थल अथवा ५. शंकर के नेत्रों की सिद्धि हस्तगत करने हेतु तपस्थली की गुफा का प्रवेशद्वार ॥७८॥

व्याख्या— "तदेव स्यादालवालमावापोऽथ नदी सरित् ।" इत्यमर:

यहाँ उल्लेखालंकार तथा अतिशयोक्ति अलंकार का वर्णन है ।

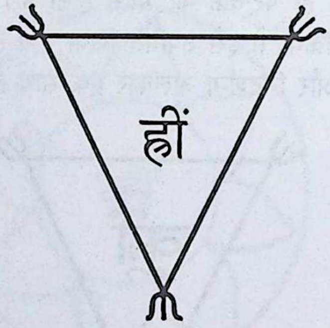

मन्त्रजप— प्रतिदिन एक सौ आठ (१०८) बार जप निरन्तर चौआलिस दिनों तक करें ।

यन्त्रनिर्माण-सामग्री— लाल चन्दन का लेप ।

नैवेद्य— मधु, ऊर्द का पूआ ।

लाभकारीफल— सकलराजवश्यता ।

निसर्गक्षीणस्य स्तनतटभरेण क्लमजुषो
नमन्मूर्तेर्नाभौ वलिषु च शनैस्त्रुट्यत इव ।
चिरं ते मध्यस्य त्रुटिततटिनीतीरतरुणा
समावस्थास्थेम्नो भवतु कुशलं शैलतनये ॥७९॥

पदान्वय— (हे शैलतनये !) ते मध्यस्य समावस्थास्थेम्न: चिरं कुशलं भवतु । निसर्गक्षीणस्य स्तनतटभरेण क्लमजुषो नमन्मूर्तेर्नाभीवलिषु च शनैः त्रुटिततटिनीतीरतरुणा त्रुट्यत इव ।

श्लोकार्थ— (हे शैलतनये !) तेरे मध्यवर्ती भाग की साम्यावस्था चिरकाल तक कुशलीभूत रहे, जो स्वभावत: ही क्षीण और स्तनरूपी तट के बोझ से बोझिल हो क्लान्त होने के कारण अवनत हुई तेरी मूर्ति के नाभि-प्रदेश पर पड़ने वाली वलियों पर धीरे-धीरे नदी-तीर के वृक्ष के समान टूटता हुआ-सा

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मालूम होता है ।।७९।।

व्याख्या— कटि-प्रदेश का क्षीण होना तथा कुचों का भारी होना ही नारी-सौन्दर्य के प्रतीक हैं। कविसम्राट कालिदास ने अपने मेघदूत नामक काव्य में यक्षिणी की सुन्दरता का कथन करते हुए लिखा है—

तन्वी श्यामा शिखरिदशना पक्वबिम्बाधरोष्ठी
मध्येक्षामा चकितहरिणोत्प्रेक्षणा निम्ननाभिः ।
श्रोणीभारादलसगमना स्तोकनम्रा स्तनाभ्यां
या तत्र तत्र स्याद्युवतिविषये सृष्टिराद्यैव धातुः ।।

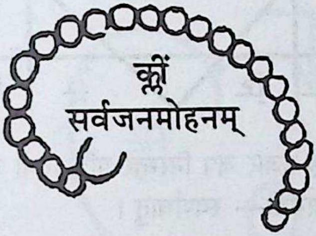

मन्त्रजप— एक सहस्र जप प्रतिदिन डेढ़ मास तक करें।
यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु ।
नैवेद्य— मधु और पायस ।
लाभकारीफल— इन्द्रजालनिपुणता ।

कुचौ सद्यः स्विद्यत्तटघटितकूर्पासभिदुरौ
कषन्तौ दोर्मूले कनककलशाभौ कलयता ।
तव त्रातुं भङ्गादलमिति वलग्नं तनु-भुवा
त्रिधा नद्धं देवि त्रिवलिलवलीवल्लिभिरिव ।।८०।।

पदान्वय— (हे देवि !) सद्यः स्विद्यत्तटघटितकूर्पासभिदुरौ दोर्मूले कषन्तौ कनककलशाभौ कुचौ कलयता तनुभुवा भङ्गादलमिति वलग्नं त्रातुं त्रिवलिल-वलीवल्लिभिः त्रिधा नद्धमिव ।।

श्लोकार्थ— (हे देवि !) कुक्षि-घर्षण के फलस्वरूप पसीना निकलने के कारण किनारे पर से अंगिया फट गयी है, स्वर्ण-कलश की आभा से पूरित तेरे स्तनद्वय के हिलते रहने पर उसे टूटने से बचाने के लिए पर्याप्त है। मात्र इतना जुड़ा हुआ तेरा कटि-प्रदेश मानो कामदेव ने लवली वल्लि की वलियों से तीन बार बाँध दिया है ।।८०।।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

यहाँ उत्प्रेक्षा एवं अतिशयोक्ति अलंकार हैं। अंगांगिभाव होने से संकर है।

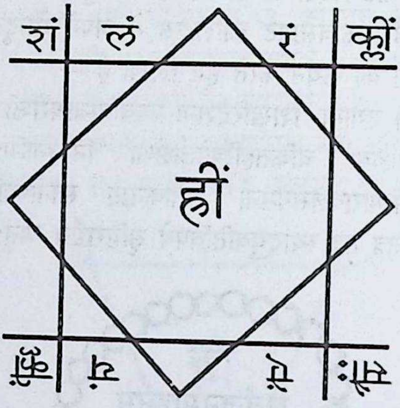

मन्त्रजप— एह हजार जप निरन्तर पाँच दिनों तक करें।
यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु।
नैवेद्य— मधु।
लाभकारीफल— ऐन्द्रजालिकविद्या की प्राप्ति।

नितम्ब का ध्यान—

गुरुत्वं विस्तारं क्षितिधरपतिः पार्वति निजा-
न्नितम्बादाच्छिद्य त्वयि हरणरूपेण निदधे।
अतस्ते विस्तीर्णो गुरुरयमशेषां वसुमतीं
नितम्बप्राग्भारः स्थगयति लघुत्वं नयति च ।।८१।।

पदान्वय— हे पार्वति ! क्षितिधरपतिः गुरुत्वं विस्तारं निजात् नितम्बादाच्छिद्य त्वयि हरणरूपेण निदधे। अतः ते अयं नितम्बप्राग्भारः गुरुः विस्तीर्णस्सन् अशेषां वमुमतीं स्थगयति लघुत्वं नयति च ॥

श्लोकार्थ— (हे पार्वती !) नगराज हिमाचल ने अपने नितंबों में से कुछ अंश काटकर अपनी भारता और विस्तार तुझे दहेज-स्वरूप दे दिये थे। इस कारण तेरे नितम्ब इतने विस्तीर्ण तथा बोझिल हो उठे कि उनके भार से समस्त पृथ्वी की गति निश्चल हो गयी है और तेरे विस्तार की अपेक्षा धरती छोटी दिखायी पड़ने लगी है ॥८१॥

शब्द-टिप्पणी— इसका भावार्थ यह है कि भूमि की प्राकृतिक शोभा हिमाच्छादित पर्वतराज की ही पुत्री है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

हरणरूपेण— "विवाहादिषु यद्देयं सहायो हरणं च तत्" इत्यमरः ।

"कन्यानां परिणये पित्रा वा भ्रातृभिश्च बन्धुभिः स्त्रीधनरूपं यद्देयं तन्निगदन्ति हरणमित्याचार्याः' —इति रुद्रभट्टः

रघुवंश में इन्दुमतीविवाहप्रसङ्ग में कालिदास ने भी कहा है—

"सत्त्वानुरूपं हरणीकृतश्रीः"

प्राग्भारः— "प्राग्भारश्चैव भारश्च तथार्थान्तः समार्थकः"

—इति विश्वप्रकाशः

यहाँ अतिशयोक्ति अलंकार है ।

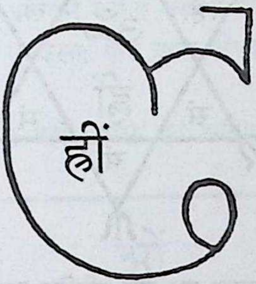

मन्त्रजप— प्रतिदिन एक हजार जप सोलह दिनों तक करें ।

यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु ।

नैवेद्य— गुड़ पासय, मधु, ऊर्द का पूआ ।

लाभकारीफल— अग्निस्तम्भन की शक्ति प्राप्त करना ।

ऊरुयुग्म का ध्यान—

करीन्द्रशुण्डानां कनककदलीकाण्डपटली-
मुभाभ्यामूरूभ्यामुभयमपि निर्जित्य भवती ।
सुवृत्ताभ्यां पत्युः प्रणतिकठिनाभ्यां गिरिसुते
विजिग्ये जानुभ्यां विबुधकरिकुम्भद्वयमपि ।।८२।।

पदान्वय— (हे गिरिसुते !) भवती करीन्द्रशुण्डानां कनककदलीकाण्डपटलीम् उभाभ्यामूरूभ्यां उभयमपि निर्जित्य सुवृत्ताभ्यां पत्युः प्रणतिकठिनाभ्यां जानुभ्यां विवुधकरिकुम्भद्वयमपि निर्जित्य विजिग्ये ।

श्लोकार्थ— (हे गिरिसुते !) आप अपने दोनों घुटनों से गजराज की सूँड़ों को तथा स्वर्णनिर्मित कदली के लम्बायमान स्तंभों को विजितकर पति को प्रणाम करते-करते कठिन बने हुए दोनों सुन्दर गोलाकार घुटनों से बुद्धिमान हाथी

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

के दोनों कुंभों (मस्तक के) को भी हरा रही हैं ॥८२॥

शब्द-टिप्पणी— 'उभाभ्यामूरूभ्यां' से तात्पर्य सक्थिदण्ड से है।

"सक्थिक्लीबे पुमान् रूपम्" इत्यमरः

विजिग्ये— "विपराभ्यां जेः" इति विपूर्वस्य जयतेरात्मनेपदे लिटि रूपम्— यहाँ उपमा अलंकार का वर्णन है।

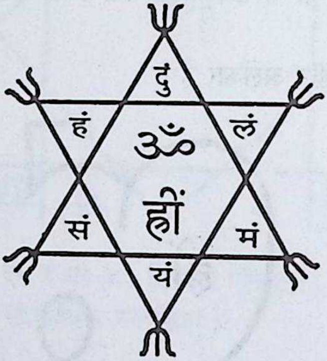

मन्त्रजप— एक सहस्र बार जप प्रतिदिन चालीस दिनों तक करें।

यन्त्रनिर्माण-सामग्री— भोजपत्र पर लिखकर उसे जूते से मलिन करें।

नैवेद्य— नारीयल, केला, मधु।

लाभकारीफल— जल पर नियन्त्रण की शक्ति।

जाँघों का ध्यान—

पराजेतुं रुद्रं द्विगुणशरगर्भौ गिरिसुते
निषङ्गौ जङ्घे ते विषमविशिखो बाढमकृत।
यदग्रे दृश्यन्ते दशशरफलाः पादयुगली-
नखाग्रच्छद्मानः सुरमुकुटशाणैकनिशिताः ॥८३॥

पदान्वय— (हे गिरिसुते !) विषमविशिखः रुद्रं पराजेतुं द्विगुणशरगर्भौ निषङ्गौ ते जङ्घे अकृत बाढम्। यदग्रे पादयुगलीनखाग्रच्छद्मानः सुरमुकुटशाणैकनिशिताः दशशरफला दृश्यन्ते ॥

श्लोकार्थ— (हे गिरिसुते !) तेरी दोनों पिण्डलियाँ रुद्र को पराजित करने के लिए द्विगुणित बाणें से पूरित कामदेव के दो तूणीरों के सदृश हैं जिनके दश अगले फलक पैरों की दशों उँगलियों के नाखूनों के अग्रभाग के रूप में नोकीले दिखाई पड़ रहे है और जो देवताओं के मुकुटरूपी सान पर धारदार किये

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

गये हैं ॥८३॥

शब्द-टिप्पणी— कामदेव के पंचबाण (शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गन्ध) ही पंचविषय है। क्योंकि भगवती के चरणों में पाँच सामान्य और पाँच दिव्य— शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गन्ध सहित दश बाण है। दिव्य विषयों का वर्णन योगदर्शन में निम्न प्रकार से मिलता है—

"विषयवती वा प्रवृत्तिरुत्पन्ना मनसः स्थितिनिबन्धिनी" —योगदर्शन १.३५

योगी को सामान्य और दिव्य भोग देने से चित्त की स्थिरता होती है।

दशशरफलाः—

"फलं प्रयोजने क्लीवं तरूणां प्रसवेऽपि च।
शराग्रे तु फलाः पुंसि कृता लोहशलाकया॥"

—इति विश्वः।

अलंकारों के अंतर्गत यहाँ उत्प्रेक्षा एवं अतिशयोक्ति अलंकार है।

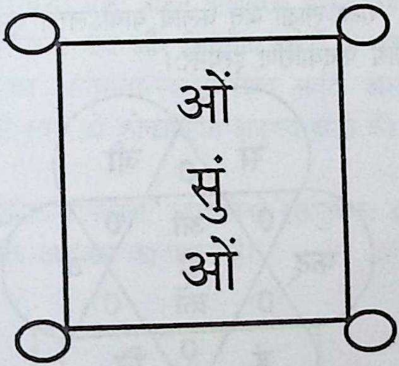

मन्त्रजप— नित्यप्रति एक हजार जप बारह दिनों तक करें।

यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु।

नैवेद्य— गुड़ पायस, मधु।

लाभकारीफल— हाथियों, घोड़ों एवं सैन्यदल पर नियन्त्रण।

श्रुतीनां मूर्धानो दधति तव यौ शेखरतया
ममाप्येतौ मातः शिरसि दयया धेहि चरणौ।
ययोः पाद्यं पाथः पशुपतिजटाजूटतटिनी
ययोर्लाक्षालक्ष्मीररुणहरिचूडामणिरुचिः ॥८४॥

पदान्वय— (हे जननि!) तव यौ चरणौ श्रुतीनां मूर्धानः शेखरतया दधति। हे मातः! एतौ चरणौ ममापि शिरसि दयया धेहि। ययोः पाद्यं पाथः

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पशुपतिजटाजूटतटिनी ययोः लाक्षालक्ष्मीः अरुणहरिचूडामणिरुचिः ।।

श्लोकार्थ— (हे माँ !) तेरे वे चरण जो श्रुतियों की मूर्धा पर शिखर के समान रखे हुए हैं, उन चरणों को कृपाकर मेरे शिर पर भी रख दे, जिनका चरणोदक शिव के जटाजूट से निर्गत गंगा है तथा जिनके चरण के तलुओं में लगी हुई लाक्षा (लाह) की दीप्ति हरि के चूड़ा (केशों) में धारण की हुई अरुणमणि की कांति के समान है ।।८४।।

शब्द-टिप्पणी— भगवती अपने चरण श्रुतियों की मूर्धा पर शिखर के समान रखे हैं। कहा भी गया है—

"नमो देव्यै महालक्ष्म्यै श्रियै सिद्ध्यै नमो नमः।
ब्रह्मविष्णुमहेशानवेदकैः पूजिताङ्घ्रये।।"— वसिष्ठसंहिता

आगे और भी कहा गया है—

"नमस्त्रिपुरसुन्दर्यै शिवायै विश्वमूर्तये।"

लाक्षा— "राक्षा लाक्षा जतु क्लीबे यावोऽलक्तो द्रुमामयः" इत्यमरः

पाद्यं— पाद्यं पादवारिणि इत्यमरः।

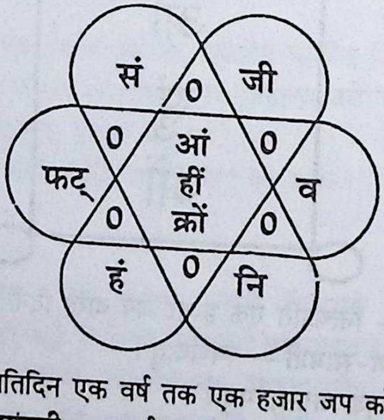

मन्त्रजप— प्रतिदिन एक वर्ष तक एक हजार जप करें।

यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु।

नैवेद्य— दूध, पायस, चित्रान्न, मधु।

लाभकारीफल— परकाय-प्रवेश की शक्ति प्राप्त करना।

नमोवाकं ब्रूमो नयनरमणीयाय पदयो-
स्तवास्मै द्वन्द्वाय स्फुटरुचिरसालक्तकवते ।
असूयत्यत्यन्तं यदभिहननाय स्पृहयते
पशूनामीशानः प्रमदवनकङ्केलितरवे ।।८५।।

पदान्वय— (हे भगवति !) तव नयनरमणीयाय स्फुटरुचिरसालक्तकवते

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पदयोरस्मै द्वन्द्वाय नमोवाकं ब्रूमः पशूनामीशानः यदभिहननाय स्पृहयते प्रमदवनकङ्केलितरवे अत्यनतम् असूयति ॥

श्लोकार्थ— हम तेरे इन दोनों चरणों को नमस्कार करते हैं जो नेत्रों के लिए कमनीय हैं, जिन पर लाक्षा के रंग की प्रखर कांति दमक रही है और जिनके अभिहनन की इच्छा से पशुपति तेरे प्रमोदवन के अशोक वृक्ष के प्रति असीम ईर्ष्या की भावना रखते हैं ॥८५॥

शब्द-टिप्पणी— पद्मिनी स्त्री (स्त्रियों का एक भेद) के पादाघात करने से अशोक वृक्ष आनंदित होता है। भगवान् पशुपति भी शोक से रहित होने के फलस्वरूप अशोक की भाँति है। प्राणियों को पशु की संज्ञा दी जाती है क्योंकि वे सांसारिक आसक्ति के पाश में बद्ध होते हैं। इसी आशय को लेकर शिव को पशुपति भी कहा जाता है। जैसा कि कहा गया है—

पाशबद्धस्तथा जीवः पाशमुक्तः सदाशिवः।
पाशबद्धः पशुः प्रोक्तः पाशमुक्तः पशुपतिः ॥

प्रत्येक मानव में जीव-भाव और शिवभाव, दोनों ही एक साथ रहते हैं। अतः पाशबद्ध जीव का अन्तरात्म-स्वरूप शिव सर्वदा असंग होने पर भी भगवती के पादाघात से स्वयं को शोकविहीन अनुभव करने की सदैव ही कामना किया करता है।

कङ्केलि— कङ्केलिः कामकेलिः स्यादशोको रक्तपुष्पकः इति विश्वः।

यहाँ अतिशयोक्ति अलंकार का कथन है।

रं	रं
रं	रं
रं	रं

मन्त्रजप— प्रतिदिन एक हजार जप लगातार बारह दिनों तक करें।

यन्त्रनिर्माण-मामग्री— स्वर्णधातु।

नैवेद्य— दूध, पायस, गुडोदन, केला।

लाभकारीफल— भूत-प्रेतों के अपसारण की शक्ति।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

चरणों का ध्यान—

मृषा कृत्वा गोत्रस्खलनमथ वैलक्ष्यनमितं
ललाटे भर्तारं चरणकमले ताडयति ते ।
चिरादन्तःशल्यं दहनकृतमुन्मूलितवता
तुलाकोटिक्वाणैः किलिकिलितमीशानरिपुणा ।।८६।।

पदान्वय— (हे भगवति !) मृषा गोत्रस्खलनं कृत्वा अथ वैलक्ष्यनमितं भर्तारं ते चरणकमले ललाटे ताडयति सति ईशानरिपुणा चिरात् दहनकृतम् अन्तश्शल्यम् उन्मूलितवता तुलाकोटिक्वाणैः किलिकिलितम् ।

श्लोकार्थ— तेरे गोत्र का अपमान करने के परिणाम स्वरूप लज्जा से नेत्र झुकाये हुए पति के भाल पर तेरे चरण-कमलों का ताड़न होने से कामदेव ने अपना प्रतिशोध देखकर क्योंकि दग्ध किये जाने के कारण चिरकाल से हो रहे अपने मानसिक संताप को दूर करते हुए तेरे पायलों की झंकार रूपी किलकिलाहट द्वारा हर्षध्वनि की ।।८६।।

शब्द-टिप्पणी— 'गोत्र' शब्द का एक अर्थ इंद्रियसंयम से भी होता है। क्योंकि कहा भी गया है— 'गां त्रायते इति गोत्रम्' 'गोत्रस्खलन' का आशय इंद्रियसंयम के पतन से है। 'वैलक्ष्यनमित' का अर्थ ऐसी दृष्टि से होता है जो अपने लक्ष्य की ओर न रहकर नीचे की ओर उन्मुख रहती है । शाम्भवी मुद्रा में भी ऐसी ही दृष्टि मानी जाती है। इस मुद्रा में दृष्टि को दोनों भौंहो के मध्यभाग में स्थिर रखना पड़ता है जिससे पलकों का झपकना बंद हो जाता है।

शाम्भवी मुद्रा का लक्षण बतलाते हुए कहा गया है—

"अन्तर्लक्ष्य बहिर्दृष्टिनिमेषोन्मेषवर्जिता ।
एषा सा शांभवी मुद्रा सर्वतन्त्रेषु गोपिता ।।"

'भर्तार' पद से तात्पर्य देहाभिमानी, शरीर पोषकभर्ता महेश्वर ही है ।

कामदेव सदैव ही भगवती का आश्रयण कर अपना सम्पूर्ण कार्य प्रतिपादित करता है जिससे ऐसा आभास होता है मानो भगवती कामदेव की ही प्रतिमूर्ति हैं। समाधि की अवस्था में कामदेव शंकर का शत्रु बन बैठता है, किन्तु सृष्टि-रचना में वही शक्ति के रूप में शिव-पत्नी का सहयोगी बन जाता है ।

मन के विलय और उत्थान का स्थान आज्ञाचक्र के ऊपर कहा गयां है। अनाहत में ईश्वर, विशुद्ध में सदाशिव तथा आज्ञाचक्र में शिव का स्थान है। शाम्भवी मुद्रा को समाधि का द्वारोद्घाटन माना जाता है। शाम्भवी मुद्रा के अभ्यासी के कामाशक्तिरूपी मानसिक सन्ताप का उन्मूलन हो जाता है।

'किलकिल' शब्द का अर्थ उच्च स्वरनाद से है जो किसी प्रसन्नतावश

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

किया जाता है। लंकानगरी से जानकी जी का पता लगाकर हनुमान जी ने किलकिलाहट की ध्वनि की थी—

लाँघि सिन्धु एहि पारहिं आवा। शब्द किलकिला कपिन्ह सुनावा ॥

—रामचरितमानस, सुन्दरकाण्ड

यहाँ पर अतिशयोक्ति अलंकार है।

यं
यं
यं

मन्त्रजप— प्रतिदिन एक हजार जप इक्कीस दिनों तक करें।

यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु।

नैवेद्य— दूध, पायस, नारीयल, केला।

लाभकारीफल— अमंगलकारी विपत्तियों को दूर करने की शक्ति।

चरणों का ध्यान—

हिमानीहन्तव्यं हिमगिरिनिवासैकचतुरौ
निशायां निद्राणं निशि च परभागे च विशदौ।
परं लक्ष्मीपात्रं श्रियमतिसृजन्तौ समयिनां
सरोजं त्वत्पादौ जननि जयतश्चित्रमिह किम् ॥८७॥

पदान्वय— (हे जननि !) हिमगिरिनिवासैकचतुरौ, निशि परभागे च विशदौ समयिनां श्रियमतिसृजन्तौ त्वत्पादौ हिमानीहन्तव्यं निशायां निद्राणं परं लक्ष्मीपात्रं सरोजं जयतः इह किं चित्रम्।

श्लोकार्थ— (हे जननि !) तेरे दोनों चरण कमल पुष्पों पर विजय प्राप्त कर रहे हैं तो इसमें विस्मय की कौन-सी बात है। क्योंकि कमल, बरफ का स्पर्श पाकर मृत हो जाता है, किन्तु तेरे चरण-कमल तो बर्फिले पर्वत पर निवास करते हैं। कमल का पुष्प तो रात्रि में सो जाया करता है, परन्तु तेरे चरण-कमल अहर्निश खुले रहते हैं। दिवस काल में कमल लक्ष्मी का पात्र बनता अर्थात् उनपर अर्पित किया जाता है, किन्तु तेरे चरण समयाचारी आराधकों को विपुल धन प्रदान करते हैं ॥८७॥

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

शब्द-टिप्पणी— हिमानी हिमसन्ततिः इत्यमरः
समयिनः— "अत इनिठनौ" इति इनिप्रत्ययः
अलंकारों के क्रम में यहाँ पर व्यतिरेक अलंकार है।

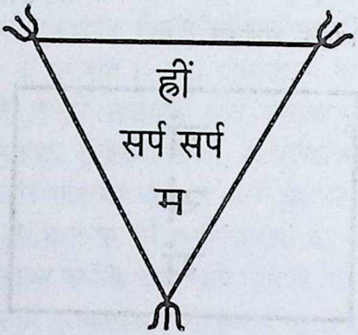

मन्त्रजप— प्रतिदिन एक सहस्र जप दस दिनों तक करें।
यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु।
नैवेद्य— दूध, पायस, मधु, केला, नारीयल।
लाभकारीफल— साँपों पर नियन्त्रण।

चरणों का ध्यान—

पदं ते कीर्त्तीनां प्रपदमपदं देवि विपदां
कथं नीतं सद्भिः कठिनकमठीखर्परतुलाम्।
कथञ्चिद्बाहुभ्यामुपयमनकाले पुरभिदो
यदादाय न्यस्तं दृषदि दयमानेन मनसा॥८८॥

पदान्वय— (हे देवि!) कीर्तीनां पदं विपदामपदं ते प्रपदं सद्भिः कठिनकमठीखर्परतुलां कथं नीतम्? दयमानेन मनसा पुरभिदा उपयमनकाले बाहुभ्यां यदादाय कथञ्चिद् दृषदि न्यस्तम्?

श्लोकार्थ— (हे देवि!) तेरा पद तो कीर्त्तियों का स्थान है और आपदाओं का उसमें कोई स्थान नहीं है। सज्जनों ने उन चरणों की समता न जाने कछुए की कठोर खोपड़ी से कैसे कर दी है? वह पद तो इतना कोमल है कि विवाह-काल में शिवजी ने उसे अत्यन्त संकुचित भाव से अपने दोनों हाथों से उठाकर पत्थर पर रख दिया था॥८८॥

शब्द-टिप्पणी— विवाहावसर में वर, वधू के एक पाँव को अपने हाथों

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

से उठाकर पत्थर पर रख यह आशय प्रकट करता है कि हे देवि ! तू धर्मरक्षणार्थ अपने चित्त को पत्थर के समान कठोर बनाये रखना।

यहाँ पर अन्वय अलंकार है।

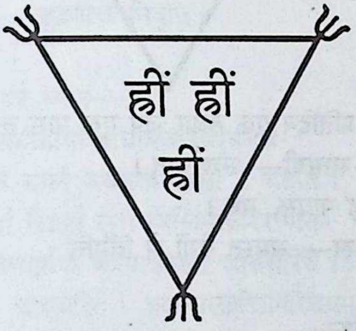

मन्त्रजप— नित्यप्रति एक सहस्र जप पन्द्रह दिनों तक करें।

यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु।

नैवेद्य— गुड़, पायस, केला, नारीयल।

लाभकारीफल— पशुओं को वश में लाना।

चरणों का ध्यान—

नखैर्नाकस्त्रीणां करकमलसङ्कोचशशिभि-
स्तरूणां दिव्यानां हसत इव ते चण्डि चरणौ।
फलानि स्वस्थेभ्यः किसलयकराग्रेण ददतां
दरिद्रेभ्यो भद्रां श्रियमनिशमह्नाय ददतौ ।।८९।।

पदान्वय— (हे चण्डि !) किसलयकराग्रेण स्वस्थेभ्यः फलानि ददतां दिव्यानां तरूणां दरिद्रेभ्यो भद्रां श्रियम् अनिशमह्नाय ददतौ ते चरणौ नाकस्त्रीणां करकमलसङ्कोचशशिभिः नखैः हसत इव।

श्लोकार्थ— (हे चण्डी !) तेरे दोनों चरण अपने नाखूनों के द्वारा कल्पवृक्षों का भी मखोल उड़ा रहे हैं, जो नख दिव्याङ्गनाओं के कर-कमलों को (हाथ जोड़ने के समय) बन्द करने के लिए चंद्रमा की दश संख्या के समान है। कल्पवृक्ष तो केवल स्वर्गवासी देवों के अपने पल्लवरूपी हाथ के अग्रभाग से ही इच्छित फल देते हैं, किन्तु तेरे चरण, निर्धनों को निरन्तर और तत्क्षण ही प्रचुर धन देते रहते हैं ॥८९॥

यहाँ व्यतिरेक अलंकार का वर्णन किया गया है।

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

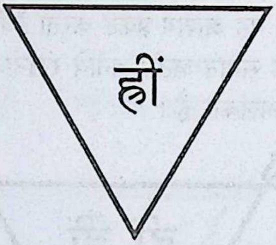

मन्त्रजप— प्रतिदिन एक हजार जप एक मास तक करें।
यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु।
नैवेद्य— गुड़ पायस, मधु।
लाभकारीफल— समस्त रोगों से विमुक्ति।

चरणों का ध्यान—

ददाने दीनेभ्यः श्रियमनिशमाशाऽनुसदृशी-
ममन्दं सौन्दर्यप्रकरमकरन्दं विकिरति।
तवास्मिन्मन्दारस्तबकसुभगे यातु चरणे
निमज्जन्मज्जीवः करणचरणः षट्चरणताम् ॥९०॥

पदान्वय— (हे भगवति !) दीनेभ्यः आशानुसदृशीं श्रियम् अनिशं ददाने अमन्दं सौन्दर्यप्रकरमकरन्दं विकिरति मन्दारस्तबकसुभगे अस्मिन् तव चरणे करणचरणः मज्जीवः निमज्जन् षट्चरणतां यातु ॥

श्लोकार्थ— (हे भगवति !) तेरे इन चरणों में जो मंदारपुष्प के गुच्छों जैसा सुन्दर है, जो असहायजनों को उनकी आशा के अनुरूप सतत लक्ष्मी देता रहता है, सौन्दर्य-राशि के पराग को बिखेरता रहता है, उसमें यह मेरा पंच ज्ञानेन्द्रिय और एक अन्तःकरण से युक्त जीव का मन षट्पद् (भ्रमर) बनकर सदैव निमग्न रहे ॥९०॥

अलंकारों के अंतर्गत यहाँ पर अतिशयोक्ति, उपमा तथा परिणामालंकार हैं। अंगांगिभाव होने से संकर है।

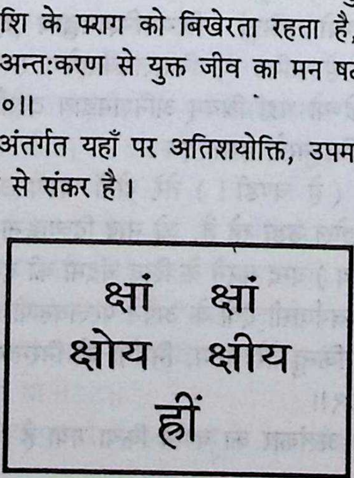

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मन्त्रजप— एक हजार जप पन्द्रह दिनों तक निरन्तर करें।
यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु।
नैवेद्य— दूध पायस, मधु।
लाभकारीफल— छुद्रबाधा निवृत्ति।

चरणों की गति का ध्यान—

पदन्यासक्रीडापरिचयमिवारब्धुमनस-
श्चरन्तस्ते खेलं भवनकलहंसा न जहति।
अतस्तेषां शिक्षां सुभगमणिमञ्जीररणित-
च्छलादाचक्षाणं चरणकमलं चारुचरिते ।।९१।।

पदान्वय— हे चारुचरिते! पदन्यासक्रीडापरिचयम् इव आरब्धुमनसः भवनकलहंसाः चरन्तः ते खेलं न जहति, अतः चरणकमलं सुभगमणिमञ्जीर-रणितच्छलात् तेषां शिक्षाम् आचक्षाणम् (इव)॥

श्लोकार्थ— हे चारुचरिते! ऐसा जान पड़ता है कि तेरे आवासस्थल के राजहंस तेरी गमनकारी गति का परिचय पाने के लिए तेरे खेल का परित्याग नहीं करते अर्थात् वे तेरे कदम-से-कदम मिलाकर तेरा अनुगमन करते हैं। तेरे चलने के समय चरण-कमलों में मणिमंडित नूपुरों की रुन-झुन झंकार के शब्द मानों उन्हें चलने की शिक्षा दे रहे हैं॥९१॥

शब्द-टिप्पणी— यहाँ भाव यह है कि परमहंस महापुरुषों की उन्मत्त गतिशीलता में शक्ति की क्रीडायुक्त मदभरी चाल का आभास है। भगवती के भवन के राजहंस जीवन्मुक्त परमहंस ही हैं।

राजहंस को कलहंस भी कहते हैं। कहा गया है—

"राजहंसास्तु ते चञ्चुचरणैर्लोहितैः सिताः।" इत्यमरः

जहति— "ओहाक् त्यागे" इति धातोः लटि बहुवचने रूपम्— जहाति, जीतः जहति।

चारुचरितम्— इसका अर्थ सुन्दर सौभाग्य है—

"चरितं तु चरित्रं स्यात्।"

— इति विश्वः

यहाँ पर उत्प्रेक्षा और अतिशयोक्ति अलंकार का वर्णन किया जाता है। अंगांगिभाव होने से संकर है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

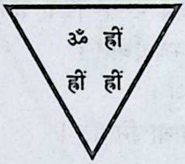

मन्त्रजप— प्रतिदिन एक सहस्त्र जप पचीस दिनों तक करें।

यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु।

नैवेद्य— दूध, पायस।

लाभकारीफल— जमीन-जायदाद एवं धनोपलब्धि।

मञ्च (पलङ्ग) का ध्यान—

गतास्ते मञ्चत्वं द्रुहिणहरिरुद्रेश्वरभृतः
शिवः स्वच्छच्छायाघटितकपटप्रच्छदपटः।
त्वदीयानां भासां प्रतिफलनरागारुणतया
शरीरी शृङ्गारी रस इव दृशां दोग्धि कुतुकम्॥९२॥

पदान्वय— (हे भगवति !) ते मञ्चत्वं द्रुहिणहरिरुद्रेश्वरभृतः गताः, शिवः स्वच्छच्छायाघटितकपटप्रच्छदपटस्सन् त्वदीयानां भासां प्रतिफलनरागारुणतया शरीरी शृङ्गारी रस इव दृशां कुतुकं दोग्धि॥

श्लोकार्थ— ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र और ईश्वर द्वारा रक्षण किये जाने वाले (मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपूर और अनाहत चक्र) तेरी पलंग के चार पाये हैं अर्थात् ये ही तेरी पलंग का निर्माण करते हैं। उस पलंग पर बिछी हुई निर्मल छायानिर्मित कपटरूपी माया की चादर शिव है जो तेरी दीप्ति के झिलमिलाने के फलस्वरूप अरुणाभ दिखाई देने से ऐसी जान पड़ती है मानो शृंगार रस शरीर धारी होकर दृष्टि में कौतूहल उत्पन्न कर रहा है॥९२॥

यहाँ पर उत्प्रेक्षा अलंकार का कथन है।

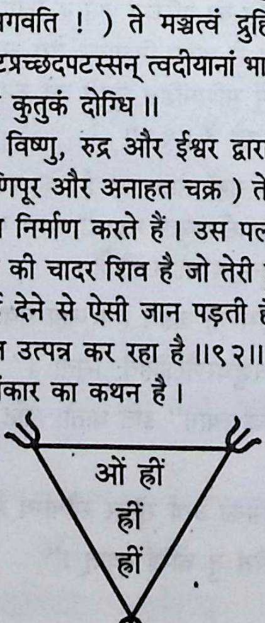

मन्त्रजप— प्रतिदिन एक हजार जप पच्चीस दिनों तक करें।

यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

नैवेद्य— चित्रान्न, दूध, पायस, ताम्बूल।

लाभकारीफल— अन्य राज्यों पर अधिकार जमाने की शक्ति।

सम्पूर्ण शरीर का ध्यान—

अराला केशेषु प्रकृतिः सरला मन्दहसिते
शिरीषाभा गात्रे दृषदिव कठोरा कुचतटे।
भृशं तन्वी मध्ये पृथुरपि परारोहविषये
जगत् त्रातुं शम्भोर्जयति करुणा काचिदरुणा ।।९३।।

पदान्वय— शम्भोः काचित् केशेषु अराला मन्दहसिते प्रकृतिसरला गात्रे शिरीषाभा कुचतटे दृषदिव कठोरा मध्ये भृशं तन्वी वरारोहविषये पृथुः अरुणा करुणा जगत् त्रांतु जयति।

श्लोकार्थ— शम्भु की करुणा की, जगत् के परिणाम हेतु मानो जो काचित् अरुणा है, सर्वत्र जय हो रही है। अर्थात् भगवती के केश स्वाभाविक रूप से सरल और घुँघराले अर्थात् कुटिल हैं, शरीर अथवा चित्त शिरीष-पुष्प की आभा से परिपूर्ण है, दोनों स्तन प्रस्तर-सदृश कठोर और कड़े हैं, कटि-प्रदेश का मध्यवर्ती भाग अत्यन्त क्षीण है तथा नितम्ब उभरे हुए और भारी हैं ।।९३।।

शब्द-टिप्पणी— यहाँ आशय यह है कि भगवती का शरीर मानो शिव की दया का अवतार स्वरूप है जो जगत् की रक्षा करने हेतु अवतरित हुआ है। शिव-स्वरूप गुरु का अनुग्रह शम्भु का ही अनुग्रह होता है जिसके कारण शिष्य में शक्तिवर्धन होता है। अतः गुरु-कृपा, शक्ति की अभिव्यक्ति तथा शम्भु की दया— ये तीनों ही पर्यायवाची शब्द हैं।

अराला— "अरालं वृजिनं जिह्मामूर्तिमत् कुञ्चितं नतम्" इत्यमरः

आरोही— "आरोहो जघनं श्रोणी नितम्बं स्त्रीकटितटः

—इति विश्वः

यहाँ अतिशयोक्ति अलंकार का वर्णन है।

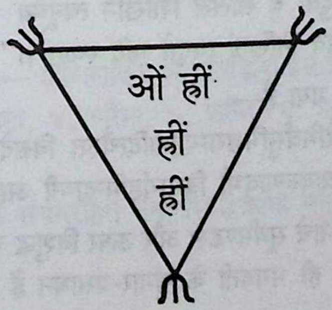

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मन्त्रजप— प्रतिदिन एक हजार जप पचीस दिनों तक करें।
यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु।
नैवेद्य— मधु।
लाभकारीफल— सम्पूर्ण अभिलाषाओं की पूर्ति।

शृङ्गार के डिब्बे का ध्यान—

कलङ्कः कस्तूरी रजनिकरबिम्बं जलमयं
कलाभिः कर्पूरैर्मरकतकरण्डं निबिडितम्।
अतस्त्वद्भोगेन प्रतिदिनमिदं रिक्तकुहरं
विधिर्भूयो भूयो निबिडयति नूनं तव कृते।।९४।।

पदान्वय— हे भगवति! कलङ्कः कस्तूरी रजनिकरबिम्बं जलमयं कर्पूरैः निबिडितं मरकतकरण्डम्। अतः इदं प्रतिदिनं त्वद्भोगेन रिक्तकुहरं विधिः भूयोभूयः तव कृते निबिडयति नूनम्।

श्लोकार्थ— चन्द्रबिम्ब मरकत मणिनिर्मित एक डिब्बे के समान है, उसमें लगा हुआ धब्बा कस्तूरी का काला रंग है और उसकी चमकीली कलाएँ कर्पूर के समान हैं। दोनों वस्तुओं को जल में पेषित कर तेरे आभोग के लिए डिब्बों में भरकर रखा गया है, जिसका प्रतिरात्रि व्यय होता रहता है और दूसरे दिन ब्रह्मा उसे पुनः बार-बार भरता रहता है॥९४॥

शब्द-टिप्पणी— पुराणानुसार सोमोत्पत्ति का कथन इस प्रकार किया गया है—

"प्रथमां पिबते बह्निर्द्वितीयां पिबते रविः"।

और भी कहा गया है—

"त्वं चन्द्रिका शशिनि तिग्मरुचौ रुचिस्त्वं
त्वं चेतनासि पुरुषे पवनेऽखिलत्वम्।
त्वं स्वादुता च सलिले शिखिनि त्वमूष्मा
निःसारमेव निखिलं त्वदृते यदि स्यात्॥"

पुनः आगे कहा गया है—

अहं रुद्रेभिर्वसुभिश्चराम्यहमादित्यैरुत विश्वदेवैः।
अहं मित्रावरुणावुभौ बिभर्म्यहमिन्द्राग्नी अहमश्विनावुभौ॥

चरणों के निकट नीचे सूर्यमण्डल और ऊपर विशुद्ध चक्र में षोडशकलायुक्त चन्द्रमण्डल— ये दोनों ही भगवती के शृंगार-प्रसाधन हैं।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

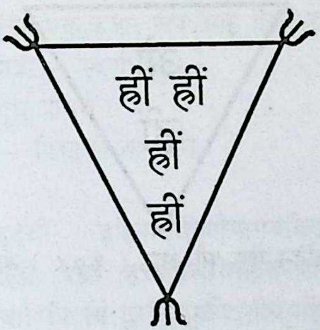

मन्त्रजप— नित्यप्रति एक हजार जप पच्चीस दिनों तक करें।
यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु।
नैवेद्य— मूँग, नारीयल, केला।
लाभकारीफल— इष्टाप्ति।

पुरारातेरन्तःपुरमसि ततस्त्वच्चरणयोः
सपर्यामर्यादा तरलकरणानामसुलभा।
तथा ह्येते नीताः शतमखमुखाः सिद्धिमतुलां
तव द्वारोपान्तस्थितिभिरणिमाऽऽद्याभिरमराः ॥९५॥

पदान्वय— हे भगवति ! पुरारातेरन्तपुरमसि। ततस्त्वच्चरणयोस्सपर्यामर्यादा तरलकरणानामसुलभा। तथा हि—एते शतमखमुखाः अमराः तव द्वारोपान्तस्थितिभिः अणिमाद्याभिस्सह अतुलां सिद्धिं नीताः।

श्लोकार्थ— तू त्रिपुरारि के अन्तःपुर की राजमहिषी है। अतः तेरे चरणों की सपर्या पूजा की मर्यादा चपल इंद्रियों वाले मानवों के लिए सुगम नहीं है तथा इन्द्रदेव के आधिपत्य में रहने वाले ये सभी देवगण तेरे द्वार के समीप खड़ी रहने वाली अणिमादि की अतुलनीय सिद्धियों तक ही पहुँचने में सफल हो पाते हैं ॥९५॥

शब्द-टिप्पणी— अणिमादिक अष्ट सिद्धियाँ इस प्रकार हैं— १. अणिमा, २. महिमा, ३. लाघिमा, ४. गरिमा, ५. प्राप्ति, ६. प्राकाम्य, ९. ईशित्व एवं ८. वशित्व।

उक्त श्लोक में संयमरहित तथा सिद्धिकामी मनुष्यों को निन्दनीय माना गया है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

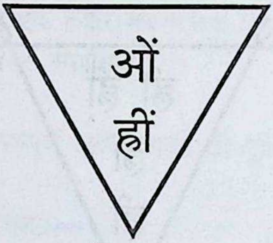

मन्त्रजप— प्रतिदिन एक सौ आठ (१०८) बार जप तीन दिनों तक करें।

यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु।

नैवेद्य— तिल, गुड़।

लाभकारीफल— सभी प्रकार के घावों को भरने की शक्ति।

कलत्रं वैधात्रं कतिकति भजन्ते न कवयः
श्रियो देव्याः को वा न भवति पतिः कैरपि धनैः।
महादेवं हित्वा तव सति सतीनामचरमे
कुचाभ्यामासङ्गः कुरवकतरोरप्यसुलभः ।।९६।।

पदान्वय— हे सति ! वैधात्रं कलत्रं कतिकति कवयः न भजन्ते। श्रियो देव्याः कैरपि धनैः को वा पतिः न भवति। हे सतीनामचरमे ! महादेवं हित्वा तव कुचाभ्याम् आसङ्गः कुरबकतरोरप्यसुलभः ॥

श्लोकार्थ— हे सती ! क्या ब्रह्मा की पत्नी सरस्वती को कविजन नही भजते ? क्या कोई अल्प धन पाकर लक्ष्मीपति नहीं कहलाता ? परन्तु हे सतियों में श्रेष्ठ ! महादेव के अतिरिक्त तेरे स्तनों का संग तो कुरबक वृक्ष के लिए भी दुर्लभ्य है।

शब्द-टिप्पणी— पार्वती के पति तो केवल महादेव ही हैं। इससे उनके पातिव्रत्य की महिमा झलकती है।

धन— ''हिरण्यं द्रविणं द्युम्नं रुक्मं रिक्थं धनं वसु''

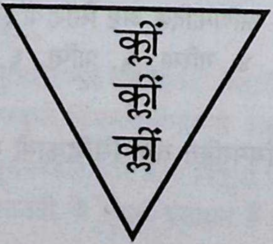

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मन्त्रजप— प्रतिदिन एक हजार जप आठ दिनों तक करें।
यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु।
नैवेद्य— मधु, दूध पायस।
लाभकारीफल— विद्याओं का ज्ञान।

गिरामाहुर्देवीं द्रुहिणगृहिणीमागमविदो
हरेः पत्नीं पद्मां हरसहचरीमद्रितनयाम्।
तुरीया काऽपि त्वं दुरधिगमनिःसीममहिमा
महामाया विश्वं भ्रमयसि परब्रह्ममहिषि ॥९७॥

पदान्वय— हे परब्रह्ममहिषि ! आगमविदः त्वामेव द्रुहिणगृहिणीं गिरां देवीमाहुः। त्वामेव हरेः पत्नीं पद्मामाहुः। त्वामेव हरसहचरीम् अद्रितनयामाहुः। त्वं तुरीया कापि दुरधिगमनिस्सीममहिमा महामाया सती विश्वं भ्रमयसि॥

श्लोकार्थ— हे परब्रह्म की साम्राज्ञि ! आगम ग्रंथों के वेत्ता ब्रह्मपत्नी को सरस्वती (वाग्देवी) कहते हैं, विष्णु-पत्नी को पद्मा (कमला) के नाम से संबोधित करते हैं तथा शिव की सहचरी को पार्वती के नाम से जानते हैं। किन्तु तू महामाया कोई चौथी ही है। तेरी महिमा अपरिमित है, तूने समस्त जगत् को भ्रमित कर रखा है। अतः तुझे जानना अत्यन्त दुरूह है ॥९७॥

शब्द-टिप्पणी— कहा गया है—

"नान्यं निषेवे न तु चान्यमीडे न चापरं दैवतमर्चयामि।
नाहं शिवां तां परमार्थरूपां श्रीसुन्दरीं चेतसि विस्मरामि॥" —मनोभावस्तोत्र

देवी सरस्वती का बीजमन्त्र 'ऐं', लक्ष्मी का 'श्रीं', पार्वती का 'क्लीं' तथा महामाया का 'ह्रीं' है। वाग्भव कूट का तृतीय अक्षर शक्ति का वाचक है एवं वर्णमाला का चतुर्थ अक्षर होने के कारण तुरीय पद समाधि का द्योतक है और वह सभी बीजाक्षरों के अन्त में लगाया जाता है। अनुस्वार भी शक्ति के साथ सदैव ही रहता है इसलिए वह शिवात्मक है। इसी को कामकला भी कहा जाता है।

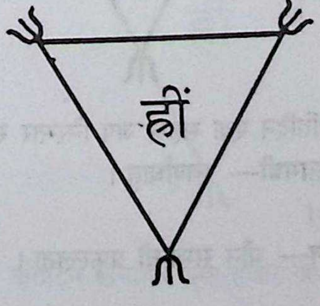

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मन्त्रजप— नित्य प्रति एक सौ जप आठ दिनों तक करें।
यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु।
नैवेद्य— चावल और मधु।
लाभकारीफल— शरीर का बलिष्ठ होना।

प्रार्थना—

कदा काले मातः कथय कलितालक्तकरसं
पिबेयं विद्यार्थी तव चरणनिर्णेजनजलम्।
प्रकृत्या मूकानामपि च कविताकारणतया
यदाधत्ते वाणीमुखकमलताम्बूलरसताम् ।।९८।।

पदान्वय— हे मातः ! तव कलितालक्तकरसं चरणनिर्णेजनजलं विद्यार्थी अहं कदा काले पिबेयं कथय। तच्च प्रकृत्या मूकानां (वक्तुं श्रोतुं अशिक्षितानाम) अपि च कविताकारणतया वाणीमुखकमलताम्बूलरसतां कदा धत्ते।

श्लोकार्थ— हे माते ! कहो, वह सुअवसर कब मिलेगा जब मैं एक शिक्षणार्थी, तेरे चरणों का धुला हुआ वह जल जो लाक्षारस से लेपित होने के कारण लाल हो रहा है, पान करूँगा जिसमें सरस्वती के मुखारविन्द से निर्गत पान की पीक के समान जन्मजात मूक व्यक्ति को भी कवित्वशक्ति प्रदान करने की सामर्थ्य है ।।९८।।

यहाँ उत्प्रेक्षा और अतिशयोक्ति अलंकार का कथन है।

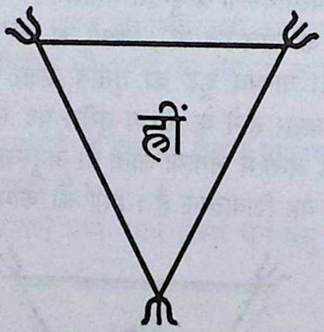

मन्त्रजप— प्रतिदिन एक सहस्र जप निरन्तर सोलह दिनों तक करें।
यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु।
नैवेद्य— मधु।
लाभकारीफल— यौन सम्बन्धी प्रफुल्लता।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सरस्वत्या लक्ष्म्या विधिहरिसपत्नो विहरते
रतेः पातिव्रत्यं शिथिलयति रम्येण वपुषा ।
चिरञ्जीवन्नेव क्षपितपशुपाशव्यतिकरः
परानन्दाभिख्यं रसयति रसं त्वद्भजनवान् ।।९९।।

पदान्वय— (हे भगवति !) त्वद्भजनवान् सरस्वत्या लक्ष्म्या विधिहरिसपत्नः (सन्) विहरते रम्येण वपुषा रतेः पातिव्रत्यं शिथिलयति । क्षपितपशुपाशव्यतिकरः चिरञ्जीवन्नेव परा न्दाभिख्यं रसं रसयति ॥

श्लोकार्थ— तेरा भजनकर्ताप्राणी, सरस्वती और लक्ष्मी दोनों से समन्वित होकर ब्रह्मा और विष्णु के सपत्नीडाह (सौतियाडाह) का भाजन बनकर, विहरणशील रहा करता है । वह मनोहर शरीर कर देता है । अर्थात् वह विद्वान् धनवान और सुन्दर रूपवान हो जाता है तथा पशुपाश के कष्टों का विनाश करके दीर्घकालपर्यन्त परमानन्द के रस का रसास्वादन करते हुए जीवित रहता है ।।९९।।

पशुपाश— बन्धन में आबद्ध जीव को पशु कहते हैं । पाश आठ प्रकार के कहे गये हैं जो इस प्रकार हैं— घृणा, लज्जा, भय, निन्दा, शोक, जाति, कुल एवं शील । पाश का एक अर्थ अविद्या भी होता है । कहा गया है—

"अदितिः पाशं प्र मुमोक्त्वेतन्नमः
पशुभ्यः पशुपतये करोमि ॥"

जीवन्मुक्त— अविद्या से रहित जीवन्मुक्त होकर भी वह कुलालचक्रभ्रमण न्याय (कुम्हार का चक्रावर्तन) के द्वारा शरीर धारण करते हैं । जैसा कि कहा गया है—

"सम्यग्ज्ञानाधिगमाद्धर्मादीनामकारणप्राप्तौ ।
तिष्ठति संस्कारवशाच्चक्रभ्रमवद्धृतशरीरः ॥"

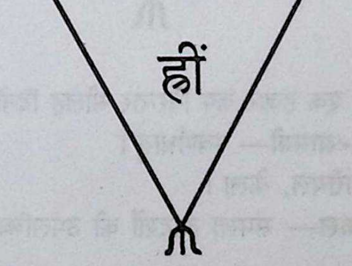

मन्त्रजप— प्रतिदिन लगातार एक हजार जप सोलह दिनों तक करें ।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु।
नैवेद्य— त्रिमधुर, ऊर्द का पूआ, मधु।
लाभकारीफल— शूर-वीरता की प्राप्ति।

प्रदीपज्वालाभिर्दिवसकरनीराजनविधिः
सुधासूतेश्चन्द्रोपलजललवैरर्घ्यरचना।
स्वकीयैरम्भोभिः सलिलनिधिसौहित्यकरणं
त्वदीयाभिर्वाग्भिस्तव जननि वाचां स्तुतिरियम् ।।१००।।

पदान्वय— हे वाचां जननि ! यथा प्रदीपज्वालाभिः दिवसकरनीराजनविधिः, यथा चन्द्रोपलजललवैः सुधासूतेर्घ्यरचना (भवति), (यथा) स्वकीयैरम्भोभिस्स-लिलनिधिसौहित्यकरणं भवति, (तथा) त्वदीयाभिः वाग्भिरेव तवेयं स्तुतिः ॥

श्लोकार्थ— हे जननि ! तेरे द्वारा प्रदत्त वाक्शक्ति से की गयी इस स्तुति के शब्द ऐसे हैं जैसे दीपक की लौ से सूर्य की आरती करना अथवा चन्द्रकान्तमणि से स्रवित होने वाले जलकणों से ही चन्द्रमा को अर्घ्यदान करना अथवा समुद्र का सत्कार उसी के जल द्वारा करने के समान है ॥१००॥

यहाँ प्रतिवस्तूपमा और दृष्टान्त अलंकार का वर्णन है।

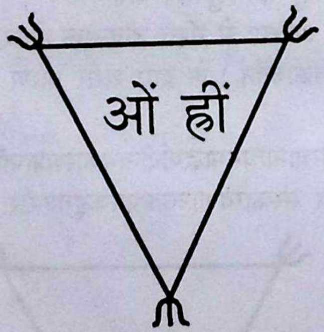

मन्त्रजप— एक हजार जप निरन्तर सोलह दिनों तक करें।
यन्त्रनिर्माण-सामग्री— स्वर्णधातु।
नैवेद्य— नारीयल, केला।
लाभकारीफल— समस्त आदर्शों की उपलब्धि।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

काकचण्डीस्वरकल्पतन्त्रम्

पूर्वकाल से ही भारतवर्ष उत्कृष्ट वनौषधियों का उद्गम-स्थल रहा है। वर्तमान काल में भी उत्तमोत्तम औषधियाँ यहाँ के अतिरिक्त अन्य किसी भी क्षेत्र में नहीं पायी जाती हैं। परन्तु यह अत्यन्त खेद का विषय है कि हम विदेशी औषधियों के प्रभाव में पड़कर अपने देश की गुणकारी औषधियों का विस्मरण करते जा रहे हैं।

हमारे देश में इस समय भी अमृतोपम औषधियों का विपुल भण्डार भरा पड़ा है। आज भी गिरिराज हिमालय के उत्तुंग शिखरों पर तत्क्षण गुणकारी असंख्य जड़ी-बूटियाँ उपलब्ध होती हैं। त्रेता युग में इसी हिमालय श्रृंग से ही हनुमान जी ने संजीवनी बूटी लाकर श्रीरामानुज लक्ष्मण को पुनर्जीवन प्रदान कराया था। हमारे देश से ये अनुपम जड़ी-बूटियाँ विदेशों को निर्यात की जाती हैं तथा उसके बदले में वैज्ञानिक रीति से निर्मित की गयी औषधियाँ यहाँ भेजी जाती हैं।

आज की अपेक्षा पूर्वकाल में भारतवर्ष का वनस्पति-विज्ञान अत्यन्त उन्नत था। समस्त प्रकार की औषधियों में जड़ी-बूटियों का अपना एक विशिष्ट स्थान हुआ करता था। ताजी वनस्पतियों में जो सद्य: फलदायक गुण विद्यमान होते हैं वे अन्य किसी औषधियों में नहीं पाये जाते। आयुर्वेद के आचार्य महर्षि चरक एवं सुश्रुत ने भी इनकी सराहना की है।

ज्योतिष-ग्रन्थों के साथ आयुर्वेद का भी अटूट सम्बन्ध देखने में आता है, क्योंकि वनस्पतियों के प्रयोग, उनके ग्रहण-काल आदि के सम्बन्ध में तिथि, वार, नक्षत्र आदि का उल्लेख पाया जाता है। अत: इन सब नियमों का अनुपालन भी प्रयोक्ता के लिये आवश्यक होता है। कथित विधियों को अपनाने पर ही पूर्ण रूप से फल की प्राप्ति की जा सकती है।

प्रस्तुत पुस्तक में विविध रोगों के शमनार्थ अनेक उपयुक्त वनस्पतियों का वर्णन किया गया है। इसके साथ ही पाठकों की सुगमता हेतु कोष्ठक में रोगों के लक्षण भी दिये गये हैं जिसके फलस्वरूप पुस्तक अत्यन्त उपयोगी हो गयी है। वनस्पतियों की सही पहचान हेतु जनकल्याण की भावना से भिषग्वर्ग के आगे आने पर ही उसका पूरा-पूरा लाभ उठाया जा सकता है।

मूल्य : रु. ६५-००

पं. हरिहरप्रसाद त्रिपाठी

Also can be had from

Chowkhamba Krishnadas Academy

K. 37/118, Gopal Mandir Lane, Near Golghar (Maidagin)
Post Box 1118, Varanasi-221 001 (India)
Phone : (0542) 2333458 (P.P.) & (0542) 2335020, 2334032
Fax : (0542) 2333458, e-mail : cssoffice@satyam.net.in
Web site : www.chowkhambaseries.com

ISBN : 81-7080-167-2

Price : Rs. 100.00

Designed by Shreyashi Graphics

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal